आरोह

कक्षा 11 के लिए हिंदी (आधार) की पाठ्यपुस्तक

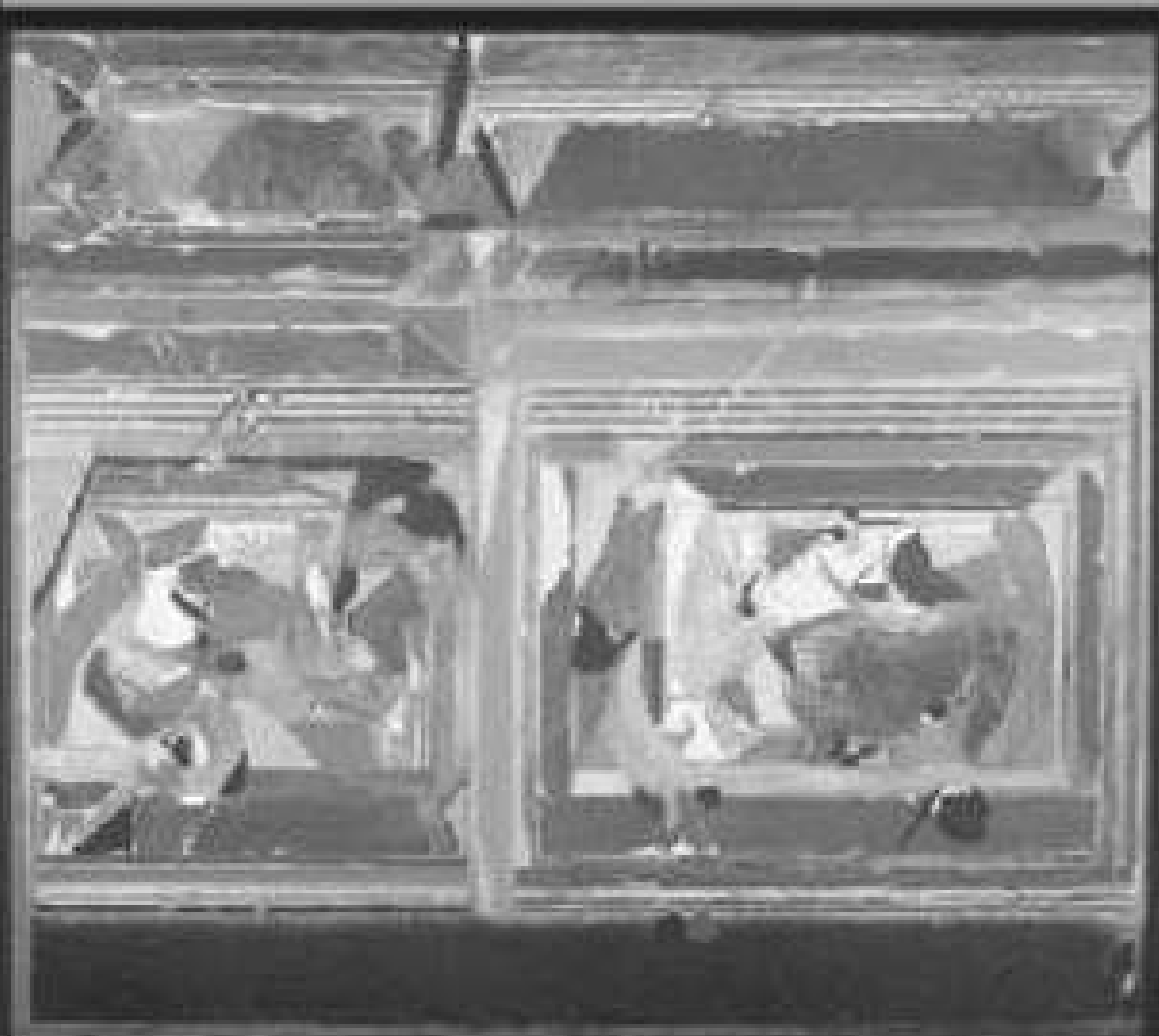

आरोह

भाग 1

कक्षा 11 के लिए हिंदी (आधार) की पाठ्यपुस्तक

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 81-7450-487-7

प्रथम संस्करण

जनवरी 2006 माघ 1927

पुनर्मुद्रण

फरवरी 2007 माघ 1928
नवंबर 2007 कार्तिक 1929
जनवरी 2009 माघ 1930

PD 75T NSY

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006

रु. 40.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा शगुन ऑफसेट प्रेस, ए-3, सेक्टर V, नोएडा 201 301 द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुन: प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगाव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग	:	*पेय्येटि राजाकुमार*
मुख्य उत्पादन अधिकारी	:	*शिव कुमार*
मुख्य संपादक	:	*श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार अधिकारी	:	*गौतम गांगुली*
संपादक	:	*नरेश यादव*
उत्पादन सहायक	:	*मुकेश गौड़*
आवरण	:	*सैयद हैदर रज़ा*
चित्र	:	*आशुतोष शरण*

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नयी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सीखने के दौरान अपने अनुभवों पर विचार करने का कितना अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों एवं स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेंडर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी

कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस, और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् भाषा सलाहकार समिति के अध्यक्ष प्रो. नामवर सिंह और इस पुस्तक के मुख्य सलाहकार प्रो. पुरुषोत्तम अग्रवाल की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान किया; इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनीटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी टिप्पणियों एवं सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, भाषा सलाहकार समिति

नामवर सिंह, *पूर्व अध्यक्ष,* भारतीय भाषा केंद्र, जे.एन.यू., नयी दिल्ली

मुख्य सलाहकार

पुरुषोत्तम अग्रवाल, *प्रोफ़ेसर,* भारतीय भाषा केंद्र, जे.एन.यू. नयी दिल्ली

मुख्य समन्वयक

रामजन्म शर्मा, *प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष*, भाषा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

सदस्य

अनूप कुमार, *रीडर,* क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भुवनेश्वर
इन्द्रा सक्सेना, *अध्यापिका*, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर
उषा शर्मा, *वरिष्ठ प्रवक्ता,* डाइट, नयी दिल्ली
दिलीप सिंह, *प्रोफेसर एवं कुल सचिव,* दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, चेन्नई
नीलकंठ कुमार, *अध्यापक,* नयी दिल्ली
रवीन्द्र त्रिपाठी, *पत्रकार,* नयी दिल्ली
रामबक्ष, *प्रोफ़ेसर,* इग्नू, नयी दिल्ली
संजीव कुमार, *वरिष्ठ प्रवक्ता,* देशबन्धु कालेज, नयी दिल्ली
समीर वरण नन्दी, *अध्यापक,* बी.एच.ई.एल. स्कूल, हरिद्वार

सदस्य-समन्वयक

संध्या सिंह, *रीडर,* भाषा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

आभार

इस पुस्तक के निर्माण में अकादमिक सहयोग के लिए हम विशेष आमंत्रित नीरजा रानी, पी.जी.टी., चंद्र आर्य विद्या मंदिर, नयी दिल्ली का आभार व्यक्त करते हैं।

इस पुस्तक में सम्मिलित करने के लिए जिन रचनाकारों / परिजनों / संस्थाओं / प्रकाशनों / पत्रिकाओं से अनुमति मिली है, उनमें कृष्णा सोबती, शेखर जोशी, मन्नू भंडारी, कृष्ण नाथ, त्रिलोचन, निर्मला पुतुल; सत्यजित राय और कृशनचंदर के लिए राजकमल प्रकाशन; रज़ा के लिए अशोक वाजपेयी; पंत के लिए सुमिता पंत, रामनरेश त्रिपाठी के लिए जयंत कुमार त्रिपाठी; दुष्यंत कुमार के लिए राजेश्वरी त्यागी और पाश के लिए चमनलाल के कृतज्ञ हैं।

पुस्तक के निर्माण में तकनीकी सहयोग के लिए कंप्यूटर स्टेशन (भाषा विभाग) के *प्रभारी* परशराम कौशिक, *कॉपी एडीटर,* राम जी तिवारी, प्रमोद कुमार तिवारी और यतेन्द्र कुमार यादव, *प्रूफ रीडर,* कमलेश कुमारी और इन्दुमति सरकार, *डी.टी.पी. ऑपरेटर,* जय प्रकाश राय और सचिन कुमार के हम आभारी हैं; लेखकों के चित्रों के लिए राजकमल प्रकाशन और संजय जोशी, साज सज्जा संबधी चित्रों के लिए मड़ई और बाल भवन पत्रिका तथा पाठ्य सामग्री संबंधी सहयोग के लिए कथाचित्र पत्रिका के आभारी हैं।

यह पुस्तक

- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-(2005) इस बात पर बल देती है कि शिक्षा बोझरहित और रुचिकर हो ताकि विद्यार्थी को खुद-ब-खुद पढ़ने का चस्का लग जाए। वर्तमान शैक्षिक सरोकारों के संदर्भ में यह एक चुनौती है। भाषा बच्चे की शिक्षा के लिए ज़मीन का काम करती है और साहित्य इस ज़मीन की सिंचाई का प्रमुख साधन है, अतः राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की यह चुनौती भाषा-साहित्य की पुस्तकों के लिए कुछ अधिक है। इस पुस्तक के निर्माण में चयन और प्रस्तुति दोनों ही स्तरों पर यह कोशिश रही है कि हिंदी भाषा-साहित्य की शिक्षा अमूर्त न रह कर विद्यार्थी के जीवन, रुचि और अनुभव संसार का हिस्सा बन सके।
- यह पुस्तक ग्यारहवीं कक्षा में आधार पाठ्यक्रम के रूप में हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए बनाई गई है। युवावस्था की दहलीज़ पर कदम रखते ये किशोर विद्यार्थी जीवन के हर क्षेत्र में आगे बढ़ने की संभावनाएँ तलाश रहे होते हैं। हमारा प्रयास है कि भाषा साहित्य की यह पुस्तक संभावनाएँ तलाशते विद्यार्थी के लिए सोच-विचार, विमर्श और अभिव्यक्ति का पुख्ता आधार तैयार करने में मदद करे।
- आधुनिक हिंदी अपनी विकास यात्रा में विभिन्न आयाम और आकार लेती रही है। यह भी कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में जिस तरह से भावबोध का विकास हुआ है, उसी तरह हिंदी साहित्य का भी। इसके प्रतिबिंबन के लिए कालक्रम के विकास के अनुसार हिंदी साहित्य के विविध रूपों को प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है ताकि विद्यार्थी इस पुस्तक के द्वारा अबतक के हिंदी के विकासक्रम से अपने को जोड़ सकें।
- यह प्रतिबिंबन केवल हिंदी तक सीमित न रहकर हिंदीतर भाषाओं के अनुवाद को भी समेटे हुए है। यह कोशिश एक ओर पूरे देश के सामाजिक पटल से जुड़ने का प्रयास है तो दूसरी ओर अनुवादों में विस्तार पाती हिंदी के सामर्थ्य की पहचान भी है।

- जब सामाजिक भावबोध बदलता है तो साहित्य नया आकार लेता है और जब नया साहित्य आता है तो भाषा भी नया रूप लेती है। कबीर ने कहा भी है 'भाखा बहता नीर', यानी भाषा स्थिर न होकर गतिशील है। इस पुस्तक में प्रारंभिक हिंदी से लेकर आज के समय में लिखी जाने वाली हिंदी के रूप भी मिल जाएँगे, इसके माध्यम से हमारा प्रयास यह भी है कि विद्यार्थी के भाषा संसार का विस्तार हो और वे जान सकें कि भाषा युग के अनुसार नया रूप और आकार ग्रहण करती है।
- आज से कुछ समय पहले तक साहित्य कुछ खास वर्गों तक सीमित था, लेखक और पाठक दोनों ही दृष्टियों से। वर्तमान समय में साहित्य के लेखक और पाठक की दुनिया का विस्तार हुआ है। समाज के वे हिस्से जो अब तक अनदेखे थे, उन्हें वाणी मिली है। अबतक वंचित रहे तबके का साहित्य के मंच पर रचनात्मक उदय हुआ है। स्त्री, दलित, आदिवासी लेखकों की ऊर्जा से साहित्य की भाषा को नया तेवर और अभिव्यक्ति का नया व्याकरण मिला है। हमारी कोशिश है कि युवा होते विद्यार्थियों का इस नयी अभिव्यक्ति से अपनापे का रिश्ता बन सके।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है– साहित्य इतिहास नहीं है साहित्य विज्ञान नहीं है, साहित्य गणित नहीं है, साहित्य दर्शन नहीं है लेकिन साहित्य में यह सब एक साथ मौजूद है। यों तो यह बात किसी भी भाषा के साहित्य पर लागू होती है, लेकिन अगर आज हम केवल हिंदी साहित्य को देखें तो हिंदी का पसरता संसार एक ओर कश्मीर से कन्याकुमारी को जोड़ता है तो दूसरी ओर पत्रकारिता, समाज विज्ञान, पर्यावरण, अर्थविज्ञान, कला, फ़िल्म आदि को समेटे है। हमारा प्रयास इन विभिन्न प्रयुक्तियों में विस्तार पाती हिंदी से विद्यार्थियों का संवाद कराना है।
- वर्तमान समय में जहाँ एक ओर कई विधाएँ एक दूसरे से मिलजुल गई हैं, वहीं दूसरी ओर कई नयी विधाओं का उदय भी हुआ है। रचनात्मक ऊर्जा किसी बंधन को स्वीकार नहीं करती। कई कालजयी रचनाएँ बंधन को तोड़ती हैं और नयी विधा को जन्म देती हैं। विद्यार्थी का ज्ञान केवल एक या दो विधाओं तक सीमित न रहे, बल्कि वह वर्तमान समय की समस्त विधाओं से यथासंभव

परिचित हो सके, इस दृष्टि से इस पुस्तक में कई नयी विधाओं को लिया गया है। शब्दचित्र, आत्मकथा और पटकथा ऐसी ही विधाएँ हैं।

- इस पुस्तक के दो खंड है– गद्य खंड और काव्य खंड, जिसमें गद्य और काव्य की विभिन्न छवियों को समाहित किया गया है। गद्य खंड में भारतेंदु युगीन (आधुनिक चेतना और नवजागरण की ऊर्जा संपन्न) हिंदी से लेकर वर्तमान हिंदी गद्य रचनाओं को चुना गया है। काव्य खंड में मुख्य रूप से खड़ी बोली की कविताओं को ही चुना गया है। चयन में तीन बातें ध्यान देने योग्य हैं, एक– हिंदी कविता की पृष्ठभूमि की जानकारी के लिए कबीर और मीरा के पदों का चयन। दो– आधुनिक हिंदी कविता की शैलियों और मुहावरों से परिचय के लिए रामनरेश त्रिपाठी से लेकर दुष्यंत तक की कविताओं की प्रस्तुति। तीन– अक्क महादेवी, पाश और निर्मला पुतुल की कविताओं के माध्यम से हिंदी कविता के समानांतर भारतीय भाषाओं की कविता की समझ पैदा करना। अभ्यासों में **पाठ के साथ और पाठ के आस-पास** की दुनिया और शब्दों के संदर्भगत अर्थ-छवियों के लिए **शब्द-छवि** को समाहित किया गया है, जो राष्ट्रीय पाठ्यचर्या का एक प्रमुख उद्देश्य है।
- शब्दों के साथ-साथ रंगों की एक बड़ी दुनिया अनदेखी रही है। लोकचित्र ऐसे ही रंगों की दुनिया है जहाँ आदिम संस्कृति अपनी पूरी ऊर्जा के साथ दिखाई पड़ती है। इस पुस्तक की साज-सज्जा में जगह-जगह लोकचित्र दिखाई पड़ेंगे, जिनकी आड़ी-तिरछी रेखाएँ हमें एक अलग दुनिया में ले जाती हैं। इसी के समानान्तर मुखावरण पर बहुरंगी संस्कृति को अभिव्यक्त करता सैयद हैदर रज़ा का चित्र **राजस्थान** तथा पृष्ठावरण पर ज्ञान के नए अंकुरण को संकेत करता **जर्मिनेशन** नामक चित्र दिया जा रहा है। चित्रों की इस दुनिया से गुज़रना अपनी जड़ों से जुड़ने का एहसास दे सकता है।
- विद्यार्थी, पुस्तक और अध्यापक के बीच एक संवादात्मक रिश्ता कायम हो, यह पुस्तक इस दिशा में एक प्रयास है। यह प्रयास निरंतर बेहतर होता रहे, इसके लिए सुझावों का स्वागत रहेगा।

भारत का संविधान

उद्देशिका

*हम, भारत के लोग, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:*

*सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,***

*विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की **स्वतंत्रता,***

*प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**
प्राप्त कराने के लिए,*

*तथा उन **सबमें** व्यक्ति की गरिमा और
राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए*

*दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् दो हज़ार छह विक्रमी) को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।***

विषय-सूची

गद्य खंड

	आमुख		*iii*
	यह पुस्तक		*v*
1.	प्रेमचंद	नमक का दारोगा	3
2.	कृष्णा सोबती	मियाँ नसीरुद्दीन	20
3.	सत्यजित राय	अपू के साथ ढाई साल	31
4.	बालमुकुंद गुप्त	विदाई संभाषण	44
5.	शेखर जोशी	गलता लोहा	54
6.	कृष्णनाथ	स्पीति में बारिश	68
7.	मन्नू भंडारी	रजनी	79
8.	कृशनचंदर	जामुन का पेड़	100
9.	जवाहरलाल नेहरू	भारत-माता	112
10.	सैयद हैदर रज़ा	आत्मा का ताप	118

काव्य खंड

1.	कबीर	1. हम तौ एक एक करि जांनां।	129
		2. संतों देखत जग बौराना।	
2.	मीरा	1. मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई	135
		2. पग घुंघरू बांधि मीरां नाची	

3.	रामनरेश त्रिपाठी	पथिक	140
4.	सुमित्रानंदन पंत	वे आँखें	145
5.	भवानी प्रसाद मिश्र	घर की याद	151
6.	त्रिलोचन	चंपा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती	158
7.	दुष्यंत कुमार	गज़ल	164
8.	अक्क महादेवी	1. हे भूख! मत मचल	169
		2. हे मेरे जूही के फूल जैसे ईश्वर	
9.	अवतार सिंह पाश	सबसे खतरनाक	173
10.	निर्मला पुतुल	आओ, मिलकर बचाएँ	179

गद्य खंड

उचित प्रकार की शिक्षा का अर्थ है प्रज्ञा को जागृत करना तथा समन्वित जीवन का पोषण करना और केवल ऐसी ही शिक्षा एक नवीन संस्कृति तथा शांतिमय विश्व की स्थापना कर सकेगी।

जे. कृष्णमूर्ति

- कोई भी पुस्तक कुछ शब्दों का संघात है। शब्दों के समूह ही तो पुस्तक कहलाते हैं। परंतु वे शब्द सजाकर इस प्रकार रखे गए होते हैं कि उनसे हम एक अर्थ पाते रहते हैं। (साहित्य का व्याकरण, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी)

- कलाकार होने के लिए ज़रूरी है कि वह चीज़ों को कस कर पकड़े और अनुभव को स्मृति में, स्मृति को अभिव्यक्ति में, तत्व को रूप में ढाले।

  (कला का प्रयोजन, अर्न्स्ट फिशर)

- कहानी शायद समय की कला है; समय के साथ कहानी अनेक प्रकार की कलाएँ दिखाती है। कभी वर्षों को समेटकर एक क्षण में बाँध लेती है; कभी क्षण को खोलकर वर्षों में फैला देती है; कभी समय के दायरे को तोड़ती है तो कभी टुकड़ों को जोड़कर एक दायरा बनाती है।

  (कहानी और फैंटेसी, नामवर सिंह)

साहित्य वह जादू की लकड़ी है जो पशुओं में, ईंट-पत्थरों में, पेड़-पौधों में भी विश्व की आत्मा का दर्शन करा देती है।
(जीवन में साहित्य का स्थान)

प्रेमचंद

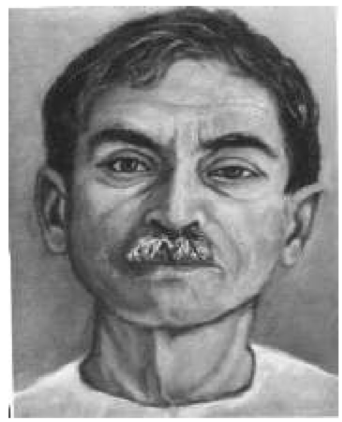

मूल नामः धनपत राय
जन्मः सन् 1880, लमही गाँव (उ.प्र.)
प्रमुख रचनाएँः सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, निर्मला, कायाकल्प, गबन, कर्मभूमि, गोदान (*उपन्यास*); सोज़े वतन, मानसरोवर–आठ खंड में, गुप्त धन (*कहानी संग्रह*); कर्बला, संग्राम, प्रेम की देवी (*नाटक*); कुछ विचार, विविध प्रसंग (*निबंध-संग्रह*)
मृत्युः सन् 1936

प्रेमचंद हिंदी कथा-साहित्य के शिखर पुरुष माने जाते हैं। कथा-साहित्य के इस शिखर पुरुष का बचपन अभावों में बीता। स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद पारिवारिक समस्याओं के कारण जैसे-तैसे बी. ए. तक की पढ़ाई की। अंग्रेज़ी में एम.ए. करना चाहते थे लेकिन जीवनयापन के लिए नौकरी करनी पड़ी। सरकारी नौकरी मिली भी लेकिन महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में सक्रिय होने के कारण त्यागपत्र देना पड़ा। राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ने के बावजूद लेखन कार्य सुचारु रूप से चलता रहा। पत्नी शिवरानी देवी के साथ अंग्रेज़ों के खिलाफ़ आंदोलनों में हिस्सा लेते रहे। उनके जीवन का राजनीतिक संघर्ष उनकी रचनाओं में सामाजिक संघर्ष बनकर सामने आया जिसमें जीवन का यथार्थ और आदर्श दोनों था।

हिंदी साहित्य के इतिहास में कहानी और उपन्यास की विधा के विकास का काल-विभाजन प्रेमचंद को ही केंद्र में रखकर किया जाता रहा है (प्रेमचंद-पूर्व युग, प्रेमचंद युग, प्रेमचंदोत्तर युग)। यह प्रेमचंद के निर्विवाद महत्त्व का एक स्पष्ट प्रमाण है। वस्तुत: प्रेमचंद ही पहले रचनाकार हैं जिन्होंने कहानी और उपन्यास की विधा को कल्पना और रुमानियत के धुँधलके से निकालकर यथार्थ की ठोस ज़मीन पर प्रतिष्ठित किया। यथार्थ की ज़मीन से जुड़कर कहानी किस्सागोई तक सीमित न रहकर पढ़ने-पढ़ाने की परंपरा से भी जुड़ी। इसमें उनकी हिंदुस्तानी (हिंदी-उर्दू मिश्रित) भाषा का विशेष योगदान रहा। उनके यहाँ हिंदुस्तानी भाषा अपने पूरे ठाट-बाट और जातीय स्वरूप के साथ आई है।

उनका आरंभिक कथा-साहित्य कल्पना, संयोग और रुमानियत के ताने-बाने से बुना गया है। लेकिन एक कथाकार के रूप में उन्होंने लगातार विकास किया और ***पंच परमेश्वर*** *जैसी कहानी तथा* ***सेवासदन*** *जैसे उपन्यास के साथ सामाजिक जीवन को कहानी का आधार बनाने वाली यथार्थवादी कला के अग्रदूत के रूप में सामने आए। यथार्थवाद के भीतर भी आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से आलोचनात्मक यथार्थवाद तक की विकास-यात्रा प्रेमचंद ने की।* ***आदर्शोन्मुख यथार्थवाद*** *स्वयं उन्हीं की गढ़ी हुई संज्ञा है। यह कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में किए गए उनके ऐसे रचनात्मक प्रयासों पर लागू होती है जो कटु यथार्थ का चित्रण करते हुए भी समस्याओं और अंतर्विरोधों को अंतत: एक आदर्शवादी और मनोवांछित समाधान तक पहुँचा देती है।* ***सेवासदन, प्रेमाश्रम*** *आदि उपन्यास और* ***पंच परमेश्वर, बड़े घर की बेटी, नमक का दारोगा*** *आदि कहानियाँ ऐसी ही हैं। बाद की उनकी रचनाओं में यह आदर्शवादी प्रवृत्ति कम होती गई है और धीरे-धीरे वे ऐसी स्थिति तक पहुँचते हैं जहाँ कठोर वास्तविकता को प्रस्तुत करने में वे किसी तरह का समझौता नहीं करते।* ***गोदान*** *उपन्यास और* ***पूस की रात, कफ़न*** *आदि कहानियाँ इसके सुंदर उदाहरण हैं।*

यहाँ दी गई कहानी **नमक का दारोगा** (प्रथम प्रकाशन 1914 ई.) प्रेमचंद की बहुचर्चित कहानी है जिसे आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के एक मुकम्मल उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। कहानी में ही आए हुए एक मुहावरे को लें तो यह **धन के ऊपर धर्म की जीत** की कहानी है। **धन** और **धर्म** को हम क्रमशः सद्वृत्ति और असद्वृत्ति, बुराई और अच्छाई, असत्य और सत्य इत्यादि भी कह सकते हैं। कहानी में इनका प्रतिनिधित्व क्रमशः पंडित अलोपीदीन और मुंशी वंशीधर नामक पात्रों ने किया है। ईमानदार कर्मयोगी मुंशी वंशीधर को खरीदने में असफल रहने के बाद पंडित अलोपीदीन अपने धन की महिमा का उपयोग कर उन्हें नौकरी से मुअत्तल करा देते हैं, लेकिन अंतःसत्य के आगे उनका सिर झुक जाता है। वे सरकारी महकमे से बर्खास्त वंशीधर को बहुत ऊँचे वेतन और भत्ते के साथ अपनी सारी जायदाद का स्थायी मैनेजर नियुक्त करते हैं और गहरे अपराध-बोध से भरी हुई वाणी में निवेदन करते हैं, **परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारेवाला बेमुरौवत, उद्दंड, किंतु धर्मनिष्ठ दारोगा बनाए रखे।** कहानी के इस अंतिम प्रसंग से पहले तक की समस्त घटनाएँ प्रशासनिक और न्यायिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उस भ्रष्टाचार की व्यापक सामाजिक स्वीकार्यता को अत्यंत साहसिक तरीके से हमारे सामने उजागर करती हैं। ईमानदार व्यक्ति के अभिमन्यु के समान निहत्थे और अकेले पड़ते जाने की यथार्थ तसवीर इस कहानी की बहुत बड़ी खूबी है। किंतु प्रेमचंद इस संदेश पर कहानी को खत्म नहीं करना चाहते क्योंकि उस दौर में वे मानते थे कि ऐसा **यथार्थवाद हमको निराशावादी बना देता है, मानव-चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है, हमको चारों तरफ़ बुराई-ही-बुराई नज़र आने लगती है** ('उपन्यास' शीर्षक निबंध से) इसीलिए कहानी का अंत सत्य की जीत के साथ होता है।

नमक का दारोगा

जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर-प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी-छिपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार के छल-प्रपंचों का सूत्रपात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों के पौ-बारह थे। पटवारीगिरी का सर्वसम्मानित पद छोड़-छोड़कर लोग इस विभाग की बरकंदाजी करते थे। इसके दारोगा पद के लिए तो वकीलों का भी जी ललचाता था। यह वह समय था, जब अंग्रेज़ी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फ़ारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर फारसीदां लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे। मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरहकथा समाप्त करके मजनू और फ़रहाद के प्रेम-वृत्तांत को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्त्व की बातें समझते हुए रोज़गार की खोज में निकले। उनके पिता एक अनुभवी पुरुष थे। समझाने लगे-बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण के बोझ से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वह घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगारे पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम कब गिर पड़ूँ। अब तुम्हीं घर के मालिक-मुख़्तार हो। नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मज़ार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढ़ना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी

ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती है, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ। इस विषय में विवेक की बड़ी आवश्यकता है। मनुष्य को देखो, उसकी आवश्यकता को देखो और अवसर को देखो, उसके उपरांत जो उचित समझो, करो। गरज़वाले आदमी के साथ कठोरता करने में लाभ ही लाभ है। लेकिन बेगरज़ को दाँव पर पाना ज़रा कठिन है। इन बातों को निगाह में बाँध लो। यह मेरी जन्मभर की कमाई है।

इस उपदेश के बाद पिताजी ने आशीर्वाद दिया। वंशीधर आज्ञाकारी पुत्र थे। ये बातें ध्यान से सुनीं और तब घर से चल खड़े हुए। इस विस्तृत संसार में उनके लिए धैर्य अपना मित्र, बुद्धि अपनी पथप्रदर्शक और आत्मावलंबन ही अपना सहायक था। लेकिन अच्छे शकुन से चले थे, जाते ही जाते नमक विभाग के दारोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गए। वेतन अच्छा और ऊपरी आय का तो ठिकाना ही न था। वृद्ध मुंशीजी को सुख-संवाद मिला, तो फूले न समाए। महाजन कुछ नरम पड़े, कलवार की आशालता लहलहाई। पड़ोसियों के हृदय में शूल उठने लगे।

जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ आए अभी छह महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस थोड़े समय में ही उन्होंने अपनी कार्यकुशलता और उत्तम आचार से अफ़सरों को मोहित कर लिया था। अफ़सर लोग उन पर बहुत विश्वास करने लगे। नमक के दफ़्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगाजी किवाड़ बंद किए मीठी नींद से सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया। उठ बैठे। इतनी रात गए गाड़ियाँ क्यों नदी के पार जाती हैं? अवश्य कुछ न कुछ गोलमाल है। तर्क ने भ्रम को पुष्ट किया। वरदी पहनी, तमंचा जेब में रखा और बात की बात में घोड़ा बढ़ाए हुए पुल पर आ पहुँचे। गाड़ियों की एक लंबी कतार पुल के पार जाती दिखी। डाँटकर पूछा–किसकी गाड़ियाँ हैं?

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। आदमियों में कुछ काना-फूसी हुई, तब आगे वाले ने कहा—पंडित अलोपीदीन की!

'कौन पंडित अलोपीदीन?'

'दातागंज के।'

मुंशी वंशीधर चौंके। पंडित अलोपीदीन इस इलाके के सबसे प्रतिष्ठित ज़मींदार थे। लाखों रुपये का लेन-देन करते थे, इधर छोटे से बड़े कौन ऐसे थे, जो उनके ऋणी न हों। व्यापार भी बड़ा लंबा-चौड़ा था। बड़े चलते-पुरज़े आदमी थे। अंगरेज़ अफ़सर उनके इलाके में शिकार खेलने आते और उनके मेहमान होते। बारहों मास सदाव्रत चलता था।

मुंशीजी ने पूछा—गाड़ियाँ कहाँ जाएँगी? उत्तर मिला—कानपुर। लेकिन इस प्रश्न पर कि इनमें क्या है, सन्नाटा छा गया। दारोगा साहब का संदेह और भी बढ़ा। कुछ

देर तक उत्तर की बाट देखकर वह ज़ोर से बोले–क्या तुम सब गूँगे हो गए हो? हम पूछते हैं, इनमें क्या लदा है?

जब इस बार भी कोई उत्तर न मिला तो उन्होंने घोड़े को एक गाड़ी से मिलाकर बोरे को टटोला। भ्रम दूर हो गया। यह नमक के ढेले थे।

पंडित अलोपीदीन अपने सजीले रथ पर सवार, कुछ सोते कुछ जागते चले आते थे। अचानक कई गाड़ीवानों ने घबराए हुए आकर जगाया और बोले–महाराज! दारोगा ने गाड़ियाँ रोक दी हैं और घाट पर खड़े आपको बुलाते हैं।

पंडित अलोपीदीन का लक्ष्मीजी पर अखंड विश्वास था। वह कहा करते थे कि संसार का तो कहना ही क्या, स्वर्ग में भी लक्ष्मी का ही राज्य है। उनका यह कहना यथार्थ ही था। न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती हैं, नचाती हैं। लेटे ही लेटे गर्व से बोले–चलो, हम आते हैं। यह कहकर पंडितजी ने बड़ी निश्चिंतता से पान के बीड़े लगाकर खाए। फिर लिहाफ़ ओढ़े हुए दारोगा के पास आकर बोले–बाबूजी, आशीर्वाद! कहिए, हमसे ऐसा कौन-सा अपराध हुआ कि गाड़ियाँ रोक दी गईं। हम ब्राह्मणों पर तो आपकी कृपा-दृष्टि रहनी चाहिए।

वंशीधर रुखाई से बोले–सरकारी हुक्म!

पंडित अलोपीदीन ने हँसकर कहा–हम सरकारी हुक्म को नहीं जानते और न सरकार को। हमारे सरकार तो आप ही हैं। हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावें। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था। वंशीधर पर ऐश्वर्य की मोहिनी वंशी का कुछ प्रभाव न पड़ा। ईमानदारी की नयी उमंग थी। कड़ककर बोले–हम उन नमकहरामों में नहीं हैं जो कौड़ियों पर अपना ईमान बेचते फिरते हैं। आप इस समय हिरासत में हैं। आपका कायदे के अनुसार चालान होगा। बस, मुझे अधिक बातों की फ़ुरसत नहीं है। जमादार बदलू सिंह! तुम इन्हें हिरासत में ले चलो, मैं हुक्म देता हूँ।

पंडित अलोपीदीन स्तंभित हो गए। गाड़ीवानों में हलचल मच गई। पंडितजी के जीवन में कदाचित यह पहला ही अवसर था कि पंडितजी को यह ऐसी कठोर बातें सुननी पड़ीं। बदलू सिंह आगे बढ़ा किन्तु रोब के मारे यह साहस न हुआ कि उनका हाथ पकड़ सके। पंडितजी ने धर्म को धन का ऐसा निरादर करते कभी न देखा था। विचार किया यह अभी उद्दंड लड़का है। माया-मोह के जाल में अभी नहीं पड़ा। अल्हड़ है, झिझकता है। बहुत दीन-भाव से बोले—बाबू साहब, ऐसा न कीजिए, हम मिट जाएँगे। इज़्ज़त धूल में मिल जाएगी। हमारा अपमान करने से आपके हाथ क्या आएगा। हम किसी तरह आपसे बाहर थोड़े ही हैं।

वंशीधर ने कठोर स्वर में कहा—हम ऐसी बातें नहीं सुनना चाहते।

अलोपीदीन ने जिस सहारे को चट्टान समझ रखा था, वह पैरों के नीचे से खिसकता हुआ मालूम हुआ। स्वाभिमान और धन ऐश्वर्य को कड़ी चोट लगी। किंतु अभी तक धन की सांख्यिक शक्ति का पूरा भरोसा था। अपने मुख्तार से बोले—लाला जी, एक हज़ार के नोट बाबू साहब को भेंट करो, आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।

वंशीधर ने गरम होकर कहा—एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।

धर्म की इस बुद्धिहीन दृढ़ता और देव-दुर्लभ त्याग पर मन बहुत झुँझलाया। अब दोनों शक्तियों में संग्राम होने लगा। धन ने उछल-उछलकर आक्रमण करने शुरू किए। एक से पाँच, पाँच से दस, दस से पंद्रह, और पंद्रह से बीस हज़ार तक नौबत पहुँची, किंतु धर्म अलौकिक वीरता के साथ इस बहुसंख्यक सेना के सम्मुख अकेला पर्वत की भाँति अटल, अविचलित खड़ा था।

अलोपीदीन निराश होकर बोले—अब इससे अधिक मेरा साहस नहीं। आगे आपको अधिकार है।

वंशीधर ने अपने जमादार को ललकारा। बदलू सिंह मन में दारोगाजी को गालियाँ देता हुआ पंडित अलोपीदीन की ओर बढ़ा। पंडित घबराकर दो-तीन कदम

पीछे हट गए। अत्यंत दीनता से बोले–बाबू साहब, ईश्वर के लिए मुझ पर दया कीजिए, मैं पच्चीस हज़ार पर निपटारा करने को तैयार हूँ।

'असंभव बात है।'

'तीस हज़ार पर?'

'किसी तरह भी संभव नहीं?'

'क्या चालीस हज़ार पर भी नहीं?'

'चालीस हज़ार नहीं, चालीस लाख पर भी असंभव है। बदलू सिंह, इस आदमी को अभी हिरासत में ले लो। अब मैं एक शब्द भी नहीं सुनना चाहता।'

धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला। अलोपीदीन ने एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य को हथकड़ियाँ लिए हुए अपनी तरफ़ आते देखा। चारों ओर निराश और कातर दृष्टि से देखने लगे। इसके बाद एकाएक मूर्छित होकर गिर पड़े।

दुनिया सोती थी, पर दुनिया की जीभ जागती थी। सवेरे देखिए तो बालक-वृद्ध सबके मुँह से यही बात सुनाई देती थी। जिसे देखिए, वही पंडितजी के इस व्यवहार पर टीका-टिप्पणी कर रहा था, निंदा की बौछारें हो रही थीं, मानो संसार से अब पापी का पाप कट गया। पानी को दूध के नाम से बेचनेवाला ग्वाला, कल्पित रोज़नामचे भरनेवाले अधिकारी वर्ग, रेल में बिना टिकट सफ़र करनेवाले बाबू लोग, जाली दस्तावेज़ बनानेवाले सेठ और साहूकार, यह सब-के-सब देवताओं की भाँति गरदनें चला रहे थे। जब दूसरे दिन पंडित अलोपीदीन अभियुक्त होकर कांस्टेबलों के साथ, हाथों में हथकड़ियाँ, हृदय में ग्लानि और क्षोभभरे, लज्जा से गरदन झुकाए अदालत की तरफ़ चले, तो सारे शहर में हलचल मच गई। मेलों में कदाचित् आँखें इतनी व्यग्र न होती होंगी। भीड़ के मारे छत और दीवार में कोई भेद न रहा।

किंतु अदालत में पहुँचने की देर थी। पंडित अलोपीदीन इस अगाध वन के सिंह थे। अधिकारी वर्ग उनके भक्त, अमले उनके सेवक, वकील-मुख्तार उनके आज्ञापालक और अरदली, चपरासी तथा चौकीदार तो उनके बिना माल के गुलाम थे। उन्हें देखते

ही लोग चारों तरफ़ से दौड़े। सभी लोग विस्मित हो रहे थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए। ऐसा मनुष्य जिसके पास असाध्य साधन करनेवाला धन और अनन्य वाचालता हो, वह क्यों कानून के पंजे में आए। प्रत्येक मनुष्य उनसे सहानुभूति प्रकट करता था। बड़ी तत्परता से इस आक्रमण को रोकने के निमित्त वकीलों की एक सेना तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर चुपचाप खड़े थे। उनके पास सत्य के सिवा न कोई बल था, न स्पष्ट भाषण के अतिरिक्त कोई शस्त्र। गवाह थे, किंतु लोभ से डाँवाडोल।

यहाँ तक कि मुंशीजी को न्याय भी अपनी ओर से कुछ खिंचा हुआ दीख पड़ता था। वह न्याय का दरबार था, परंतु उसके कर्मचारियों पर पक्षपात का नशा छाया हुआ था। किंतु पक्षपात और न्याय का क्या मेल? जहाँ पक्षपात हो, वहाँ न्याय की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मुकदमा शीघ्र ही समाप्त हो गया। डिप्टी मजिस्ट्रेट ने अपनी तजवीज़ में लिखा, पंडित अलोपीदीन के विरुद्ध दिए गए प्रमाण निर्मूल और भ्रमात्मक हैं। वह एक बड़े भारी आदमी हैं। यह बात कल्पना के बाहर है कि उन्होंने थोड़े लाभ के लिए ऐसा दुस्साहस किया हो। यद्यपि नमक के दारोगा मुंशी वंशीधर का अधिक दोष नहीं है, लेकिन यह बड़े खेद की बात है कि उसकी उद्दंडता और विचारहीनता के कारण एक भलेमानुस को कष्ट झेलना पड़ा। हम प्रसन्न हैं कि वह अपने काम से सजग और सचेत रहता है, किंतु नमक से मुकदमे की बढ़ी हुई नमकहलाली ने उसके विवेक और बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया। भविष्य में उसे होशियार रहना चाहिए।

वकीलों ने यह फ़ैसला सुना और उछल पड़े। पंडित अलोपीदीन मुसकुराते हुए बाहर निकले। स्वजन-बांधवों ने रुपयों की लूट की। उदारता का सागर उमड़ पड़ा। उसकी लहरों ने अदालत की नींव तक हिला दी। जब वंशीधर बाहर निकले तो चारों ओर से उनके ऊपर व्यंग्यबाणों की वर्षा होने लगी। चपरासियों ने झुक-झुककर सलाम किए। किंतु इस समय एक-एक कटुवाक्य, एक-एक संकेत उनकी गर्वाग्नि

को प्रज्वलित कर रहा था। कदाचित् इस मुकदमे में सफ़ल होकर वह इस तरह अकड़ते हुए न चलते। आज उन्हें संसार का एक खेदजनक विचित्र अनुभव हुआ। न्याय और विद्वता, लंबी-चौड़ी उपाधियाँ, बड़ी-बड़ी दाढ़ियाँ और ढीले चोंगे एक भी सच्चे आदर के पात्र नहीं हैं।

वंशीधर ने धन से बैर मोल लिया था, उसका मूल्य चुकाना अनिवार्य था। कठिनता से एक सप्ताह बीता होगा कि मुअत्तली का परवाना आ पहुँचा। कार्य-परायणता का दंड मिला। बेचारे भग्न हृदय, शोक और खेद से व्यथित घर को चले। बूढ़े मुंशीजी तो पहले ही से कुड़-बुड़ा रहे थे कि चलते-चलते इस लड़के को समझाया था लेकिन इसने एक न सुनी। सब मनमानी करता है। हम तो कलवार और कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख्वाह! हमने भी तो नौकरी की है, और कोई ओहदेदार नहीं थे, लेकिन काम किया, दिल खोलकर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अँधेरा हो, मस्जिद में अवश्य दीया जलाएँगे। खेद ऐसी समझ पर! पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया। इसके थोड़े ही दिनों बाद, जब मुंशी वंशीधर इस दुरावस्था में घर पहुँचे और बूढ़े पिताजी ने समाचार सुना तो सिर पीट लिया। बोले–जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लूँ। बहुत देर तक पछता-पछताकर हाथ मलते रहे। क्रोध में कुछ कठोर बातें भी कहीं और यदि वंशीधर वहाँ से टल न जाते तो अवश्य ही यह क्रोध विकट रूप धारण करता। वृद्धा माता को भी दुःख हुआ। जगन्नाथ और रामेश्वर यात्रा की कामनाएँ मिट्टी में मिल गईं। पत्नी ने तो कई दिनों तक सीधे मुँह से बात भी नहीं की।

इसी प्रकार एक सप्ताह बीत गया। संध्या का समय था। बूढ़े मुंशीजी बैठे राम-नाम की माला जप रहे थे। इसी समय उनके द्वार पर सजा हुआ रथ आकर रुका। हरे और गुलाबी परदे, पछहिएँ बैलों की जोड़ी, उनकी गरदनों में नीले धागे, सीगें पीतल से जड़ी हुई। कई नौकर लाठियाँ कंधों पर रखे साथ थे। मुंशीजी अगवानी को दौड़े। देखा तो पंडित अलोपीदीन हैं। झुककर दंडवत की और

लल्लो-चप्पो की बातें करने लगे, हमारा भाग्य उदय हुआ, जो आपके चरण इस द्वार पर आए। आप हमारे पूज्य देवता हैं, आपको कौन-सा मुँह दिखावें, मुँह में तो कालिख लगी हुई है। किंतु क्या करें, लड़का अभागा कपूत है, नहीं तो आपसे क्यों मुँह छिपाना पड़ता? ईश्वर निस्संतान चाहे रखे, पर ऐसी संतान न दे।

अलोपीदीन ने कहा–नहीं भाई साहब, ऐसा न कहिए।

मुंशीजी ने चकित होकर कहा–ऐसी संतान को और क्या कहूँ?

अलोपीदीन ने वात्सल्यपूर्ण स्वर में कहा–कुलतिलक और पुरुषों की कीर्ति उज्ज्वल करने वाले संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें?

पंडित अलोपीदीन ने वंशीधर से कहा–दारोगा जी, इसे खुशामद न समझिए, खुशामद करने के लिए मुझे इतना कष्ट उठाने की ज़रूरत न थी। उस रात को आपने अपने अधिकार-बल से मुझे अपनी हिरासत में लिया था किंतु आज मैं स्वेच्छा से आपकी हिरासत में हूँ। मैंने हज़ारों रईस और अमीर देखे, हज़ारों उच्च पदाधिकारियों से काम पड़ा, किंतु मुझे परास्त किया तो आपने। मैंने सबको अपना और अपने धन का गुलाम बनाकर छोड़ दिया। मुझे आज्ञा दीजिए कि आपसे कुछ विनय करूँ।

वंशीधर ने अलोपीदीन को आते देखा तो उठकर सत्कार किया किंतु स्वाभिमान सहित। समझ गए कि यह महाशय मुझे लज्जित करने और जलाने आए हैं। क्षमा-प्रार्थना कर चेष्टा नहीं की, वरन उन्हें अपने पिता की यह ठकुर-सुहाती की बात असह्य-सी प्रतीत हुई। पर पंडितजी की बातें सुनीं तो मन की मैल मिट गई। पंडितजी की ओर उड़ती हुई दृष्टि से देखा। सदभाव झलक रहा था। गर्व ने अब लज्जा के सामने सिर झुका दिया। शरमाते हुए बोले–यह आपकी उदारता है जो ऐसा कहते हैं। मुझसे जो कुछ अविनय हुई है, उसे क्षमा कीजिए। मैं धर्म की बेड़ी में जकड़ा हुआ था, नहीं तो वैसे मैं आपका दास हूँ। जो आज्ञा होगी, वह मेरे सिर-माथे पर।

अलोपीदीन ने विनीत भाव से कहा–नदी तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं स्वीकार की थी किंतु आज स्वीकार करनी पड़ेगी।

वंशीधर बोले–मैं किस योग्य हूँ किन्तु जो कुछ सेवा मुझसे हो सकती है, उसमें त्रुटि न होगी।

अलोपीदीन ने एक स्टांप लगा हुआ पत्र निकाला और उसे वंशीधर के सामने रखकर बोले–इस पद को स्वीकार कीजिए और अपने हस्ताक्षर कर दीजिए। मैं ब्राह्मण हूँ, जब तक यह सवाल पूरा न कीजिएगा, द्वार से न हटूँगा।

मुंशी वंशीधर ने उस कागज़ को पढ़ा तो कृतज्ञता से आँखों में आँसू भर आए। पंडित अलोपीदीन ने उनको अपनी सारी जायदाद का स्थायी मैनेजर नियत किया था। छह हज़ार वार्षिक वेतन के अतिरिक्त रोज़ाना खर्च अलग, सवारी के लिए घोड़े, रहने को बंगला, नौकर-चाकर मुफ़्त। कंपित स्वर में बोले–पंडित जी, मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपकी उदारता की प्रशंसा कर सकूँ। किंतु मैं ऐसे उच्च पद के योग्य नहीं हूँ।

अलोपीदीन हँसकर बोले–मुझे इस समय एक अयोग्य मनुष्य की ही ज़रूरत है।

वंशीधर ने गंभीर भाव से कहा–यों मैं आपका दास हूँ। आप जैसे कीर्तिवान, सज्जन पुरुष की सेवा करना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। किंतु मुझमें न विद्या है, न बुद्धि, न वह स्वभाव, जो इन त्रुटियों की पूर्ति कर देता है। ऐसे महान कार्य के लिए एक बड़े मर्मज्ञ अनुभवी मनुष्य की ज़रूरत है।

अलोपीदीन ने कलमदान से कलम निकाली और उसे वंशीधर के हाथ में देकर बोले–न मुझे विद्वता की चाह है, न अनुभव की, न मर्मज्ञता की, न कार्य कुशलता की। इन गुणों के महत्त्व का परिचय खूब पा चुका हूँ। अब सौभाग्य और सुअवसर ने मुझे वह मोती दे दिया है जिसके सामने योग्यता और विद्वता की चमक फीकी पड़ जाती है। यह कलम लीजिए, अधिक सोच-विचार न कीजिए, दस्तखत कर दीजिए। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारे वाला बेमुरौवत, उद्दंड, कठोर परंतु धर्मनिष्ठ दारोगा बनाए रखे!

वंशीधर की आँखें डबडबा आईं। हृदय के संकुचित पात्र में इतना एहसान न समा सका। एक बार फिर पंडितजी की ओर भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखा और काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज़ पर हस्ताक्षर कर दिए।

अलोपीदीन ने प्रफुल्लित होकर उन्हें गले लगा लिया।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. कहानी का कौन-सा पात्र आपको सर्वाधिक प्रभावित करता है और क्यों?
2. 'नमक का दारोगा' कहानी में पंडित अलोपीदीन के व्यक्तित्व के कौन से दो पहलू (पक्ष) उभरकर आते हैं?
3. कहानी के लगभग सभी पात्र समाज की किसी-न-किसी सच्चाई को उजागर करते हैं। निम्नलिखित पात्रों के संदर्भ में पाठ से उस अंश को उद्धृत करते हुए बताइए कि यह समाज की किस सच्चाई को उजागर करते हैं–

   (क) वृद्ध मुंशी (ख) वकील (ग) शहर की भीड़
4. निम्न पंक्तियों को ध्यान से पढ़िए– ***नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मज़ार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढ़ना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती है, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ।***

   (क) यह किसकी उक्ति है?

   (ख) मासिक वेतन को पूर्णमासी का चाँद क्यों कहा गया है?

   (ग) क्या आप एक पिता के इस वक्तव्य से सहमत हैं?
5. 'नमक का दारोगा' कहानी के कोई दो अन्य शीर्षक बताते हुए उसके आधार को भी स्पष्ट कीजिए।

6. कहानी के अंत में अलोपीदीन के वंशीधर को मैनेजर नियुक्त करने के पीछे क्या कारण हो सकते हैं? तर्क सहित उत्तर दीजिए। आप इस कहानी का अंत किस प्रकार करते?

पाठ के आस-पास

1. दारोगा वंशीधर गैरकानूनी कार्यों की वजह से पंडित अलोपीदीन को गिरफ्तार करता है, लेकिन कहानी के अंत में इसी पंडित अलोपीदीन की सहृदयता पर मुग्ध होकर उसके यहाँ मैनेजर की नौकरी को तैयार हो जाता है। आपके विचार से वंशीधर का ऐसा करना उचित था? आप उसकी जगह होते तो क्या करते?
2. नमक विभाग के दारोगा पद के लिए बड़ों-बड़ों का जी ललचाता था। वर्तमान समाज में ऐसा कौन-सा पद होगा जिसे पाने के लिए लोग लालायित रहते होंगे और क्यों?
3. अपने अनुभवों के आधार पर बताइए कि जब आपके तर्कों ने आपके भ्रम को पुष्ट किया हो।
4. ***पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया।*** वृद्ध मुंशी जी द्वारा यह बात एक विशिष्ट संदर्भ में कही गई थी। अपने निजी अनुभवों के आधार पर बताइए–
   (क) जब आपको पढ़ना-लिखना व्यर्थ लगा हो।
   (ख) जब आपको पढ़ना-लिखना सार्थक लगा हो।
   (ग) 'पढ़ना-लिखना' को किस अर्थ में प्रयुक्त किया गया होगा **:**
   साक्षरता अथवा शिक्षा? (क्या आप इन दोनों को समान मानते हैं?)
5. ***लड़कियाँ हैं, वह घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं।*** वाक्य समाज में लड़कियों की स्थिति की किस वास्तविकता को प्रकट करता है?
6. ***इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए। ऐसा मनुष्य जिसके पास असाध्य साधन करनेवाला धन और अनन्य वाचालता हो, वह क्यों कानून के पंजे में आए। प्रत्येक मनुष्य उनसे सहानुभूति प्रकट करता था।*** अपने आस-पास अलोपीदीन जैसे व्यक्तियों को देखकर आपकी क्या प्रतिक्रिया होगी? उपर्युक्त टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए लिखें।

समझाइए तो ज़रा

1. नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर की मज़ार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए।
2. इस विस्तृत संसार में उनके लिए धैर्य अपना मित्र, बुद्धि अपनी पथप्रदर्शक और आत्मावलंबन ही अपना सहायक था।

3. तर्क ने भ्रम को पुष्ट किया।
4. न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती हैं, नचाती हैं।
5. दुनिया सोती थी, पर दुनिया की जीभ जागती थी।
6. खेद ऐसी समझ पर! पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया।
7. धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला।
8. न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया।

भाषा की बात

1. भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों के जानदार उपयोग तथा हिंदी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज़ से यह कहानी अद्‌भुत है। कहानी में से ऐसे उदाहरण छाँटकर लिखिए और यह भी बताइए कि इनके प्रयोग से किस तरह कहानी का कथ्य अधिक असरदार बना है?
2. कहानी में मासिक वेतन के लिए किन-किन विशेषणों का प्रयोग किया गया है? इसके लिए आप अपनी ओर से दो-दो विशेषण और बताइए। साथ ही विशेषणों के आधार को तर्क सहित पुष्ट कीजिए।
3. (क) बाबूजी आशीर्वाद!
   (ख) सरकारी हुक्म!
   (ग) दातागंज के!
   (घ) कानपुर!

   दी गई विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ एक निश्चित संदर्भ में निश्चित अर्थ देती हैं। संदर्भ बदलते ही अर्थ भी परिवर्तित हो जाता है। अब आप किसी अन्य संदर्भ में इन भाषिक अभिव्यक्तियों का प्रयोग करते हुए समझाइए।

चर्चा करें

इस कहानी को पढ़कर बड़ी-बड़ी डिग्रियों, न्याय और विद्वता के बारे में आपकी क्या धारणा बनती है? वर्तमान समय को ध्यान में रखते हुए इस विषय पर शिक्षकों के साथ एक परिचर्चा आयोजित करें।

शब्द-छवि

बरकंदाजी	-	बंदूक लेकर चलने वाला सिपाही, चौकीदार
सदाव्रत	-	हमेशा अन्न बाँटने का व्रत
मुख्तार	-	कलक्टरी में वकील से कम दरजे का वकील
अलौकिक	-	दिखाई न देने वाला
कातर	-	परेशान, दुखी
अमले	-	कर्मचारी मंडल, नौकर-चाकर
अरदली (ऑर्डरली)	-	किसी बड़े अफ़सर के साथ रहने वाला खास चपरासी
तजवीज़	-	राय, निर्णय
अकारथ	-	व्यर्थ
पछहिएँ	-	पश्चिमी

समय ही वह रंग है जो अनेक-अनेक रंगों में विभाजित होता है और पठन-पाठन प्रक्रिया द्वारा फिर एक हो जाता है
(शब्दों के आलोक में)

कृष्णा सोबती

जन्मः सन् 1925, गुजरात (पश्चिमी पंजाब-वर्तमान में पाकिस्तान)
प्रमुख रचनाएँः ज़िंदगीनामा, दिलोदानिश, ऐ लड़की, समय सरगम *(उपन्यास)*; डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, बादलों के घेरे, सूरजमुखी अँधेरे के, *(कहानी संग्रह)*; हम-हशमत, शब्दों के आलोक में *(शब्दचित्र, संस्मरण)*
प्रमुख सम्मानः साहित्य अकादमी सम्मान, हिंदी अकादमी का शलाका सम्मान, साहित्य अकादमी की महत्तर सदस्यता सहित अनेक राष्ट्रीय पुरस्कार।

हिंदी कथा साहित्य में कृष्णा सोबती की विशिष्ट पहचान है। वे मानती हैं कि कम लिखना विशिष्ट लिखना है। यही कारण है कि उनके संयमित लेखन और साफ़-सुथरी रचनात्मकता ने अपना एक नित नया पाठक वर्ग बनाया है। उनके कई उपन्यासों, लंबी कहानियों और संस्मरणों ने हिंदी के साहित्यिक संसार में अपनी दीर्घजीवी उपस्थिति सुनिश्चित की है। उन्होंने हिंदी साहित्य को कई ऐसे यादगार चरित्र दिए हैं, जिन्हें अमर कहा जा सकता है; जैसे – मित्रो, शाहनी, हशमत आदि।

*भारत पाकिस्तान पर जिन लेखकों ने हिंदी में कालजयी रचनाएँ लिखीं, उनमें कृष्णा सोबती का नाम पहली कतार में रखा जाएगा। बल्कि यह कहना उचित होगा कि यशपाल के **झूठा-सच**, राही मासूम रज़ा के **आधा गाँव** और भीष्म साहनी के **तमस** के साथ-साथ कृष्णा सोबती का **ज़िंदगीनामा** इस प्रंसग में एक विशिष्ट उपलब्धि है।*

संस्मरण के क्षेत्र में ***हम-हशमत*** *शीर्षक से उनकी कृति का विशिष्ट स्थान है, जिसमें अपने ही एक दूसरे व्यक्तित्व के रूप में उन्होंने हशमत नामक चरित्र का सृजन कर एक अद्‌भुत प्रयोग का उदाहरण प्रस्तुत किया है। कृष्णा जी के भाषिक प्रयोग में भी विविधता है। उन्होंने हिंदी की कथा-भाषा को एक विलक्षण ताज़गी दी है। संस्कृतनिष्ठ तत्समता, उर्दू का बाँकपन, पंजाबी की ज़िंदादिली, ये सब एक साथ उनकी रचनाओं में मौजूद हैं।*

मियाँ नसीरुद्दीन *शब्दचित्र* ***हम-हशमत*** *नामक संग्रह से लिया गया है। इसमें खानदानी नानबाई मियाँ नसीरुद्दीन के व्यक्तित्व, रुचियों और स्वभाव का शब्दचित्र खींचा गया है। मियाँ नसीरुद्दीन अपने मसीहाई अंदाज़ से रोटी पकाने की कला और उसमें अपने खानदानी महारत को बताते हैं। वे ऐसे इनसान का भी प्रतिनिधित्व करते हैं जो अपने पेशे को कला का दर्जा देते हैं और करके सीखने को असली हुनर मानते हैं।*

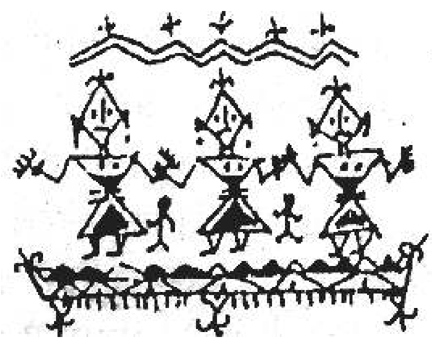

मियाँ नसीरुद्दीन

साहबों, उस दिन अपन मटियामहल की तरफ़ से न गुज़र जाते तो राजनीति, साहित्य और कला के हज़ारों-हज़ार मसीहों के धूम-धड़क्के में नानबाइयों के मसीहा मियाँ नसीरुद्दीन को कैसे तो पहचानते और कैसे उठाते लुत्फ़ उनके मसीही अंदाज़ का!

हुआ यह कि हम एक दुपहरी जामा मस्जिद के आड़े पड़े मटियामहल के गढ़ैया मुहल्ले की ओर निकल गए। एक निहायत मामूली अँधेरी-सी दुकान पर पटापट आटे का ढेर सनते देख ठिठके। सोचा, सेवइयों की तैयारी होगी, पर पूछने पर मालूम हुआ खानदानी नानबाई मियाँ नसीरुद्दीन की दुकान पर खड़े हैं। मियाँ मशहूर हैं छप्पन किस्म की रोटियाँ बनाने के लिए।

हमने जो अंदर झाँका तो पाया, मियाँ चारपाई पर बैठे बीड़ी का मज़ा ले रहे हैं। मौसमों की मार से पका चेहरा, आँखों में काइयाँ भोलापन और पेशानी पर मँजे हुए कारीगर के तेवर।

हमें गाहक समझ मियाँ ने नज़र उठाई–'फ़रमाइए।'

झिझक से कहा–'आपसे कुछ एक सवाल पूछने थे–आपको वक्त हो तो...'

मियाँ नसीरुद्दीन ने पंचहज़ारी अंदाज़ से सिर हिलाया–'निकाल लेंगे वक्त थोड़ा, पर यह तो कहिए, आपको पूछना क्या है?'

फिर घूरकर देखा और जोड़ा–'मियाँ, कहीं अखबारनवीस तो नहीं हो? यह तो खोजियों की खुराफ़ात है। हम तो अखबार बनानेवाले और अखबार पढ़नेवाले–दोनों

को ही निठल्ला समझते हैं। हाँ–कामकाजी आदमी को इससे क्या काम है। खैर, आपने यहाँ तक आने की तकलीफ़ उठाई ही है तो पूछिए–क्या पूछना चाहते हैं!'

'पूछना यह था कि किस्म-किस्म की रोटी पकाने का इल्म आपने कहाँ से हासिल किया?'

मियाँ नसीरुद्दीन ने आँखों के कंचे हम पर फेर दिए। फिर तरेरकर बोले–'क्या मतलब? पूछिए साहब–नानबाई इल्म लेने कहीं और जाएगा? क्या नगीनासाज़ के पास? क्या आईनासाज़ के पास? क्या मीनासाज़ के पास? या रफ़ूगर, रँगरेज़ या तेली-तंबोली से सीखने जाएगा? क्या फ़रमा दिया साहब–यह तो हमारा खानदानी पेशा ठहरा। हाँ, इल्म की बात पूछिए तो जो कुछ भी सीखा, अपने वालिद उस्ताद से ही। मतलब यह कि हम घर से न निकले कि कोई पेशा अख्तियार करेंगे। जो

बाप-दादा का हुनर था वही उनसे पाया और वालिद मरहूम के उठ जाने पर आ बैठे उन्हीं के ठीये पर!'

'आपके वालिद...?'

मियाँ नसीरुद्दीन की आँखें लमहा-भर को किसी भट्ठी में गुम हो गईं। लगा गहरी सोच में हैं—फिर सिर हिलाया—'क्या आँखों के आगे चेहरा ज़िंदा हो गया! हाँ हमारे वालिद साहिब मशहूर थे मियाँ बरकत शाही नानबाई गढ़ैयावाले के नाम से और उनके वालिद यानी कि हमारे दादा साहिब थे आला नानबाई मियाँ कल्लन।'

'आपको इन दोनों में से किसी—किसी की भी कोई नसीहत याद हो!'

'नसीहत काहे की मियाँ! काम करने से आता है, नसीहतों से नहीं। हाँ!'

'बजा फ़रमाया है, पर यह तो बताइए ही बताइए कि जब आप (हमने भट्ठी की ओर इशारा किया) इस काम पर लगे तो वालिद साहिब ने सीख के तौर पर कुछ तो कहा होगा।'

नसीरुद्दीन साहिब ने जल्दी-जल्दी दो-तीन कश खींचे, फिर गला साफ़ किया और बड़े अंदाज़ से बोले—'अगर आपको कुछ कहलवाना ही है तो बताए दिए देते हैं। आप जानो जब बच्चा उस्ताद के यहाँ पढ़ने बैठता है तो उस्ताद कहता है—

कह, 'अलिफ़'

बच्चा कहता है, 'अलिफ़'

कह, 'बे'

बच्चा कहता है, 'बे'

कह, 'जीम'

बच्चा कहता है, 'जीम'

इस बीच उस्ताद ज़ोर का एक हाथ सिर पर धरता है और शागिर्द चुपचाप परवान करता है! समझे साहिब, एक तो पढ़ाई ऐसी और दूसरी...। बात बीच में छोड़ सामने से गुज़रते मीर साहिब को आवाज़ दे डाली—'कहो भाई मीर साहिब! सुबह न आना हुआ, पर क्यों?'

मीर साहिब ने सिर हिलाया–'मियाँ, अभी लौट के आते हैं तो बतावेंगे।'

'आप दूसरी पढ़ाई की बाबत कुछ कह रहे थे न!'

इस बार मियाँ नसीरुद्दीन ने यूँ सिर हिलाया कि सुकरात हों–'हाँ,–एक दूसरी पढ़ाई भी होती है। सुनिए, अगर बच्चे को भेजा मदरसे तो बच्चा–

न कच्ची में बैठा,
न बैठा वह पक्की में
न दूसरी में–

और जा बैठा तीसरी में–हम यह पूछेंगे कि उन तीन जमातों का क्या हुआ? क्या हुआ उन तीन किलासों का?'

अपना खयाल था कि मियाँ नसीरुद्दीन नानबाई अपनी बात का निचोड़ भी निकालेंगे पर वह हमीं पर दागते रहे–'आप ही बताइए–उन दो-तीन जमातों का हुआ क्या?'

'यह बात मेरी समझ के तो बाहर है।'

इस बार शाही नानबाई मियाँ कल्लन के पोते अपने बचे-खुचे दाँतों से खिलखिला के हँस दिए! 'मतलब मेरा क्या साफ़ न था! लो साहिबो, अभी साफ़ हुआ जाता है। ज़रा-सी देर को मान लीजिए–

हम बर्तन धोना न सीखते
हम भट्ठी बनाना न सीखते
भट्ठी को आँच देना न सीखते
तो क्या हम सीधे-सीधे नानबाई का हुनर सीख जाते!'

मियाँ नसीरुद्दीन हमारी ओर कुछ ऐसे देखा किए कि उन्हें हमसे जवाब पाना हो। फिर बड़े ही मँजे अंदाज़ में कहा–'कहने का मतलब साहिब यह कि तालीम की तालीम भी बड़ी चीज़ होती है।'

सिर हिलाया–'है साहिब, माना!'

मियाँ नसीरुद्दीन जोश में आ गए–'हमने न लगाया होता खोमचा तो आज क्या यहाँ बैठे होते!'

मियाँ को खोमचेवाले दिनों में भटकते देख हमने बात का रुख मोड़ा–'आपने खानदानी नानबाई होने का ज़िक्र किया, क्या यहाँ और भी नानबाई हैं?'

मियाँ ने घूरा–'बहुतेरे, पर खानदानी नहीं–सुनिए, दिमाग में चक्कर काट गई है एक बात। हमारे बुज़ुर्गों से बादशाह सलामत ने यूँ कहा–मियाँ नानबाई, कोई नई चीज़ खिला सकते हो?'

'हुक्म कीजिए, जहाँपनाह!'

बादशाह सलामत ने फ़रमाया–'कोई ऐसी चीज़ बनाओ जो न आग से पके, न पानी से बने।'

'क्या उनसे बनी ऐसी चीज़!'

'क्यों न बनती साहिब! बनी और बादशाह सलामत ने खूब खाई और खूब सराही।'

लगा, हमारा आना कुछ रंग लाया चाहता है। बेसब्री से पूछा–'वह पकवान क्या था–कोई खास ही चीज़ होगी।'

मियाँ कुछ देर सोच में खोए रहे। सोचा पकवान पर रोशनी डालने को है कि नसीरुद्दीन साहिब बड़ी रुखाई से बोले–'यह हम न बतावेंगे। बस, आप इत्ता समझ लीजिए कि एक कहावत है न कि खानदानी नानबाई कुएँ में भी रोटी पका सकता है। कहावत जब भी गढ़ी गई हो, हमारे बुज़ुर्गों के करतब पर ही पूरी उतरती है।'

मज़ा लेने के लिए टोका–'कहावत यह सच्ची भी है कि ...।'

मियाँ ने तरेरा–'और क्या झूठी है? आप ही बताइए, रोटी पकाने में झूठ का क्या काम! झूठ से रोटी पकेगी? क्या पकती देखी है कभी! रोटी जनाब पकती है आँच से, समझे!'

सिर हिलाना पड़ा–'ठीक फ़रमाते हैं।'

इस बीच मियाँ ने किसी और को पुकार लिया–'मियाँ रहमत, इस वक्त किधर को! अरे वह लौंडिया न आई रूमाली लेने। शाम को मँगवा लीजो।'

'मियाँ, एक बात और आपको बताने की ज़हमत उठानी पड़ेगी...।'

मियाँ ने एक और बीड़ी सुलगा ली थी। सो कुछ फुर्ती पा गए थे–'पूछिए–अरे बात ही तो पूछिएगा–जान तो न ले लेवेंगे। उसमें भी अब क्या देर! सत्तर के हो चुके' फिर जैसे अपने से ही कहते हों–'वालिद मरहूम तो कूच किए अस्सी पर क्या मालूम हमें इतनी मोहलत मिले, न मिले।'

इस मज़मून पर हमसे कुछ कहते न बन आया तो कहा–'अभी यही जानना था कि आपके बुज़ुर्गों ने शाही बावर्चीखाने में तो काम किया ही होगा?'

मियाँ ने बेरुखी से टोका–'वह बात तो पहले हो चुकी न!'

'हो तो चुकी साहिब, पर जानना यह था कि दिल्ली के किस बादशाह के यहाँ आपके बुज़ुर्ग काम किया करते थे?'

'अजी साहिब, क्यों बाल की खाल निकालने पर तुले हैं! कह दिया न कि बादशाह के यहाँ काम करते थे–सो क्या काफ़ी नहीं?'

हम खिसियानी हँसी हँसे–'है तो काफ़ी, पर ज़रा नाम लेते तो उसे वक्त से मिला लेते।'

'वक्त से मिला लेते–खूब! पर किसे मिलाते जनाब आप वक्त से?'–मियाँ हँसे जैसे हमारी खिल्ली उड़ाते हों।

'वक्त से वक्त को किसी ने मिलाया है आज तक! खैर–पूछिए–किसका नाम जानना चाहते हैं? दिल्ली के बादशाह का ही ना! उनका नाम कौन नहीं जानता–जहाँपनाह बादशाह सलामत ही न!'

'कौन-से, बहादुरशाह ज़फ़र कि ...!'

मियाँ ने खीजकर कहा–फिर अलट-पलट के वही बात। लिख लीजिए बस यही नाम–आपको कौन बादशाह के नाम चिट्ठी-रुक्का भेजना है कि डाकखानेवालों के लिए सही नाम-पता ही ज़रूरी है।'

हमें बिटर-बिटर अपनी तरफ़ देखते पाया तो सिर हिला अपने कारीगर से बोले-'अरे ओ बब्बन मियाँ, भट्ठी सुलगा दो तो काम से निबटें।'

'यह बब्बन मियाँ कौन हैं, साहिब?'

मियाँ ने रुखाई से जैसे फाँक ही काट दी हो–'अपने कारीगर, और कौन होंगे!'

मन में आया पूछ लें आपके बेटे-बेटियाँ हैं, पर मियाँ नसीरुद्दीन के चेहरे पर किसी दबे हुए अंधड़ के आसार देख यह मज़मून न छेड़ने का फ़ैसला किया। इतना ही कहा–'ये कारीगर लोग आपकी शागिर्दी करते हैं?'

'खाली शागिर्दी ही नहीं साहिब, गिन के मजूरी देता हूँ। दो रुपये मन आटे की मजूरी। चार रुपये मन मैदे की मजूरी! हाँ!

'ज़्यादातर भट्ठी पर कौन-सी रोटियाँ पका करती हैं?'

मियाँ को अब तक इस मज़मून में कोई दिलचस्पी बाकी न रही थी, फिर भी हमसे छुटकारा पाने को बोले–

'बाकरखानी-शीरमाल-ताफ़तान-बेसनी-खमीरी-रूमाली-गाव-दीदा-गाज़ेबान-तुनकी–'

फिर तेवर चढ़ा हमें घूरकर कहा–'तुनकी पापड़ से ज़्यादा महीन होती है, महीन। हाँ। किसी दिन खिलाएँगे, आपको।'

एकाएक मियाँ की आँखों के आगे कुछ कौंध गया। एक लंबी साँस भरी और किसी गुमशुदा याद को ताज़ा करने को कहा–'उतर गए वे ज़माने। और गए वे कद्रदान जो पकाने-खाने की कद्र करना जानते थे! मियाँ अब क्या रखा है...निकाली तंदूर से–निगली और हज़म!'

अभ्यास

पाठ के साथ

1. मियाँ नसीरुद्दीन को ***नानबाइयों का मसीहा*** क्यों कहा गया है?
2. लेखिका मियाँ नसीरुद्दीन के पास क्यों गई थीं?
3. बादशाह के नाम का प्रसंग आते ही लेखिका की बातों में मियाँ नसीरुद्दीन की दिलचस्पी क्यों खत्म होने लगी?

4. ***मियाँ नसीरुद्दीन के चेहरे पर किसी दबे हुए अंधड़ के आसार देख यह मज़मून न छेड़ने का फ़ैसला किया*** – इस कथन के पहले और बाद के प्रसंग का उल्लेख करते हुए इसे स्पष्ट कीजिए।
5. पाठ में मियाँ नसीरुद्दीन का शब्दचित्र लेखिका ने कैसे खींचा है?

पाठ के आस-पास

1. मियाँ नसीरुद्दीन की कौन-सी बातें आपको अच्छी लगीं?
2. ***तालीम की तालीम ही बड़ी चीज़ होती है***– यहाँ लेखक ने ***तालीम*** शब्द का दो बार प्रयोग क्यों किया है? क्या आप दूसरी बार आए ***तालीम*** शब्द की जगह कोई अन्य शब्द रख सकते हैं? लिखिए।
3. मियाँ नसीरुद्दीन तीसरी पीढ़ी के हैं जिसने अपने खानदानी व्यवसाय को अपनाया। वर्तमान समय में प्रायः लोग अपने पारंपरिक व्यवसाय को नहीं अपना रहे हैं। ऐसा क्यों?
4. ***मियाँ, कहीं अखबारनवीस तो नहीं हो? यह तो खोजियों की खुराफ़ात है*** – अखबार की भूमिका को देखते हुए इस पर टिप्पणी करें।

पकवानों को जानें

- पाठ में आए रोटियों के अलग-अलग नामों की सूची बनाएँ और इनके बारे में जानकारी प्राप्त करें।

भाषा की बात

1. तीन चार वाक्यों में अनुकूल प्रसंग तैयार कर नीचे दिए गए वाक्यों का इस्तेमाल करें।
   क. ***पंचहज़ारी अंदाज़ से सिर हिलाया।***
   ख. ***आँखों के कंचे हम पर फेर दिए।***
   ग. ***आ बैठे उन्हीं के ठीये पर।***
2. ***बिटर-बिटर देखना***– यहाँ देखने के एक खास तरीके को प्रकट किया गया है? देखने संबंधी इस प्रकार के चार क्रिया-विशेषणों का प्रयोग कर वाक्य बनाइए।
3. नीचे दिए वाक्यों में अर्थ पर बल देने के लिए शब्द-क्रम परिवर्तित किया गया है। सामान्यतः इन वाक्यों को किस क्रम में लिखा जाता है? लिखें।

   क. मियाँ मशहूर हैं छप्पन किस्म की रोटियाँ बनाने के लिए।
   ख. निकाल लेंगे वक्त थोड़ा।
   ग. दिमाग में चक्कर काट गई है बात।
   घ. रोटी जनाब पकती है आँच से।

शब्द-छवि

नानबाई	-	तरह-तरह की रोटी बनाने-बेचने का काम करने वाला
काइयाँ	-	धूर्त, चालाक
पेशानी	-	माथा, मस्तक
अखबारनवीस	-	पत्रकार
खुराफ़ात	-	शरारत
इल्म	-	जानकारी, ज्ञान, विद्या
नगीनासाज़	-	नगीना जड़ने वाला
मीनासाज़	-	मीनाकारी करने वाला
रँगरेज	-	कपड़ा रँगने वाला
वालिद	-	पिता
अख्तियार करना	-	अपनाना
मरहूम	-	जिसकी मृत्यु हो चुकी हो
मोहलत	-	कार्य विशेष के लिए मिलने वाला समय
लमहा भर	-	क्षणभर
नसीहत	-	सीख, शिक्षा
बजा फ़रमाना	-	ठीक बात कहना
शागिर्द	-	शिष्य
परवान करना	-	उन्नति की तरफ़ बढ़ना
जमात	-	कक्षा, श्रेणी
रुखाई	-	उपेक्षित भाव
तरेरा	-	घूरकर देखा
रूमाली	-	एक प्रकार की रोटी जो रूमाल की तरह बड़ी और बहुत पतली होती है
ज़हमत उठाना	-	तकलीफ़, झंझट, कष्ट
मज़मून	-	मामला, विषय

अच्छी तकनीक वह है जिसका इस्तेमाल दिखाई न पड़े।

(पटकथा-16 के साक्षात्कार से)

सत्यजित राय

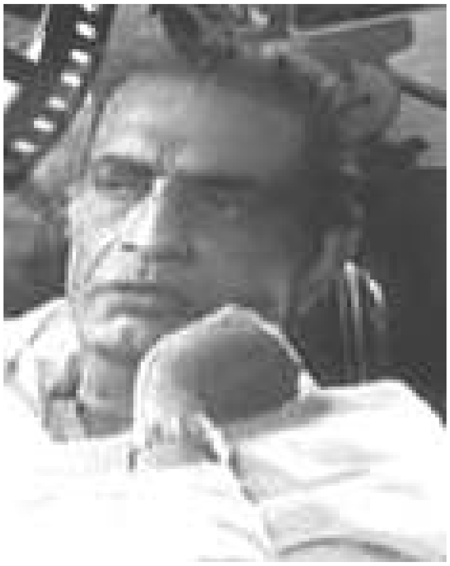

जन्मः सन् 1921, कोलकाता (पश्चिम बंगाल)

प्रमुख फ़िल्मेंः अपराजिता, अपू का संसार, जलसाघर, देवी चारुलता, महानगर, गोपी गायेन बाका बायेन, पथेर पांचाली *(बांग्ला)*; शतरंज के खिलाड़ी, सद्‌गति *(हिंदी)*

प्रमुख रचनाएँः प्रो. शंकु के कारनामे, सोने का किला, जहाँगीर की स्वर्ण मुद्रा, बादशाही अँगूठी आदि।

प्रमुख सम्मानः फ्रांस का लेजन डी ऑनर, पूरे जीवन की उपलब्धियों पर ऑस्कर और भारतरत्न सहित फ़िल्म जगत का हर महत्वपूर्ण सम्मान

मृत्यु : सन् 1992

भारतीय सिनेमा को कलात्मक ऊँचाई प्रदान करने वाले फ़िल्मकारों में सत्यजित राय अगली कतार में हैं। इनके निर्देशन में पहली फ़ीचर फ़िल्म **पथेर पांचाली** (बांग्ला) *1955 में प्रदर्शित हुई, उसने राय को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाला भारतीय निर्देशक बना दिया। इनकी फ़ीचर फ़िल्मों की कुल संख्या तीस के लगभग है। इन फ़िल्मों के ज़रिए इन्होंने फ़िल्म विधा को समृद्ध ही नहीं किया बल्कि इस माध्यम के बारे में निर्देशकों और आलोचकों के बीच एक समझ विकसित करने में भी अपना योगदान दिया। ध्यान देने की बात है कि इनकी ज़्यादातर फ़िल्में साहित्यिक*

कृतियों पर आधारित हैं। इनके पसंदीदा साहित्यकारों में बांग्ला के विभूति भूषण बंद्योपाध्याय से लेकर हिंदी के प्रेमचंद तक शामिल हैं। फ़िल्मों के पटकथा-लेखन, संगीत-संयोजन एवं निर्देशन के अलावा राय ने बांग्ला में बच्चों एवं किशोरों के लिए लेखन का काम भी बहुत ही संजीदगी के साथ किया है। इनकी लिखी कहानियों में जासूसी रोमांच के साथ-साथ पेड़-पौधे तथा पशु-पक्षी का सहज संसार भी है।

अपू के साथ ढाई साल नामक संस्मरण **पथेर पांचाली** फ़िल्म के अनुभवों से संबंधित है जिसका निर्माण भारतीय फ़िल्म के इतिहास में एक बहुत बड़ी घटना के रूप में दर्ज है। इससे फ़िल्म के सृजन और उसके व्याकरण से संबंधित कई बारीकियों का पता चलता है। यही नहीं, जो फ़िल्मी दुनिया हमें अपने ग्लैमर से चुंधियाती हुई जान पड़ती है, उसका एक ऐसा सच हमारे सामने आता है, जिसमें साधनहीनता के बीच अपनी कलादृष्टि को साकार करने का संघर्ष भी है। इस पाठ का भाषांतर बांग्ला मूल से **विलास गिते** ने किया है।

किसी फ़िल्मकार के लिए उसकी पहली फ़िल्म एक अबूझ पहेली होती है। बनने या न बन पाने की अमूर्त शंकाओं से घिरी। फ़िल्म पूरी होती है तो फ़िल्मकार जन्म लेता है। अपनी पहली फ़िल्म की रचना के दौरान हर फ़िल्मकार का अनुभव-संसार इतना रोमांचकारी होता है कि वह उसके जीवन में बचपन की स्मृतियों की तरह हमेशा जीवंत बना रहता है। इस अनुभव संसार में दाखिल होना उस बेहतरीन फ़िल्म से गुज़रने से कम नहीं है।

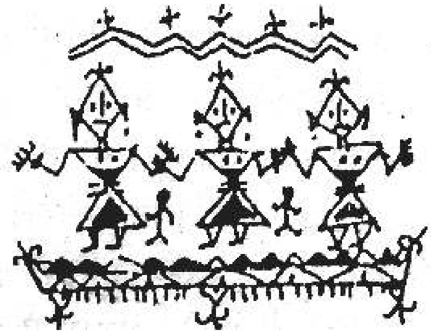

अपू के साथ ढाई साल

पथेर पांचाली फ़िल्म की शूटिंग का काम ढाई साल तक चला था! इस ढाई साल के कालखंड में हर रोज़ तो शूटिंग होती नहीं थी। मैं तब एक विज्ञापन कंपनी में नौकरी करता था। नौकरी के काम से जब फ़ुर्सत मिलती थी, तब शूटिंग करता था। मेरे पास उस समय पर्याप्त पैसे भी नहीं थे। पैसे खत्म होने के बाद, फिर से पैसे जमा होने तक शूटिंग स्थगित रखनी पड़ती थी।

शूटिंग का आरंभ करने से पहले फ़िल्म में काम करने के लिए कलाकार इकट्ठा करने का एक बड़ा आयोजन हुआ। विशेषकर अपू की भूमिका निभाने के लिए छह साल का लड़का मिल ही नहीं रहा था। आखिर मैंने अखबार में उस संदर्भ में एक इश्तहार दिया।

रासबिहारी एवेन्यू की एक बिल्डिंग में मैंने एक कमरा भाड़े पर लिया था, वहाँ पर बच्चे इंटरव्यू के लिए आते थे। बहुत-से लड़के आए, लेकिन अपू की भूमिका के लिए मुझे जिस तरह का लड़का चाहिए था, वैसा एक भी नहीं था। एक दिन एक लड़का आया। उसकी गर्दन पर लगा पाउडर देखकर मुझे शक हुआ। नाम पूछने पर नाजुक आवाज़ में वह बोला–'टिया'। उसके साथ आए उसके पिता जी से मैंने पूछा, 'क्या अभी-अभी इसके बाल कटवाकर यहाँ ले आए हैं?' वे सज्जन पकड़े गए। सच छिपा नहीं सके बोले, ''असल में यह मेरी बेटी है। अपू की भूमिका मिलने की आशा से इसके बाल कटवाकर आपके यहाँ ले आया हूँ।''

विज्ञापन देकर भी अपू की भूमिका के लिए सही तरह का लड़का न मिलने के कारण मैं तो बेहाल हो गया। आखिर एक दिन मेरी पत्नी छत से नीचे आकर मुझसे बोली, 'पास वाले मकान की छत पर एक लड़का देखा, ज़रा उसे बुलाइए तो!' आखिर हमारे पड़ोस के घर में रहने वाला लड़का सुबीर बनर्जी ही 'पथेर पांचाली' में 'अपू' बना। फ़िल्म का काम आगे भी ढाई साल चलने वाला है, इस बात का अंदाज़ा मुझे पहले नहीं था। इसलिए जैसे-जैसे दिन बीतने लगे, वैसे-वैसे मुझे डर लगने लगा। अपू और दुर्गा की भूमिका निभाने वाले बच्चे अगर ज़्यादा बड़े हो गए, तो फ़िल्म में वह दिखाई देगा! लेकिन मेरी खुश किस्मती से उस उम्र में बच्चे जितने बढ़ते हैं, उतने अपू और दुर्गा की भूमिका निभाने वाले बच्चे नहीं बढ़े। इंदिरा ठाकरुन की भूमिका निभाने वाली अस्सी साल उम्र की चुन्नीबाला देवी ढाई साल तक काम कर सकी, यह भी मेरे सौभाग्य की बात थी।

शूटिंग की शुरुआत में ही एक गड़बड़ हो गई। अपू और दुर्गा को लेकर हम कलकत्ता* से सत्तर मील पर पालसिट नाम के एक गाँव गए। वहाँ रेल-लाइन के पास काशफूलों से भरा एक मैदान था। अपू और दुर्गा पहली बार रेलगाड़ी देखते हैं— इस सीन की शूटिंग हमें करनी थी। यह सीन बहुत ही बड़ा था। एक दिन में उसकी शूटिंग पूरी होना नामुमकिन था। कम-से-कम दो दिन लग सकते थे। पहले दिन जगद्धात्री पूजा का त्योहार था। दुर्गा के पीछे-पीछे दौड़ते हुए अपू

पथेर पांचाली फ़िल्म का एक दृश्य

* *वर्तमान में कोलकाता*

काशफूलों के वन में पहुँचता है। सुबह शूटिंग शुरू करके शाम तक हमने सीन का आधा भाग चित्रित किया। निर्देशक, छायाकार, छोटे अभिनेता-अभिनेत्री हम सभी इस क्षेत्र में नवागत होने के कारण थोड़े बौराए हुए ही थे, बाकी का सीन बाद में चित्रित करने का निर्णय लेकर हम घर पहुँचे। सात दिन बाद शूटिंग के लिए उस जगह गए, तो वह जगह हम पहचान ही नहीं पाए! लगा, ये कहाँ आ गए हैं हम? कहाँ गए वे सारे काशफूल। बीच के सात दिनों में जानवरों ने वे सारे काशफूल खा डाले थे! अब अगर हम उस जगह बाकी आधे सीन की शूटिंग करते, तो पहले आधे सीन के साथ उसका मेल कैसे बैठता? उसमें से 'कंटिन्युइटी' नदारद हो जाती!

उस सीन के बाकी अंश की शूटिंग हमने उसके अगले साल शरद ऋतु में, जब फिर से वह मैदान काशफूलों से भर गया, तब की। उसी समय रेलगाड़ी के भी शॉट्स लिए। लेकिन रेलगाड़ी के इतने शॉट्स थे कि एक रेलगाड़ी से काम नहीं चला। एक के बाद एक तीन रेलगाड़ियों को हमने शूटिंग के लिए इस्तेमाल किया। सुबह से लेकर दोपहर तक कितनी रेलगाड़ियाँ उस लाइन पर से जाती हैं—यह पहले ही टाइम-टेबल देखकर जान लिया था। हर एक ट्रेन एक ही दिशा से आने वाली थी। जिस स्टेशन से वे रेलगाड़ियाँ आने वाली थीं, उस स्टेशन पर हमारी टीम के अनिल बाबू थे। रेलगाड़ी स्टेशन से निकलते समय अनिल बाबू भी इंजिन-ड्राइवर की केबिन में चढ़ते थे। क्योंकि गाड़ी के शूटिंग की जगह के पास आते ही बॉयलर में कोयला डालना ज़रूरी था, ताकि काला धुआँ निकले। सफ़ेद काशफूलों की पृष्ठभूमि पर अगर काला धुआँ नहीं आया, तो दृश्य कैसे अच्छा लगेगा?

'पथेर पांचाली' फ़िल्म में जब यह सीन दिखाई देता है, तब दर्शक पहचान नहीं पाते कि उस सीन में हमने तीन अलग-अलग रेलगाड़ियों का इस्तेमाल किया है। आज के डीज़ल और बिजली पर चलने वाले इंजनों के युग में वह दृश्य उस प्रकार से हम चित्रित न कर पाते।

आर्थिक अभाव के कारण बहुत दिनों तक हमें अलग-अलग समस्याओं से जूझना पड़ा। एक उदाहरण देता हूँ।

मूल उपन्यास में अपू और दुर्गा के 'भूलो' नामक पालतू कुत्ते का उल्लेख है। गाँव से ही हमने एक कुत्ता प्राप्त किया और वह भी हमसे ठीक बर्ताव करने लगा। फ़िल्म में एक दृश्य ऐसा है: अपू की माँ सर्वजया अपू को भात खिला रही है। भूलो कुत्ता दरवाज़े के सामने आँगन में बैठकर अपू का भात खाना देख रहा है। अपू के हाथ में छोटे तीर-कमान हैं। खाने में उसका पूरा ध्यान नहीं है। वह माँ की ओर पीठ करके बैठा हुआ है। वह तीर-कमान खेलने के लिए उतावला है।

अपू खाते-खाते ही कमान से तीर छोड़ता है। उसके बाद खाना छोड़कर तीर वापस लाने के लिए जाता है। सर्वजया बाएँ हाथ में वह थाली और दाहिने हाथ में निवाला लेकर बच्चे के पीछे दौड़ती है, लेकिन बच्चे के भाव देखकर जान जाती है कि वह अब कुछ नहीं खाएगा। भूलो कुत्ता भी खड़ा हो जाता है। उसका ध्यान सर्वजया के हाथ में जो भात की थाली है, उसकी ओर है।

इसके बाद वाले शॉट में हमें ऐसा दिखाना था कि सर्वजया थाली में बचा भात एक गमले में डाल देती है, और भूलो वह भात खाता है। लेकिन यह शॉट हम उस दिन ले नहीं सके, क्योंकि सूरज की रोशनी खत्म हुई और उसी के साथ हमारे पास जो पैसे थे, वे भी खत्म हुए!

छह महीने बाद, फिर से पैसे इकट्ठा होने पर हम फिर बोडाल गाँव में उस सीन का बाकी अंश चित्रित करने के लिए गए। लेकिन वहाँ जाने पर समाचार मिला कि भूलो कुत्ता अब इस दुनिया में नहीं है। अब क्या होगा?

खबर मिली कि भूलो जैसा दिखने वाला और एक कुत्ता गाँव में है। अब लाओ पकड़ के उस कुत्ते को!

सचमुच! यह कुत्ता भूलो जैसा ही दिखता था। वह भूलो से बहुत ही मिलता-जुलता था। उसके शरीर का रंग तो भूलो जैसा बादामी था ही, उसकी दुम का छोर भी भूलो के दुम की छोर जैसा ही सफ़ेद था। आखिर यह फेंका हुआ भात उसने खाया, और हमारे उस दृश्य की शूटिंग पूरी हुई। फ़िल्म देखते समय यह बात किसी के भी ध्यान में नहीं आती कि एक ही सीन में हमने 'भूलो' की भूमिका में दो अलग-अलग कुत्तों से काम लिया है!

और सिर्फ़ कुत्ते के संदर्भ में ही नहीं, आदमी के संदर्भ से भी ऐसी ही समस्या से 'पथेर पांचाली' की शूटिंग के दौरान उलझना पड़ा था।

श्रीनिवास नामक घूमते मिठाईवाले से मिठाई खरीदने के लिए अपू और दुर्गा के पास पैसे नहीं हैं। वे तो मिठाई खरीद नहीं सकते, इसलिए अपू और दुर्गा उस मिठाईवाले के पीछे-पीछे मुखर्जी के घर के पास जाते हैं। मुखर्जी अमीर आदमी हैं। वे तो मिठाई ज़रूर खरीदेंगे और उनका मिठाई खरीदना देखने में ही अपू और दुर्गा की खुशी है।

इस दृश्य का कुछ अंश चित्रित होने के बाद हमारी शूटिंग कुछ महीनों के लिए स्थगित हो गई। पैसे हाथ आने पर फिर जब हम उस गाँव में शूटिंग करने के लिए गए, तब खबर मिली कि श्रीनिवास मिठाईवाले की भूमिका जो सज्जन कर रहे थे, उनका देहांत हो गया है। अब पहले वाले श्रीनिवास का मिलता-जुलता दूसरा आदमी कहाँ से मिलेगा?

आखिर श्रीनिवास की भूमिका के लिए हमें जो सज्जन मिले, उनका चेहरा पहले वाले श्रीनिवास से मिलता-जुलता नहीं था, लेकिन शरीर से वे पहले श्रीनिवास जैसे ही थे। उन्हीं पर हमने दृश्य का बाकी अंश चित्रित किया। फ़िल्म में दिखाई देता है कि एक नंबर श्रीनिवास बाँसबन से बाहर आता है और अगले शॉट में दो नंबर श्रीनिवास कैमरे की ओर पीठ करके मुखर्जी के घर के गेट के अंदर जाता है। 'पथेर पांचाली' फ़िल्म अनेक लोगों ने एक से अधिक बार देखी है, लेकिन श्रीनिवास के मामले में यह बात किसी के ध्यान में आई है, ऐसा मैंने नहीं सुना!

इस श्रीनिवास के सीन में ही एक शॉट के वक्त हम बिलकुल तंग आ गए थे और वह भी उस भूलो कुत्ते की वजह से। छोटे से पुकुर के पार मिठाईवाला खड़ा है, और इस पार, अपने घर के पास अपू-दुर्गा मिठाईवाले की ओर ललचाई नज़र से देख रहे हैं। 'क्यों, मिठाई खरीदेंगे?' मिठाईवाले के इस सवाल का वे 'ना' में जवाब देते हैं, तब मिठाईवाला मुखर्जी के घर की ओर जाने लगता है। दुर्गा अपू से कहती

है, 'चल, हम भी जाएँगे।' भाई-बहन दौड़ने लगते हैं और उसी समय पीछे झुरमुट में बैठा भूलो कुत्ता भी छलांग लगाकर उनके साथ दौड़ने लगता है।

हमें ऐसा सीन लेना था, लेकिन मुश्किल यह कि यह कुत्ता कोई हॉलीवुड का सिखाया हुआ नहीं था। इसलिए यह बताना मुश्किल ही था कि वह अपू-दुर्गा के साथ भागता जाएगा या नहीं। कुत्ते के मालिक से हमने कहा था, 'अपू-दुर्गा जब भागने लगते हैं, तब तुम अपने कुत्ते को उन दोनों के पीछे भागने के लिए कहना।' लेकिन शूटिंग के वक्त दिखाई दिया कि वह कुत्ता मालिक की आज्ञा का पालन नहीं कर रहा है। इधर हमारा कैमरा चालू ही था। कीमती फ़िल्म ज़ाया हो रही थी और मुझे बार-बार चिल्लाना पड़ रहा था-'कट्! कट्!'

अब यहाँ धीरज रखने के सिवा दूसरा उपाय नहीं था। अगर कुत्ता बच्चों के पीछे दौड़ा, तो ही वह उनका पालतू कुत्ता लग सकता था। आखिर मैंने दुर्गा से अपने हाथ में थोड़ी मिठाई छिपाने के लिए कहा, और वह कुत्ते को दिखाकर दौड़ने को कहा। इस बार कुत्ता उनके पीछे भागा, और हमें हमारी इच्छा के अनुसार शॉट मिला।

पैसों की कमी के कारण ही बारिश का दृश्य चित्रित करने में बहुत मुश्किल आई थी। बरसात के दिन आए और गए, लेकिन हमारे पास पैसे नहीं थे, इस कारण शूटिंग बंद थी। आखिर जब हाथ में पैसे आए, तब अक्टूबर का महीना शुरू हुआ

था। शरद ऋतु में, निरभ्र आकाश के दिनों में भी शायद बरसात होगी, इस आशा से मैं अपू और दुर्गा की भूमिका करने वाले बच्चे, कैमरा और तकनीशियन को साथ लेकर हर रोज़ देहात में जाकर बैठा रहता था। आकाश में एक भी काला बादल दिखाई दिया, तो मुझे लगता था कि बरसात होगी। मैं इच्छा करता, वह बादल बहुत बड़ा हो जाए और बरसने लगे।

आखिर एक दिन हुआ भी वैसा ही। शरद ऋतु में भी आसमान में बादल छा गए और धुआँधार बारिश शुरू हुई। उसी बारिश में भीगकर दुर्गा भागती हुई आई और उसने पेड़ के नीचे भाई के पास आसरा लिया। भाई-बहन एक-दूसरे से चिपककर बैठे। दुर्गा कहने लगी–'नेबूर-पाता करमचा, हे वृष्टी घरे जा!*' बरसात, ठंड, अपू का बदन खुला, प्लास्टिक के कपड़े से ढके कैमरे को आँख लगाकर देखा, तो वह ठंड लगने के कारण सिहर रहा था। शॉट पूरा होने के बाद दूध में थोड़ी ब्रांडी मिलाकर दी और भाई-बहन का शरीर गरम किया। जिन्होंने 'पथेर पांचाली' फ़िल्म देखी है, वे जानते ही हैं कि वह शॉट बहुत अच्छा चित्रित हुआ है।

शूटिंग की दृष्टि से गोपाल ग्राम की तुलना में बोडाल गाँव हमें अधिक उपयुक्त लगा। अपू-दुर्गा का घर, अपू का स्कूल, गाँव के मैदान, खेत, पुकुर, आम के पेड़, बाँस की झुरमुट ये सभी बातें बोडाल गाँव में और आस-पास हमें मिलीं। अब उस गाँव में बिजली आ गई है, पक्के घर, पक्के रास्ते बने हैं। उस ज़माने में वे नहीं थे।

उस गाँव में हमें बहुत बार जाना पड़ा। बहुत बार रहना भी पड़ा, इसलिए वहाँ के लोगों से भी हमारा परिचय हुआ। उन लोगों में एक बहुत अद्‌भुत सज्जन थे। उन्हें हम 'सुबोध दा' कहकर पुकारते थे। वे साठ-पैंसठ साल के थे। उनका माथा गंजा था। वे अकेले ही एक झोंपड़े में रहते और दरवाज़े पर बैठकर खुद ही से कुछ-न-कुछ बड़बड़ाते रहते थे। हम उस गाँव में एक फ़िल्म की शूटिंग करने वाले हैं यह जानकर वे गुस्सा हो गए। हमें देखने पर वे चिल्लाते–'फ़िल्म वाले आए हैं,

---

** नीबू के पत्ते खट्टे हो गये है, हे बादल अब घर जाओ (वापिस जाओ)*

मारो उनको लाठियों से!' पूछताछ करने पर लोगों ने बताया कि वे मानसिक रूप से बीमार थे। बाद में 'सुबोध दा' से हमारा अच्छा परिचय हुआ। वे हमें पास बुलाकर, दरवाज़े में बैठकर वायलिन पर लोकगीतों की धुनें बजाकर सुनाते थे। बीच-बीच में हमारे कानों में फुसफुसाते, 'वो साइकिल पे जा रहा आदमी देख रहे हो न, वह कौन है, जानते हो? वह है रुजवेल्ट[1]! पक्का पाजी उनके मत से दूसरा एक था चर्चिल[2], एक था हिटलर[3], तो एक था अब्दुल गफ्फार खान[4]! सभी उनके मतानुसार पाजी थे, उनके दुश्मन थे।

हम जिस घर में शूटिंग करते थे, उसके पड़ोस में एक धोबी रहता था। उसके कारण हमें बहुत परेशानी होती थी। वह भी थोड़ा-सा पागल था और कभी भी 'भाइयों और बहनों!' कहकर किसी राजकीय मुद्दे पर लंबा भाषण शुरू करता था। फ़ुर्सत के समय में उसके भाषण पर हमें कुछ आपत्ति नहीं थी, लेकिन अगर शूटिंग के समय वह भाषण शुरू करता, तो हमारे साउंड का काम प्रभावित हो सकता था। उस धोबी के रिश्तेदारों ने अगर हमारी मदद न की होती, तो वह धोबी सचमुच ही एक सिरदर्द बन जाता!

जिस घर में हम 'पथेर पांचाली' की शूटिंग करते थे, वह घर हमें एकदम ध्वस्त

---

1. रुजवेल्ट (1882-1945)- पूरा नाम फ्रैंकलिन डिलॉनो रुजवेल्ट। अमेरिका के 32वें राष्ट्रपति (1933 से 1945 तक) इन्हें एफ.डी.आर.भी कहा जाता था। इन्हीं के कार्यकाल में एटमबम के मैनहटन प्रोजेक्ट पर काम शुरू हुआ था।

2. चर्चिल (1874-1965)- द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटेन के प्रधानमंत्री थे। 1953 में इन्हें साहित्य का नोबेल पुरस्कार भी मिला था।

3. हिटलर (1889-1945)-जर्मनी के तानाशाह चांसलर (1933-1945 तक) तथा नाज़ीपार्टी के लीडर थे।

4. अब्दुल गफ्फार खान (1890-1988)– ये पख्तूनों (अफगान) के नेता थे और भारत और पाकिस्तान के विभाजन के खिलाफ थे। जिसके कारण इन्हे अपना अंतिम समय पाकिस्तान की जेल में गुज़ारना पड़ा। इन्हे सीमांत गांधी के नाम से भी जाना जाता है।

अवस्था में मिला था। उसके मालिक कलकत्ता में रहते थे। उनसे हमने वह घर शूटिंग के लिए भाड़े पर लिया था। उस घर की मरम्मत करके उसे शूटिंग के लिए ठीक-ठाक करवाने में हमें लगभग एक महीना लगा।

उस घर के एक हिस्से में एक के पास एक ऐसे कुछ कमरे थे। वे हमने फ़िल्म में नहीं दिखाए। उन कमरों में हम अपना सामान रखा करते थे। एक कमरे में रिकॉर्डिंग मशीन लेकर हमारे साउंड-रिकॉर्डिस्ट भूपेन बाबू बैठा करते थे। हम शूटिंग के वक्त उन्हें देख नहीं सकते थे, फिर भी उनकी आवाज़ सुन सकते थे। हर शॉट के बाद हम उनसे पूछते, 'साउंड ठीक है न?' भूपेन बाबू इस पर 'हाँ' या 'ना' जवाब देते।

एक दिन शॉट के बाद मैंने साउंड के बारे में उनसे सवाल किया, लेकिन कुछ भी जवाब नहीं आया। फिर एक बार पूछा, 'भूपेन बाबू, साउंड ठीक है न?' इस पर भी जवाब न आने पर मैं उनके कमरे में गया, तो देखा कि एक बड़ा-सा साँप उस कमरे की खिड़की से नीचे उतर रहा था। वह साँप देखकर भूपेन बाबू सहम गए थे और उनकी बोलती बंद हो गई थी।

वह साँप हमने वहाँ आने पर कुछ ही दिनों के बाद देखा था। उसे मार डालने की इच्छा होने पर भी स्थानीय लोगों के मना करने के कारण हम उसे मार नहीं सके। वह 'वास्तुसर्प' था और बहुत दिनों से वहाँ रह रहा था।...

अभ्यास

पाठ के साथ

1. ***पथेर पांचाली*** फ़िल्म की शूटिंग का काम ढाई साल तक क्यों चला?
2. ***अब अगर हम उस जगह बाकी आधे सीन की शूटिंग करते, तो पहले आधे सीन के साथ उसका मेल कैसे बैठता? उसमें से 'कंटिन्युइटी' नदारद हो जाती*** – इस कथन के पीछे क्या भाव है?
3. किन दो दृश्यों में दर्शक यह पहचान नहीं पाते कि उनकी शूटिंग में कोई तरकीब अपनाई गई है?

4. 'भूलो' की जगह दूसरा कुत्ता क्यों लाया गया? उसने फ़िल्म के किस दृश्य को पूरा किया?
5. फ़िल्म में श्रीनिवास की क्या भूमिका थी और उनसे जुड़े बाकी दृश्यों को उनके गुज़र जाने के बाद किस प्रकार फ़िल्माया गया?
6. बारिश का दृश्य चित्रित करने में क्या मुश्किल आई और उसका समाधान किस प्रकार हुआ?
7. किसी फ़िल्म की शूटिंग करते समय फ़िल्मकार को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उन्हें सूचीबद्ध कीजिए।

पाठ के आस-पास

1. तीन प्रसंगों में राय ने कुछ इस तरह की टिप्पणियाँ की हैं कि ***दर्शक पहचान नहीं पाते कि...*** या ***फ़िल्म देखते हुए इस ओर किसी का ध्यान नहीं गया कि...*** इत्यादि। ये प्रसंग कौन से हैं, चर्चा करें और इसपर भी विचार करें कि शूटिंग के समय की असलियत फ़िल्म को देखते समय कैसे छिप जाती है।
2. मान लीजिए कि आपको अपने विद्यालय पर एक डॉक्यूमैंट्री फ़िल्म बनानी है। इस तरह की फ़िल्म में आप किस तरह के दृश्यों को चित्रित करेंगे? फ़िल्म बनाने से पहले और बनाते समय किन बातों पर ध्यान देंगे?
3. ***पथेर पांचाली*** फ़िल्म में इंदिरा ठाकरून की भूमिका निभाने वाली अस्सी साल की चुन्नीबाला देवी ढाई साल तक काम कर सकीं। यदि आधी फ़िल्म बनने के बाद चुन्नीबाला देवी की अचानक मृत्यु हो जाती तो सत्यजित राय क्या करते? चर्चा करें।
4. पठित पाठ के आधार पर यह कह पाना कहाँ तक उचित है कि फ़िल्म को सत्यजित राय एक कला-माध्यम के रूप में देखते हैं, व्यावसायिक-माध्यम के रूप में नहीं?

भाषा की बात

1. पाठ में कई स्थानों पर तत्सम, तद्भव, क्षेत्रीय सभी प्रकार के शब्द एक साथ सहज भाव से आए हैं। ऐसी भाषा का प्रयोग करते हुए अपनी प्रिय फ़िल्म पर एक अनुच्छेद लिखें।
2. हर क्षेत्र में कार्य करने या व्यवहार करने की अपनी निजी या विशिष्ट प्रकार की शब्दावली होती है। जैसे ***अपू के साथ ढाई साल*** पाठ में फ़िल्म से जुड़े शब्द शूटिंग, शॉट, सीन आदि। फ़िल्म से जुड़ी शब्दावली में से किन्हीं दस की सूची बनाइए।
3. नीचे दिए गए शब्दों के पर्याय इस पाठ में ढूँढ़िए और उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए–
इश्तहार, खुशकिस्मती, सीन, वृष्टि, जमा

शब्द-छवि

कालखंड	- समय का एक हिस्सा
स्थगित	- रोका हुआ, कुछ समय के लिए मुल्तवी किया हुआ
भाड़े पर	- किराए पर
कंटिन्युइटी	- निरंतरता, तारतम्यता
शॉट्स	- दृश्यों को शूट करना
साउंड रिकॉर्डिस्ट	- आवाज़ की रिकॉर्डिंग करने वाला
पुकुर	- पोखर
नवागत होना (किसी क्षेत्र में)	- नए क्षेत्र या विषय को जानना
नदारद	- गायब
भात	- पके हुए चावल
बॉयलर	- रेलगाड़ी के इंजन का वह हिस्सा, जिसमें कोयला डाला जाता है
वास्तुसर्प	- वह सर्प जो घर में अक्सर दिखाई देता है। मान्यता के अनुसार उसे कुलदेवता (बांग्ला में वास्तुसर्प) कहते हैं

जो लिखना था, वह लिखा गया। अब खुलासा बात यह है कि एक बार 'शो' और 'ड्यूटी' का मुकाबिला कीजिए।

(शिवशंभु के चिट्ठे)

बालमुकुंद गुप्त

जन्मः सन् 1865, ग्राम गुड़ियानी, ज़िला रोहतक *(हरियाणा)*

प्रमुख संपादन : अखबार-ए-चुनार, हिंदुस्तान, हिंदी बंगवासी, भारतमित्र आदि

प्रमुख रचनाएँ : शिवशंभु के चिट्ठे, चिट्ठे और खत, खेल तमाशा

मृत्यु : सन् 1907

गुप्त जी की आरंभिक शिक्षा उर्दू में हुई। बाद में उन्होंने हिंदी सीखी। विधिवत् शिक्षा मिडिल तक प्राप्त की, मगर स्वाध्याय से काफ़ी ज्ञान अर्जित किया। वे खड़ी बोली और आधुनिक हिंदी साहित्य को स्थापित करने वाले लेखकों में से एक थे। उन्हें भारतेंदु-युग और द्विवेदी-युग के बीच की कड़ी के रूप में देखा जाता है।

बालमुकुंद गुप्त राष्ट्रीय नवजागरण के सक्रिय पत्रकार थे। उस दौर के अन्य पत्रकारों की तरह वे साहित्य-सृजन में भी सक्रिय रहे। पत्रकारिता उनके लिए स्वाधीनता-संग्राम का हथियार थी। यही कारण है कि उनके लेखन में निर्भीकता पूरी तरह मौजूद है। साथ ही उसमें व्यंग्य-विनोद का भी पुट दिखाई पड़ता है। उन्होंने बांग्ला और संस्कृत की कुछ रचनाओं के अनुवाद भी किए। वे शब्दों के अद्‌भुत पारखी थे। ***अनस्थिरता*** *शब्द की शुद्धता को लेकर उन्होंने महावीर प्रसाद द्विवेदी से लंबी बहस की। इस तरह के अन्य अनेक शब्दों पर उन्होंने बहस चलाई।*

विदाई-संभाषण उनकी सर्वाधिक चर्चित व्यंग्य कृति ***'शिवशंभु के चिट्ठे'*** *का एक अंश है। यह पाठ वायसराय कर्ज़न (जो 1899-1904 एवं 1904-1905 तक दो बार वायसराय रहे) के शासन में भारतीयों की स्थिति का खुलासा करता है। कहने को उनके शासन काल में विकास के बहुत सारे कार्य हुए, नए-नए आयोग बनाए गए, किंतु उन सबका उद्देश्य शासन में गोरों का वर्चस्व स्थापित करना एवं साथ ही इस देश के संसाधनों का अंग्रेज़ों के हित में सर्वोत्तम उपयोग करना था। हर स्तर पर कर्ज़न ने अंग्रेज़ों का वर्चस्व स्थापित करने की कोशिश की। वे सरकारी निरंकुशता के पक्षधर थे। लिहाजा प्रेस की स्वतंत्रता तक पर उन्होंने प्रतिबंध लगा दिया। अंततः कौंसिल में मनपसंद अंग्रेज़ सदस्य नियुक्त करवाने के मुद्दे पर उन्हें देश-विदेश दोनों जगहों पर नीचा देखना पड़ा। क्षुब्ध होकर उन्होंने इस्तीफ़ा दे दिया और वापस इंग्लैंड चले गए।*

पाठ में भारतीयों की बेबसी, दुख एवं लाचारी को व्यंग्यात्मक ढंग से लॉर्ड कर्ज़न की लाचारी से जोड़ने की कोशिश की गई है। साथ ही यह दिखाने की कोशिश की गई है कि शासन के आततायी रूप से हर किसी को कष्ट होता है- चाहे वह सामान्य जनता हो या फिर लॉर्ड कर्ज़न जैसा वायसराय। यह उस समय लिखा गया गद्य का नमूना है, जब प्रेस पर पाबंदी का दौर चल रहा था। ऐसी स्थिति में विनोदप्रियता, चुलबुलापन, संजीदगी, नवीन भाषा-प्रयोग एवं रवानगी के साथ ही यह एक साहसिक गद्य का भी नमूना है।

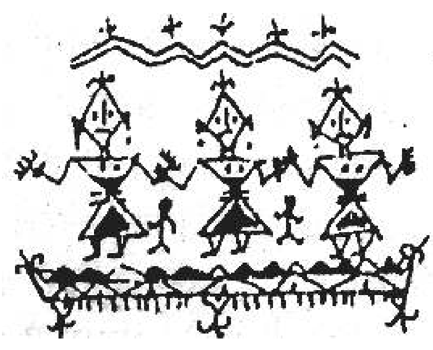

विदाई-संभाषण

माइ लॉर्ड! अंत को आपके शासन-काल का इस देश में अंत हो गया। अब आप इस देश से अलग होते हैं। इस संसार में सब बातों का अंत है। इससे आपके शासन-काल का भी अंत होता, चाहे आपकी एक बार की कल्पना के अनुसार आप यहाँ के चिरस्थाई वाइसराय भी हो जाते। किंतु इतनी जल्दी वह समय पूरा हो जाएगा, ऐसा विचार न आप ही का था, न इस देश के निवासियों का। इससे जान पड़ता है कि आपके और यहाँ के निवासियों के बीच में कोई तीसरी शक्ति और भी है, जिस पर यहाँ वालों का तो क्या, आपका भी काबू नहीं है।

बिछड़न-समय बड़ा करुणोत्पादक होता है। आपको बिछड़ते देखकर आज हृदय में बड़ा दुख है। माइ लॉर्ड! आपके दूसरी बार इस देश में आने से भारतवासी किसी प्रकार प्रसन्न न थे। वे यही चाहते थे कि आप फिर न आवें। पर आप आए और उससे यहाँ के लोग बहुत ही दुखित हुए। वे दिन-रात यही मनाते थे कि जल्द श्रीमान् यहाँ से पधारें। पर अहो! आज आपके जाने पर हर्ष की जगह विषाद होता है। इसी से जाना कि बिछड़न-समय बड़ा करुणोत्पादक होता है, बड़ा पवित्र, बड़ा निर्मल और बड़ा कोमल होता है। वैर-भाव छूटकर शांत रस का आविर्भाव उस समय होता है।

माइ लॉर्ड का देश देखने का इस दीन ब्राह्मण को कभी इस जन्म में सौभाग्य नहीं हुआ। इससे नहीं जानता कि वहाँ बिछड़ने के समय लोगों का क्या भाव होता है। पर इस देश के पशु-पक्षियों को भी बिछड़ने के समय उदास देखा है। एक बार शिवशंभु के दो गायें थीं। उनमें एक अधिक बलवाली थी। वह कभी-कभी अपने सीगों की

टक्कर से दूसरी कमजोर गाय को गिरा देती थी। एक दिन वह टक्कर मारने वाली गाय पुरोहित को दे दी गई। देखा कि दुर्बल गाय उसके चले जाने से प्रसन्न नहीं हुई, वरंच उस दिन वह भूखी खड़ी रही, चारा छुआ तक नहीं। माइ लॉर्ड! जिस देश के पशुओं के बिछड़ते समय यह दशा होती है, वहाँ मनुष्यों की कैसी दशा हो सकती है, इसका अंदाज़ लगाना कठिन नहीं है।

आगे भी इस देश में जो प्रधान शासक आए, अंत में उनको जाना पड़ा। इससे आपका जाना भी परंपरा की चाल से कुछ अलग नहीं है, तथापि आपके शासन-काल का नाटक घोर दुखांत है, और अधिक आश्चर्य की बात यह है कि दर्शक तो क्या, स्वयं सूत्रधार भी नहीं जानता था कि उसने जो खेल सुखांत समझकर खेलना आरंभ किया था, वह दुखांत हो जावेगा। जिसके आदि में सुख था, मध्य में सीमा से बाहर सुख था, उसका अंत ऐसे घोर दुख के साथ कैसे हुआ? आह! घमंडी खिलाड़ी समझता है कि दूसरों को अपनी लीला दिखाता हूँ। किंतु परदे के पीछे एक और ही लीलामय की लीला हो रही है, यह उसे खबर नहीं!

इस बार बंबई* में उतरकर माइ लॉर्ड! आपने जो इरादे ज़ाहिर किए थे, ज़रा देखिए तो उनमें से कौन-कौन पूरे हुए? आपने कहा था कि यहाँ से जाते समय भारतवर्ष को ऐसा कर जाऊँगा कि मेरे बाद आने वाले बड़े लाटों को वर्षों तक कुछ करना न पड़ेगा, वे कितने ही वर्षों सुख की नींद सोते रहेंगे। किंतु बात उलटी हुई। आपको स्वयं इस बार बेचैनी उठानी पड़ी है और इस देश में जैसी अशांति आप फैला चले हैं, उसके मिटाने में आपके पद पर आने वालों को न जाने कब तक नींद और भूख हराम करना पड़ेगा। इस बार आपने अपना बिस्तरा गरम राख पर रखा है और भारतवासियों को गरम तवे पर पानी की बूँदों की भाँति नचाया है। आप स्वयं भी खुश न हो सके और यहाँ की प्रजा को सुखी न होने दिया, इसका लोगों के चित्त पर बड़ा ही दुख है।

---

* *वर्तमान में मुंबई*

विचारिए तो, क्या शान आपकी इस देश में थी और अब क्या हो गई! कितने ऊँचे होकर आप कितने नीचे गिरे! अलिफ़ लैला के अलहदीन ने चिराग रगड़कर और अबुलहसन ने बगदाद के खलीफ़ा की गद्दी पर आँख खोलकर वह शान न देखी, जो दिल्ली-दरबार में आपने देखी। आपकी और आपकी लेडी की कुर्सी सोने की थी और आपके प्रभु महाराज के छोटे भाई और उनकी पत्नी की चाँदी की। आप दाहिने थे, वह बाएँ, आप प्रथम थे, वह दूसरे। इस देश के सब रईसों ने आपको सलाम पहले किया और बादशाह के भाई को पीछे। जुलूस में आपका हाथी सबसे आगे और सबसे ऊँचा था; हौदा, चँवर, छत्र आदि सबसे बढ़-चढ़कर थे। सारांश यह है कि ईश्वर और महाराज एडवर्ड के बाद इस देश में आप ही का एक दर्जा था। किंतु अब देखते हैं कि जंगी लाट के मुकाबले में आपने पटखनी खाई, सिर के बल नीचे आ रहे! आपके स्वदेश में वही ऊँचे माने गए, आपको साफ़ नीचा देखना पड़ा! पद-त्याग की धमकी से भी ऊँचे न हो सके।

आप बहुत धीर-गंभीर प्रसिद्ध थे। उस सारी धीरता-गंभीरता का आपने इस बार कौंसिल में बेकानूनी कानून पास करते और कनवोकेशन वक्तृता देते समय दिवाला निकाल दिया। यह दिवाला तो इस देश में हुआ। उधर विलायत में आपके बार-बार इस्तीफ़ा देने की धमकी ने प्रकाश कर दिया कि जड़ हिल गई है। अंत में वहाँ भी आपको दिवालिया होना पड़ा और धीरता-गंभीरता के साथ दृढ़ता को भी तिलांजलि देनी पड़ी। इस देश के हाकिम आपकी ताल पर नाचते थे, राजा-महाराजा डोरी हिलाने से सामने हाथ बाँधे हाजिर होते थे। आपके एक इशारे में प्रलय होती थी। कितने ही राजों को मट्टी के खिलौने की भाँति आपने तोड़-फोड़ डाला। कितने ही मट्टी-काठ के खिलौने आपकी कृपा के जादू से बड़े-बड़े पदाधिकारी बन गए। आपके इस इशारे में इस देश की शिक्षा पायमाल हो गई, स्वाधीनता उड़ गई। बंग देश के सिर पर आरह रखा गया। आह, इतने बड़े माइ लॉर्ड का यह दर्जा हुआ कि फौजी अफ़सर उनके इच्छित पद पर नियत न हो सका और उनको उसी गुस्से के मारे इस्तीफ़ा दाखिल करना पड़ा, वह भी मंजूर हो गया। उनका रखाया एक आदमी नौकर न रखा, उलटा उन्हीं को निकल जाने का हुक्म मिला!

जिस प्रकार आपका बहुत ऊँचे चढ़कर गिरना यहाँ के निवासियों को दुखित कर रहा है, गिरकर पड़ा रहना उससे भी अधिक दुखित करता है। आपका पद छूट गया तथापि आपका पीछा नहीं छूटा है। एक अदना क्लर्क जिसे नौकरी छोड़ने के लिए एक महीने का नोटिस मिल गया हो नोटिस की अवधि को बड़ी घृणा से काटता है। आपको इस समय अपने पद पर रहना कहाँ तक पसंद है—यह आप ही जानते होंगे। अपनी दशा पर आपको कैसी घृणा आती है, इस बात के जान लेने का इन देशवासियों को अवसर नहीं मिला, पर पतन के पीछे इतनी उलझन में पड़ते उन्होंने किसी को नहीं देखा।

माइ लॉर्ड, एक बार अपने कामों की ओर ध्यान दीजिए। आप किस काम को आए थे और क्या कर चले। शासक-प्रजा के प्रति कुछ तो कर्तव्य होता है, यह बात आप निश्चित मानते होंगे। सो कृपा करके बतलाइए, क्या कर्तव्य आप इस देश की प्रजा के साथ पालन कर चले! क्या आँख बंद करके मनमाने हुक्म चलाना और किसी की कुछ न सुनने का नाम ही शासन है? क्या प्रजा की बात पर कभी कान न देना और उसको दबाकर उसकी मर्जी के विरुद्ध जिद्द से सब काम किए चले जाना ही शासन कहलाता है? एक काम तो ऐसा बतलाइए, जिसमें आपने जिद्द छोड़कर प्रजा की बात पर ध्यान दिया हो। कैसर[1] और ज़ार[2] भी घेरने-घोटने से प्रजा की बात सुन लेते हैं पर आप एक मौका तो बताइए, जिसमें किसी अनुरोध या प्रार्थना सुनने के लिए प्रजा के लोगों को आपने अपने निकट फटकने दिया हो और उनकी बात सुनी हो। नादिरशाह[3] ने जब दिल्ली में कत्लेआम किया तो आसिफ़जाह के तलवार

1. कैसर - *रोमन तानाशाह जूलियस सीज़र के नाम से बना शब्द जो तानाशाह जर्मन शासकों (962 से 1876 तक) के लिए प्रयोग होता था।*

2. ज़ार - *यह भी जूलियस सीज़र से बना शब्द है जो विशेष रूप से रूस के तानाशाह शासकों (16वीं सदी से 1917 तक) के लिए प्रयुक्त होता था। इस शब्द का पहली बार बुल्गेरियाई शासक (913 में) के लिए प्रयोग हुआ था।*

3. नादिरशाह- *(1688-1747) 1736 से 1747 तक ईरान के शाह रहे। अपने तानाशाही स्वरूप के कारण 'नेपोलियन ऑफ़ परशिया' के नाम से भी जाने जाते थे। पानीपत के तीसरे युद्ध में अहमदशाह अब्दाली को नादिरशाह ने ही आक्रमण के लिए भेजा था।*

लार्ड कर्ज़न
(भारत के वायसराय 1899-1904 तथा 1904-1905 तक)

गले में डालकर प्रार्थना करने पर उसने कत्लेआम उसी दम रोक दिया। पर आठ करोड़ प्रजा के गिड़गिड़ाकर विच्छेद न करने की प्रार्थना पर आपने ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। इस समय आपकी शासन-अवधि पूरी हो गई है तथापि बंग-विच्छेद किए बिना घर जाना आपको पसंद नहीं है! नादिर से भी बढ़कर आपकी जिद्द है। क्या समझते हैं कि आपकी जिद्द से प्रजा के जी में दुख नहीं होता? आप विचारिए तो एक आदमी को आपके कहने पर पद न देने से आप नौकरी छोड़े जाते हैं, इस देश की प्रजा को भी यदि कहीं जाने की जगह होती, तो क्या वह नाराज होकर इस देश को छोड़ न जाती?

यहाँ की प्रजा ने आपकी जिद्द का फल यहीं देख लिया। उसने देख लिया कि आपकी जिस जिद्द ने इस देश की प्रजा को पीड़ित किया, आपको भी उसने कम पीड़ा न दी, यहाँ तक कि आप स्वयं उसका शिकार हुए। यहाँ की प्रजा वह प्रजा है, जो अपने दुख और कष्टों की अपेक्षा परिणाम का अधिक ध्यान रखती है। वह जानती है कि संसार में सब चीज़ों का अंत है। दुख का समय भी एक दिन निकल जावेगा, इसी से सब दुखों को झेलकर, पराधीनता सहकर भी वह जीती है। माइ लॉर्ड! इस कृतज्ञता की भूमि की महिमा आपने कुछ न समझी और न यहाँ की दीन प्रजा की श्रद्धा-भक्ति अपने साथ ले जा सके, इसका बड़ा दुख है।

इस देश के शिक्षितों को तो देखने की आपकी आँखों को ताब नहीं। अनपढ़-गूँगी प्रजा का नाम कभी-कभी आपके मुँह से निकल जाया करता है। उसी अनपढ़ प्रजा में नर सुलतान नाम के एक राजकुमार का गीत गाया जाता है। एक बार अपनी विपद

के कई साल सुलतान ने नरवरगढ़ नाम के एक स्थान में काटे थे। वहाँ चौकीदारी से लेकर उसे एक ऊँचे पद तक काम करना पड़ा था। जिस दिन घोड़े पर सवार होकर वह उस नगर से विदा हुआ, नगर-द्वार से बाहर आकर उस नगर को जिस रीति से उसने अभिवादन किया था, वह सुनिए। उसने आँखों में आँसू भरकर कहा, "प्यारे नरवरगढ़! मेरा प्रणाम ले। आज मैं तुझसे जुदा होता हूँ। तू मेरा अन्नदाता है। अपनी विपद के दिन मैंने तुझमें काटे हैं। तेरे ऋण का बदला मैं गरीब सिपाही नहीं दे सकता। भाई नरवरगढ़! यदि मैंने जानबूझकर एक दिन भी अपनी सेवा में चूक की हो, यहाँ की प्रजा की शुभ चिंता न की हो, यहाँ की स्त्रियों को माता और बहन की दृष्टि से न देखा हो तो मेरा प्रणाम न ले, नहीं तो प्रसन्न होकर एक बार मेरा प्रणाम ले और मुझे जाने की आज्ञा दे!" माइ लॉर्ड! जिस प्रजा में ऐसे राजकुमार का गीत गाया जाता है, उसके देश से क्या आप भी चलते समय कुछ संभाषण करेंगे? क्या आप कह सकेंगे, "अभागे भारत! मैंने तुझसे सब प्रकार का लाभ उठाया और तेरी बदौलत वह शान देखी, जो इस जीवन में असंभव है। तूने मेरा कुछ नहीं बिगाड़ा; पर मैंने तेरे बिगाड़ने में कुछ कमी न की। संसार के सबसे पुराने देश! जब तक मेरे हाथ में शक्ति थी, तेरी भलाई की इच्छा मेरे जी में न थी। अब कुछ शक्ति नहीं है, जो तेरे लिए कुछ कर सकूँ। पर आशीर्वाद करता हूँ कि तू फिर उठे और अपने प्राचीन गौरव और यश को फिर से लाभ करे। मेरे बाद आने वाले तेरे गौरव को समझें।" आप कर सकते हैं और यह देश आपकी पिछली सब बातें भूल सकता है, पर इतनी उदारता माइ लॉर्ड में कहाँ?

अभ्यास

पाठ के साथ

1. ***शिवशंभु की दो गायों*** की कहानी के माध्यम से लेखक क्या कहना चाहता है?
2. ***आठ करोड़ प्रजा के गिड़गिड़ाकर विच्छेद न करने की प्रार्थना पर आपने ज़रा भी ध्यान***

नहीं दिया–यहाँ किस ऐतिहासिक घटना की ओर संकेत किया गया है?

3. कर्ज़न को इस्तीफ़ा क्यों देना पड़ गया?
4. ***बिचारिए तो, क्या शान आपकी इस देश में थी और अब क्या हो गई! कितने ऊँचे होकर आप कितने नीचे गिरे!*** – आशय स्पष्ट कीजिए।
5. ***आपके और यहाँ के निवासियों के बीच में कोई तीसरी शक्ति और भी है***– यहाँ ***तीसरी शक्ति*** किसे कहा गया है?

पाठ के आस-पास

1. पाठ का यह अंश ***शिवशंभु के चिट्ठे*** से लिया गया है। शिवशंभु नाम की चर्चा पाठ में भी हुई है। बालमुकुंद गुप्त ने इस नाम का उपयोग क्यों किया होगा?
2. ***नादिर से भी बढ़कर आपकी जिद्द है***– कर्ज़न के संदर्भ में क्या आपको यह बात सही लगती है? पक्ष या विपक्ष में तर्क दीजिए।
3. ***क्या आँख बंद करके मनमाने हुक्म चलाना और किसी की कुछ न सुनने का नाम ही शासन है?***– इन पंक्तियों को ध्यान में रखते हुए शासन क्या है? इस पर चर्चा कीजिए।
4. इस पाठ में आए अलिफ़ लैला, अलहदीन, अबुल हसन और बगदाद के खलीफ़ा के बारे में सूचना एकत्रित कर कक्षा में चर्चा कीजिए।

गौर करने की बात

क. ***इससे आपका जाना भी परंपरा की चाल से कुछ अलग नहीं है, तथापि आपके शासनकाल का नाटक घोर दुखांत है, और अधिक आश्चर्य की बात यह है कि दर्शक तो क्या, स्वयं सूत्रधार भी नहीं जानता था कि उसने जो खेल सुखांत समझकर खेलना आरंभ किया था, वह दुखांत हो जावेगा।***

ख. ***यहाँ की प्रजा ने आपकी जिद्द का फल यहीं देख लिया। उसने देख लिया कि आपकी जिस जिद्द ने इस देश की प्रजा को पीड़ित किया, आपको भी उसने कम पीड़ा न दी, यहाँ तक कि आप स्वयं उसका शिकार हुए।***

भाषा की बात

1. ***वे दिन-रात यही मनाते थे कि जल्द श्रीमान् यहाँ से पधारें।*** सामान्य तौर पर ***आने के लिए पधारें*** शब्द का इस्तेमाल किया जाता है। यहाँ ***पधारें*** शब्द का क्या अर्थ है?
2. पाठ में से कुछ वाक्य नीचे दिए गए हैं, जिनमें भाषा का विशिष्ट प्रयोग (भारतेंदु युगीन हिंदी) हुआ है। उन्हें सामान्य हिंदी में लिखिए–

क. *आगे भी इस देश में जो प्रधान शासक आए, अंत को उनको जाना पड़ा।*

ख. *आप किस को आए थे और क्या कर चले?*

ग. *उनका रखाया एक आदमी नौकर न रखा।*

घ. *पर आशीर्वाद करता हूँ कि तू फिर उठे और अपने प्राचीन गौरव और यश को फिर से लाभ करे।*

शब्द-छवि

चिरस्थायी	-	हमेशा रहने वाला, टिकाऊ
करुणोत्पादक	-	करुणा उत्पन्न करने वाला
दुखित	-	पीड़ित, जिसे कष्ट हो
विषाद	-	दुख, उदासी
आविर्भाव	-	प्रकट होना
दुखांत	-	जिसका अंत दुखद हो
सूत्रधार	-	जिसके हाथ में संचालन की बागडोर हो
सुखांत	-	जिसका अंत सुखद हो
लीलामय	-	नाटकीय
सारांश	-	निष्कर्ष, निचोड़
पटखनी	-	चित्त कर देना
तिलांजलि	-	त्याग देना
पायमाल (फा. पामाल)	-	दुर्दशाग्रस्त, नष्ट
आरह	-	आरा
अदना	-	छोटा-सा, हेय
विच्छेद	-	टूटना
ताब	-	सामर्थ्य

अंतर की घुमड़ती वेदना को आँखों की राह बाहर निकाल लेने पर मनुष्य जो भी निश्चय करता है वे भावुक क्षणों की अपेक्षा अधिक विवेकपूर्ण होते हैं।
(दाज्यू)

शेखर जोशी

जन्म: सन् 1932, अल्मोड़ा (उत्तरांचल)
प्रमुख रचनाएँ: कोसी का घटवार, साथ के लोग, दाज्यू, हलवाहा, नौरंगी बीमार है *(कहानी-संग्रह)*; एक पेड़ की याद *(शब्दचित्र-संग्रह)*
सम्मान: पहल सम्मान

पिछली सदी का छठवाँ दशक हिंदी कहानी के लिए युगांतकारी समय था। एक साथ कई युवा कहानीकारों ने अब तक चली आती कहानियों के रंग-ढंग से अलग तरह की कहानियाँ लिखनी शुरू कीं और देखते-देखते कहानी की विधा साहित्य-जगत के केंद्र में आ खड़ी हुई। उस पूरे उठान को नाम दिया गया ***नई कहानी आंदोलन****। इस आंदोलन के बीच उभरी हुई प्रतिभाओं में शेखर जोशी का स्थान अन्यतम है। उनकी कहानियाँ* ***नई कहानी आंदोलन*** *के प्रगतिशील पक्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। समाज का मेहनतकश और सुविधाहीन तबका उनकी कहानियों में जगह पाता है। निहायत सहज एवं आडंबरहीन भाषा-शैली में वे सामाजिक यथार्थ के बारीक नुक्तों को पकड़ते और प्रस्तुत करते हैं। उनके रचना-संसार से गुज़रते हुए समकालीन जनजीवन की बहुविध विडंबनाओं को महसूस किया जा सकता है। ऐसा करने में उनकी प्रगतिशील जीवन-दृष्टि और यथार्थ बोध का बड़ा योगदान रहा है।*

शेखर जी की कहानियाँ विभिन्न भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेज़ी, पोलिश और रूसी में भी अनूदित हो चुकी हैं। उनकी प्रसिद्ध कहानी **दाज्यू** *पर चिल्ड्रंस फ़िल्म सोसाइटी द्वारा फ़िल्म का निर्माण भी हुआ है।*

गलता लोहा *शेखर जोशी की कहानी-कला का एक प्रतिनिधि नमूना है। समाज के जातिगत विभाजन पर कई कोणों से टिप्पणी करने वाली यह कहानी इस बात का उदाहरण है कि शेखर जोशी के लेखन में अर्थ की गहराई का दिखावा और बड़बोलापन जितना ही कम है, वास्तविक अर्थ-गांभीर्य उतना ही अधिक। लेखक की किसी मुखर टिप्पणी के बगैर ही पूरे पाठ से गुज़रते हुए हम यह देख पाते हैं कि एक मेधावी, किंतु निर्धन ब्राह्मण युवक मोहन किन परिस्थितियों के चलते उस मनोदशा तक पहुँचता है, जहाँ उसके लिए जातीय अभिमान बेमानी हो जाता है। सामाजिक विधि-निषेधों को ताक पर रखकर वह धनराम लोहार के आफर पर बैठता ही नहीं, उसके काम में भी अपनी कुशलता दिखाता है। मोहन का व्यक्तित्व जातिगत आधार पर निर्मित झूठे भाईचारे की जगह मेहनतकशों के सच्चे भाईचारे की प्रस्तावना करता प्रतीत होता है, मानो लोहा गलकर एक नया आकार ले रहा हो।*

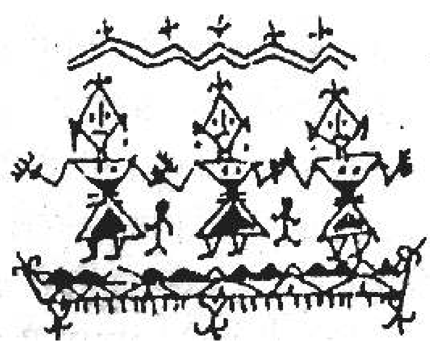

गलता लोहा

मोहन के पैर अनायास ही शिल्पकार टोले की ओर मुड़ गए। उसके मन के किसी कोने में शायद धनराम लोहार के आफर की वह अनुगूँज शेष थी जिसे वह पिछले तीन-चार दिनों से दुकान की ओर जाते हुए दूर से सुनता रहा था। निहाई पर रखे लाल गर्म लोहे पर पड़ती हथौड़े की धप्-धप् आवाज़, ठंडे लोहे पर लगती चोट से उठता ठनकता स्वर और निशाना साधने से पहले खाली निहाई पर पड़ती हथौड़ी की खनक जिन्हें वह दूर से ही पहचान सकता था।

लंबे बेंटवाले हँसुवे को लेकर वह घर से इस उद्देश्य से निकला था कि अपने खेतों के किनारे उग आई काँटेदार झाड़ियों को काट-छाँटकर साफ़ कर आएगा। बूढ़े वंशीधर जी के बूते का अब यह सब काम नहीं रहा। यही क्या, जन्म भर जिस पुरोहिताई के बूते पर उन्होंने घर-संसार चलाया था, वह भी अब वैसे कहाँ कर पाते हैं! यजमान लोग उनकी निष्ठा और संयम के कारण ही उनपर श्रद्धा रखते हैं लेकिन बुढ़ापे का जर्जर शरीर अब उतना कठिन श्रम और व्रत-उपवास नहीं झेल पाता। सुबह-सुबह जैसे उससे सहारा पाने की नीयत से ही उन्होंने गहरा नि:श्वास लेकर कहा था–

'आज गणनाथ जाकर चंद्रदत्त जी के लिए रुद्रीपाठ करना था, अब मुश्किल ही लग रहा है। यह दो मील की सीधी चढ़ाई अब अपने बूते की नहीं। एकाएक ना भी नहीं कहा जा सकता, कुछ समझ में नहीं आता!'

मोहन उनका आशय न समझता हो ऐसी बात नहीं लेकिन पिता की तरह ऐसे अनुष्ठान कर पाने का न उसे अभ्यास ही है और न वैसी गति। पिता की बातें सुनकर भी उसने उनका भार हलका करने का कोई सुझाव नहीं दिया। जैसे हवा में बात कह दी गई थी वैसे ही अनुत्तरित रह गई।

पिता का भार हलका करने के लिए वह खेतों की ओर चला था लेकिन हँसुवे की धार पर हाथ फेरते हुए उसे लगा वह पूरी तरह कुंद हो चुकी है।

धनराम अपने बाएँ हाथ से धौंकनी फूँकता हुआ दाएँ हाथ से भट्ठी में गरम होते लोहे को उलट-पलट रहा था और मोहन भट्ठी से दूर हटकर एक खाली कनिस्तर के ऊपर बैठा उसकी कारीगरी को पारखी निगाहों से देख रहा था।

'मास्टर त्रिलोक सिंह तो अब गुज़र गए होंगे,' मोहन ने पूछा।

वे दोनों अब अपने बचपन की दुनिया में लौट आए थे। धनराम की आँखों में एक चमक-सी आ गई। वह बोला, 'मास्साब भी क्या आदमी थे लला! अभी पिछले साल ही गुज़रे। सच कहूँ, आखिरी दम तक उनकी छड़ी का डर लगा ही रहता था।'

दोनों हो-हो कर हँस दिए। कुछ क्षणों के लिए वे दोनों ही जैसे किसी बीती हुई दुनिया में लौट गए।

...गोपाल सिंह की दुकान से हुक्के का आखिरी कश खींचकर त्रिलोक सिंह स्कूल की चहारदीवारी में उतरते हैं।

थोड़ी देर पहले तक धमाचौकड़ी मचाते, उठा-पटक करते और बांज के पेड़ों की टहनियों पर झूलते बच्चों को जैसे साँप सूँघ गया है। कड़े स्वर में वह पूछते हैं, 'प्रार्थना कर ली तुम लोगों ने?'

यह जानते हुए भी कि यदि प्रार्थना हो गई होती तो गोपाल सिंह की दुकान तक उनका समवेत स्वर पहुँचता ही, त्रिलोक सिंह घूर-घूरकर एक-एक लड़के को देखते हैं। फिर वही कड़कदार आवाज़, 'मोहन नहीं आया आज?'

मोहन उनका चहेता शिष्य था। पुरोहित खानदान का कुशाग्र बुद्धि का बालक पढ़ने में ही नहीं, गायन में भी बेजोड़। त्रिलोक सिंह मास्टर ने उसे पूरे स्कूल का मॉनीटर बना रखा था। वही सुबह-सुबह, 'हे प्रभो आनंददाता! ज्ञान हमको दीजिए।' का पहला स्वर उठाकर प्रार्थना शुरू करता था।

मोहन को लेकर मास्टर त्रिलोक सिंह को बड़ी उम्मीदें थीं। कक्षा में किसी छात्र को कोई सवाल न आने पर वही सवाल वे मोहन से पूछते और उनका अनुमान सही निकलता। मोहन ठीक-ठीक उत्तर देकर उन्हें संतुष्ट कर देता और तब वे उस फिसड्डी बालक को दंड देने का भार मोहन पर डाल देते।

'पकड़ इसका कान, और लगवा इससे दस उठक-बैठक,' वे आदेश दे देते। धनराम भी उन अनेक छात्रों में से एक था जिसने त्रिलोक सिंह मास्टर के आदेश पर अपने हमजोली मोहन के हाथों कई बार बेंत खाए थे या कान खिंचवाए थे। मोहन के प्रति थोड़ी-बहुत ईर्ष्या रहने पर भी धनराम प्रारंभ से ही उसके प्रति स्नेह और आदर का भाव रखता था। इसका एक कारण शायद यह था कि बचपन से ही मन में बैठा दी गई जातिगत हीनता के कारण धनराम ने कभी मोहन को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं समझा बल्कि वह इसे मोहन का अधिकार ही समझता रहा था। बीच-बीच में त्रिलोक सिंह मास्टर का यह कहना कि मोहन एक दिन बहुत बड़ा आदमी बनकर स्कूल का और उनका नाम ऊँचा करेगा, धनराम के लिए किसी और तरह से सोचने की गुंजाइश ही नहीं रखता था।

और धनराम! वह गाँव के दूसरे खेतिहर या मज़दूर परिवारों के लड़कों की तरह किसी प्रकार तीसरे दर्जे तक ही स्कूल का मुँह देख पाया था। त्रिलोक सिंह मास्टर कभी-कभार ही उस पर विशेष ध्यान देते थे। एक दिन अचानक ही उन्होंने पूछ लिया था, 'धनुवाँ! तेरह का पहाड़ा सुना तो!'

बारह तक का पहाड़ा तो उसने किसी तरह याद कर लिया था लेकिन तेरह का ही पहाड़ा उसके लिए पहाड़ हो गया था।

'तेरै एकम तेरै
तेरै दूणी चौबीस'

सटाक्! एक संटी उसकी पिंडलियों पर मास्साब ने लगाई थी कि वह टूट गई। गुस्से में उन्होंने आदेश दिया, 'जा! नाले से एक अच्छी मज़बूत संटी तोड़कर ला, फिर तुझे तेरह का पहाड़ा याद कराता हूँ।'

त्रिलोक सिंह मास्टर का यह सामान्य नियम था। सजा पाने वाले को ही अपने लिए हथियार भी जुटाना होता था; और ज़ाहिर है, बलि का बकरा अपने से अधिक मास्टर के संतोष को ध्यान में रखकर टहनी का चुनाव ऐसे करता जैसे वह अपने लिए नहीं बल्कि किसी दूसरे को दंडित करने के लिए हथियार का चुनाव कर रहा हो।

धनराम की मंदबुद्धि रही हो या मन में बैठा हुआ डर कि पूरे दिन घोटा लगाने पर भी उसे तेरह का पहाड़ा याद नहीं हो पाया था। छुट्टी के समय जब मास्साब ने उससे दुबारा पहाड़ा सुनाने को कहा तो तीसरी सीढ़ी तक पहुँचते-पहुँचते वह फिर लड़खड़ा गया था। लेकिन इस बार मास्टर त्रिलोक सिंह ने उसके लाए हुए बेंत का उपयोग करने की बजाय ज़बान की चाबुक लगा दी थी, 'तेरे दिमाग में तो लोहा भरा है रे! विद्या का ताप कहाँ लगेगा इसमें?' अपने थैले से पाँच-छह दराँतियाँ निकालकर उन्होंने धनराम को धार लगा लाने के लिए पकड़ा दी थीं। किताबों की विद्या का ताप लगाने की सामर्थ्य धनराम के पिता की नहीं थी। धनराम हाथ-पैर चलाने लायक हुआ ही था कि बाप ने उसे धौंकनी फूँकने या सान लगाने के कामों में उलझाना शुरू कर दिया और फिर धीरे-धीरे हथौड़े से लेकर घन चलाने की विद्या सिखाने लगा। फ़र्क इतना ही था कि जहाँ मास्टर त्रिलोक सिंह उसे अपनी पसंद का बेंत चुनने की छूट दे देते थे वहाँ गंगाराम इसका चुनाव स्वयं करते थे और ज़रा-सी गलती होने पर छड़, बेंत, हत्था जो भी हाथ लग जाता उसी से अपना प्रसाद दे देते। एक दिन गंगाराम अचानक चल बसे तो धनराम ने सहज भाव से उनकी विरासत सँभाल ली और पास-पड़ोस के गाँव वालों को याद नहीं रहा वे कब गंगाराम के आफर को धनराम का आफर कहने लगे थे।

प्राइमरी स्कूल की सीमा लाँघते ही मोहन ने छात्रवृत्ति प्राप्त कर त्रिलोक सिंह मास्टर की भविष्यवाणी को किसी हद तक सिद्ध कर दिया तो साधारण हैसियत वाले यजमानों की पुरोहिताई करने वाले वंशीधर तिवारी का हौसला बढ़ गया और वे भी अपने पुत्र को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाने का स्वप्न देखने लगे। पीढ़ियों से चले आते पैतृक धंधे ने उन्हें निराश कर दिया था। दान-दक्षिणा के बूते पर वे किसी

तरह परिवार का आधा पेट भर पाते थे। मोहन पढ़-लिखकर वंश का दारिद्र्य मिटा दे यह उनकी हार्दिक इच्छा थी। लेकिन इच्छा होने भर से ही सब-कुछ नहीं हो जाता। आगे की पढ़ाई के लिए जो स्कूल था वह गाँव से चार मील दूर था। दो मील की चढ़ाई के अलावा बरसात के मौसम में रास्ते में पड़ने वाली नदी की समस्या अलग थी। तो भी वंशीधर ने हिम्मत नहीं हारी और लड़के का नाम स्कूल में लिखा दिया। बालक मोहन लंबा रास्ता तय कर स्कूल जाता और छुट्टी के बाद थका-माँदा घर लौटता तो पिता पुराणों की कथाओं से विद्याव्यसनी बालकों का उदाहरण देकर उसे उत्साहित करने की कोशिश करते रहते।

वर्षा के दिनों में नदी पार करने की कठिनाई को देखते हुए वंशीधर ने नदी पार के गाँव में एक यजमान के घर पर मोहन का डेरा तय कर दिया था। घर के अन्य बच्चों की तरह मोहन खा-पीकर स्कूल जाता और छुट्टियों में नदी उतार पर होने पर गाँव लौट आता था। संयोग की बात, एक बार छुट्टी के पहले दिन जब नदी का पानी उतार पर ही था और मोहन कुछ घसियारों के साथ नदी पार कर घर आ रहा था तो पहाड़ी के दूसरी ओर भारी वर्षा होने के कारण अचानक नदी का पानी बढ़ गया। पहले नदी की धारा में झाड़-झंखाड़ और पात-पतेल आने शुरू हुए तो अनुभवी घसियारों ने तेज़ी से पानी को काटकर आगे बढ़ने की कोशिश की लेकिन किनारे पहुँचते-न-पहुँचते मटमैले पानी का रेला उन तक आ ही पहुँचा। वे लोग किसी प्रकार सकुशल इस पार पहुँचने में सफल हो सके। इस घटना के बाद वंशीधर घबरा गए और बच्चे के भविष्य को लेकर चिंतित रहने लगे।

बिरादरी के एक संपन्न परिवार का युवक रमेश उन दिनों लखनऊ से छुट्टियों में गाँव आया हुआ था। बातों-बातों में वंशीधर ने मोहन की पढ़ाई के संबंध में उससे अपनी चिंता प्रकट की तो उसने न केवल अपनी सहानुभूति जतलाई बल्कि उन्हें सुझाव दिया कि वे मोहन को उसके साथ ही लखनऊ भेज दें। घर में जहाँ चार प्राणी हैं एक और बढ़ जाने में कोई अंतर नहीं पड़ता, बल्कि बड़े शहर में रहकर वह अच्छी तरह पढ़-लिख सकेगा।

वंशीधर को जैसे रमेश के रूप में साक्षात् भगवान मिल गए हों। उनकी आँखों में पानी छलछलाने लगा। भरे गले से वे केवल इतना ही कह पाए कि बिरादरी का यही सहारा होता है।

छुट्टियाँ शेष होने पर रमेश वापिस लौटा तो माँ-बाप और अपनी गाँव की दुनिया से बिछुड़कर सहमा-सहमा-सा मोहन भी उसके साथ लखनऊ आ पहुँचा। अब मोहन की ज़िंदगी का एक नया अध्याय शुरू हुआ। घर की दोनों महिलाओं, जिन्हें वह चाची और भाभी कह कर पुकारता था, का हाथ बँटाने के अलावा धीरे-धीरे वह मुहल्ले की सभी चाचियों और भाभियों के लिए काम-काज में हाथ बँटाने का साधन बन गया।

'मोहन! थोड़ा दही तो ला दे बाज़ार से।'

'मोहन! ये कपड़े धोबी को दे तो आ।'

'मोहन! एक किलो आलू तो ला दे।'

औसत दफ़्तरी बड़े बाबू की हैसियत वाले रमेश के लिए मोहन को अपना भाई-बिरादर बतलाना अपने सम्मान के विरुद्ध जान पड़ता था और उसे घरेलू नौकर से अधिक हैसियत वह नहीं देता था, इस बात को मोहन भी समझने लगा था। थोड़ी-बहुत हीला-हवाली करने के बाद रमेश ने निकट के ही एक साधारण से स्कूल में उसका नाम लिखवा दिया। लेकिन एकदम नए वातावरण और रात-दिन के काम के बोझ के कारण गाँव का वह मेधावी छात्र शहर के स्कूली जीवन में अपनी कोई पहचान नहीं बना पाया। उसका जीवन एक बँधी-बँधाई लीक पर चलता रहा। साल में एक बार गरमियों की छुट्टी में गाँव जाने का मौका भी तभी मिलता जब रमेश या उसके घर का कोई प्राणी गाँव जाने वाला होता वरना उन छुट्टियों को भी अगले दरजे की तैयारी के नाम पर उसे शहर में ही गुज़ार देना पड़ता था। अगले दरजे की तैयारी तो बहाना भर थी, सवाल रमेश और उसकी गृहस्थी की सुविधा-असुविधा का था। मोहन ने परिस्थितियों से समझौता कर लिया था क्योंकि और कोई चारा भी नहीं था। घरवालों को अपनी वास्तविक स्थिति बतलाकर वह दुखी नहीं करना चाहता था। वंशीधर उसके सुनहरे भविष्य के सपने देख रहे थे।

आठवीं कक्षा की पढ़ाई समाप्त कर छुट्टियों में मोहन गाँव आया हुआ था। जब वह लौटकर लखनऊ पहुँचा तो उसने अनुभव किया कि रमेश के परिवार के सभी लोग जैसे उसकी आगे की पढ़ाई के पक्ष में नहीं हैं। बात घूम-फिरकर जिस ओर से उठती वह इसी मुद्दे पर ज़रूर खत्म हो जाती कि हज़ारों-लाखों बी.ए.,एम.ए. मारे-मारे बेकार फिर रहे हैं। ऐसी पढ़ाई से अच्छा तो आदमी कोई हाथ का काम सीख ले। रमेश ने अपने किसी परिचित के प्रभाव से उसे एक तकनीकी स्कूल में भर्ती करा दिया। मोहन की दिनचर्या में कोई विशेष अंतर नहीं आया था। वह पहले की तरह स्कूल और घरेलू काम-काज में व्यस्त रहता। धीरे-धीरे डेढ़-दो वर्ष का यह समय भी बीत गया और मोहन अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए कारखानों और फैक्टरियों के चक्कर लगाने लगा।

वंशीधर से जब भी कोई मोहन के विषय में पूछता तो वे उत्साह के साथ उसकी पढ़ाई की बाबत बताने लगते और मन-ही-मन उनको विश्वास था कि वह एक दिन बड़ा अफ़सर बनकर लौटेगा। लेकिन जब उन्हें वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो न सिर्फ़ गहरा दुख हुआ बल्कि वे लोगों को अपने स्वप्नभंग की जानकारी देने का साहस नहीं जुटा पाए।

धनराम ने भी एक दिन उनसे मोहन के बारे में पूछा था। घास का एक तिनका तोड़कर दाँत खोदते हुए उन्होंने बताया था कि उसकी सेक्रेटेरियट में नियुक्ति हो गई है और शीघ्र ही विभागीय परीक्षाएँ देकर वह बड़े पद पर पहुँच जाएगा। धनराम को त्रिलोक सिंह मास्टर की भविष्यवाणी पर पूरा यकीन था– ऐसा होना ही था उसने सोचा। दाँतों के बीच में तिनका दबाकर असत्य भाषण का दोष न लगने का संतोष लेकर वंशीधर आगे बढ़ गए थे। धनराम के शब्द, 'मोहन लला बचपन से ही बड़े बुद्धिमान थे', उन्हें बहुत देर तक कचोटते रहे।

त्रिलोक सिंह मास्टर की बातों के साथ-साथ बचपन से लेकर अब तक के जीवन के कई प्रसंगों पर मोहन और धनराम बातें करते रहे। धनराम ने मोहन के

हँसुवे के फाल को बेंत से निकालकर भट्ठी में तपाया और मन लगाकर उसकी धार गढ़ दी। गरम लोहे को हवा में ठंडा होने में काफ़ी समय लग गया था, धनराम ने उसे वापिस बेंत पहनाकर मोहन को लौटाते हुए जैसे अपनी भूल-चूक के लिए माफ़ी माँगी हो–

'बेचारे पंडित जी को तो फ़ुर्सत नहीं रहती लेकिन किसी के हाथ भिजवा देते तो मैं तत्काल बना देता।'

मोहन ने उत्तर में कुछ नहीं कहा लेकिन हँसुवे को हाथ में लेकर वह फिर वहीं बैठा रहा जैसे उसे वापिस जाने की कोई जल्दी न रही हो।

सामान्य तौर से ब्राह्मण टोले के लोगों का शिल्पकार टोले में उठना-बैठना नहीं होता था। किसी काम-काज के सिलसिले में यदि शिल्पकार टोले में आना ही पड़ा तो खड़े-खड़े बातचीत निपटा ली जाती थी। ब्राह्मण टोले के लोगों को बैठने के लिए कहना भी उनकी मर्यादा के विरुद्ध समझा जाता था। पिछले कुछ वर्षों से शहर में जा रहने के बावजूद मोहन गाँव की इन मान्यताओं से अपरिचित हो ऐसा संभव नहीं था। धनराम मन–ही–मन उसके व्यवहार से असमंजस में पड़ा था लेकिन प्रकट में उसने कुछ नहीं कहा और अपना काम करता रहा।

लोहे की एक मोटी छड़ को भट्ठी में गलाकर धनराम गोलाई में मोड़ने की कोशिश कर रहा था। एक हाथ से सँड़सी पकड़कर जब वह दूसरे हाथ से हथौड़े की चोट मारता तो निहाई पर ठीक घाट में सिरा न फँसने के कारण लोहा उचित ढंग से मुड़ नहीं पा रहा था। मोहन कुछ देर तक उसे काम करते हुए देखता रहा फिर जैसे अपना संकोच त्यागकर उसने दूसरी पकड़ से लोहे को स्थिर कर लिया और धनराम के हाथ से हथौड़ा लेकर नपी-तुली चोट मारते, अभ्यस्त हाथों से धौंकनी फूँककर लोहे को दुबारा भट्ठी में गरम करते और फिर निहाई पर रखकर उसे ठोकते-पीटते सुघड़ गोले का रूप दे डाला।

मोहन का यह हस्तक्षेप इतनी फुर्ती और आकस्मिक ढंग से हुआ था कि धनराम को चूक का मौका ही नहीं मिला। वह अवाक् मोहन की ओर देखता रहा। उसे मोहन

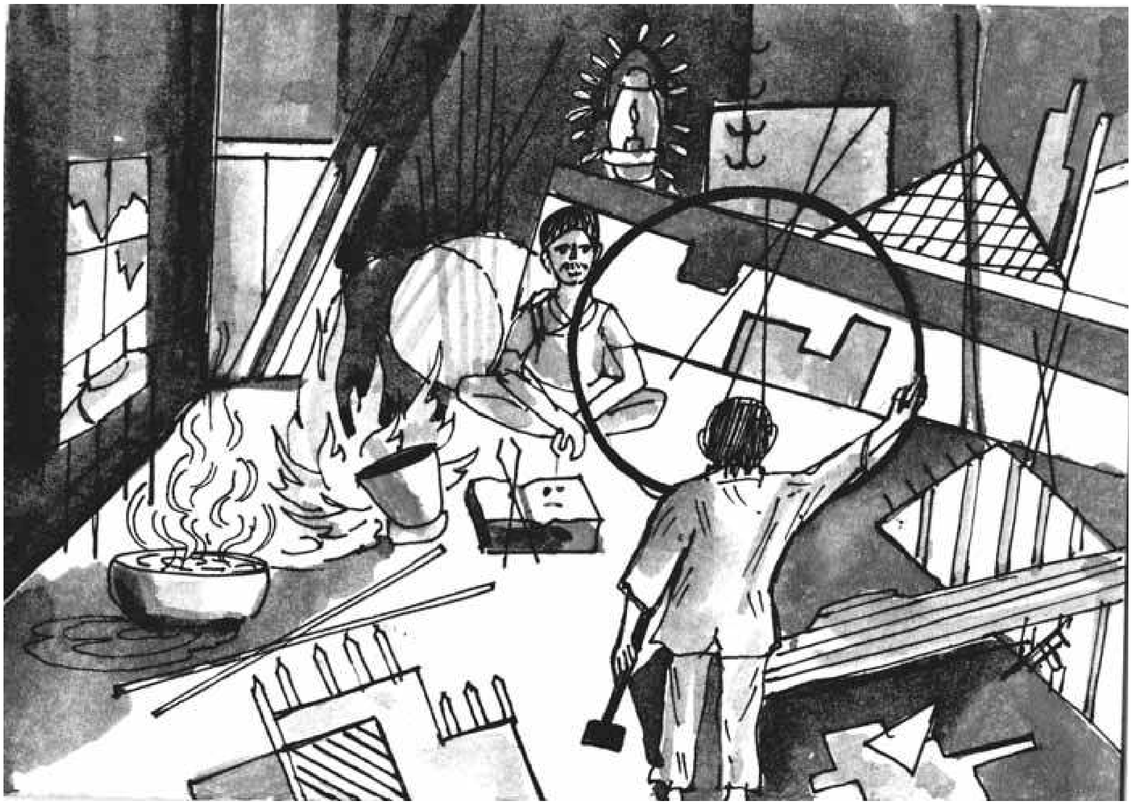

की कारीगरी पर उतना आश्चर्य नहीं हुआ जितना पुरोहित खानदान के एक युवक का इस तरह के काम में, उसकी भट्ठी पर बैठकर, हाथ डालने पर हुआ था। वह शंकित दृष्टि से इधर-उधर देखने लगा।

धनराम की संकोच, असमंजस और धर्म-संकट की स्थिति से उदासीन मोहन संतुष्ट भाव से अपने लोहे के छल्ले की त्रुटिहीन गोलाई को जाँच रहा था। उसने धनराम की ओर अपनी कारीगरी की स्वीकृति पाने की मुद्रा में देखा। उसकी आँखों में एक सर्जक की चमक थी– जिसमें न स्पर्धा थी और न ही किसी प्रकार की हार-जीत का भाव।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. कहानी के उस प्रसंग का उल्लेख करें, जिसमें किताबों की विद्या और घन चलाने की विद्या का ज़िक्र आया है।
2. धनराम मोहन को अपना प्रतिद्वंद्वी क्यों नहीं समझता था?
3. धनराम को मोहन के किस व्यवहार पर आश्चर्य होता है और क्यों?
4. मोहन के लखनऊ आने के बाद के समय को लेखक ने उसके ***जीवन का एक नया अध्याय*** क्यों कहा है?
5. मास्टर त्रिलोक सिंह के किस कथन को लेखक ने ***ज़बान के चाबुक*** कहा है और क्यों?
6. (1) ***बिरादरी का यही सहारा होता है।***
   क. किसने किससे कहा?
   ख. किस प्रसंग में कहा?
   ग. किस आशय से कहा?
   घ. क्या कहानी में यह आशय स्पष्ट हुआ है?

   (2) ***उसकी आँखों में एक सर्जक की चमक थी***– कहानी का यह वाक्य-
   क. किसके लिए कहा गया है?
   ख. किस प्रसंग में कहा गया है?
   ग. यह पात्र-विशेष के किन चारित्रिक पहलुओं को उजागर करता है?

पाठ के आस-पास

1. गाँव और शहर, दोनों जगहों पर चलने वाले मोहन के जीवन-संघर्ष में क्या फ़र्क है? चर्चा करें और लिखें।
2. एक अध्यापक के रूप में त्रिलोक सिंह का व्यक्तित्व आपको कैसा लगता है? अपनी समझ में उनकी खूबियों और खामियों पर विचार करें।
3. ***गलता लोहा*** कहानी का अंत एक खास तरीके से होता है। क्या इस कहानी का कोई अन्य अंत हो सकता है? चर्चा करें।

भाषा की बात

1. पाठ में निम्नलिखित शब्द लौहकर्म से संबंधित हैं। किसका क्या प्रयोजन है? शब्द के सामने लिखिए–
    1. धौंकनी ....
    2. दराँती ....
    3. सँड़सी ....
    4. आफर ....
    5. हथौड़ा ....
2. पाठ में ***काट-छाँटकर*** जैसे कई संयुक्त क्रिया शब्दों का प्रयोग हुआ है। कोई पाँच शब्द पाठ में से चुनकर लिखिए और अपने वाक्यों में प्रयोग कीजिए।
3. ***बूते का*** प्रयोग पाठ में तीन स्थानों पर हुआ है उन्हें छाँटकर लिखिए और जिन संदर्भों में उनका प्रयोग है, उन संदर्भों में उन्हें स्पष्ट कीजिए।
4. ***मोहन! थोड़ा दही तो ला दे बाज़ार से।***
   मोहन! ये कपड़े धोबी को दे तो आ।
   मोहन! एक किलो आलू तो ला दे।
   ऊपर के वाक्यों में मोहन को आदेश दिए गए हैं। इन वाक्यों में ***आप*** सर्वनाम का इस्तेमाल करते हुए उन्हें दुबारा लिखिए।

विज्ञापन की दुनिया

- विभिन्न व्यापारी अपने उत्पाद की बिक्री के लिए अनेक तरह के विज्ञापन बनाते हैं। आप भी हाथ से बनी किसी वस्तु की बिक्री के लिए एक ऐसा विज्ञापन बनाइए जिससे हस्तकला का कारोबार चले।

शब्द-छवि

निहाई	–	एक विशेष प्रकार का लोहे का ठोस टुकड़ा, जिस पर लोहा आदि धातुओं को रखकर पीटते हैं।
अनायास	–	बिना प्रयास के
अनुगूँज	–	प्रतिध्वनि, रह-रहकर कानों में गूँजने वाली आवाज़
हँसुवे	–	घास काटने का औज़ार, दराँती

पुरोहिताई	–	पुरोहित (धार्मिक कृत्य कराने वाला) का व्यवसाय, पुरोहित का भाव
निष्ठा	–	श्रद्धा, विश्वास, एकाग्रता, दृढ़ता
रुद्रीपाठ	–	शंकर की आराधना का एक प्रकार
धौंकनी	–	लुहार या सुनारों की आग दहकाने वाली लोहे या बाँस की नली
कुशाग्र बुद्धि	–	तीक्ष्ण बुद्धिवाला, पैनी बुद्धिवाला
संटी	–	पतली डंडी या छड़ी
प्रतिद्वंद्वी	–	मुकाबला करने वाला, विपक्षी, विरोधी, प्रतिपक्षी
विद्याव्यसनी	–	पढ़ने में रुचि रखने वाला
घसियारे	–	घास काटने का काम करने वाले
सेक्रेटेरियट	–	सचिवालय
त्रुटिहीन	–	जिसमें कोई कमी न हो

चलते-चलते अंत नहीं। अंत बिना छुटकारा नहीं। इसलिए तपस है। धुआँ है। यानी इच्छा है। जान लेने की। पहचान लेने की।

(लद्दाख में राग-विराग)

कृष्णनाथ

जन्मः सन् 1934, वाराणसी (उ.प्र.)

प्रमुख रचनाएँः लद्दाख में राग-विराग, किन्नर धर्मलोक, स्पीति में बारिश, पृथ्वी-परिक्रमा, हिमाल यात्रा, अरुणाचल यात्रा, बौद्ध निबंधावली, हिंदी और अंग्रेज़ी में कई पुस्तकों का संपादन

सम्मानः लोहिया सम्मान

कृष्णनाथ के व्यक्तित्व के कई पहलू हैं। काशी हिंदू विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. के बाद उनका झुकाव समाजवादी आंदोलन और बौद्ध-दर्शन की ओर हो गया। बौद्ध-दर्शन में उनकी गहरी पैठ है। वे अर्थशास्त्र के विद्वान हैं और काशी विद्यापीठ में इसी विषय के प्रोफ़ेसर भी रहे। अंग्रेज़ी और हिंदी दोनों भाषाओं पर उनका अधिकार है और दोनों की पत्रकारिता से भी उनका जुड़ाव रहा। हिंदी की साहित्यिक पत्रिका ***कल्पना*** *के संपादक मंडल में वे कई साल रहे और अंग्रेज़ी के* ***मैनकाइंड*** *का कुछ वर्षों तक संपादन भी किया। राजनीति, पत्रकारिता और अध्यापन की प्रक्रिया से गुज़रते-गुज़रते वे बौद्ध-दर्शन की ओर मुड़े। भारतीय और तिब्बती आचार्यों के साथ बैठकर उन्होंने नागार्जुन के दर्शन और वज्रयानी परंपरा का अध्ययन शुरू किया। भारतीय चिंतक जे. कृष्णमूर्ति ने जब बौद्ध विद्वानों के साथ चिंतन-मनन शुरू किया तो कृष्णनाथ भी उसमें शामिल थे। बौद्ध-दर्शन पर कृष्णनाथ जी ने काफ़ी कुछ लिखा है।*

इतना कुछ करने के बावजूद कृष्णनाथ जी की सृजन–आकांक्षा पूरी नहीं हुई। इसलिए वे यायावर हो गए। एक यायावरी तो उन्होंने वैचारिक धरातल पर की थी दूसरी सांसारिक अर्थ में। उन्होंने हिमालय की यात्रा शुरू की और उन स्थलों को खोजना और खंगालना शुरू किया जो बौद्ध–धर्म और भारतीय मिथकों से जुड़े हैं। फिर जब उन्होंने इस यात्रा को शब्दों में बाँधना शुरू किया तो यात्रा–वृत्तांत जैसी विधा अनूठी विलक्षणता से भर गई। कृष्णनाथ जहाँ की यात्रा करते हैं वहाँ वे सिर्फ़ पर्यटक नहीं होते बल्कि एक तत्ववेत्ता की तरह वहाँ का अध्ययन करते चलते हैं। पर वे शुष्क अध्ययन नहीं करते बल्कि उस स्थान विशेष से जुड़ी स्मृतियों को उघाड़ते हैं। ये वे स्मृतियाँ होती हैं जो इतिहास के प्रवाह में सिर्फ़ स्थानीय होकर रह गई हैं लेकिन जिनका संपूर्ण भारतीय लोकमानस से गहरा रिश्ता रहा है। पहाड़ के किसी छोटे–बड़े शिखर पर दुबककर बैठी वह विस्मृत–सी–स्मृति मानो कृष्णनाथ की प्रतीक्षा कर रही हो कि वे आएँ, उसे देखें और उसके बारे में लिखकर उसे जनमानस के पास ले जाएँ।

कृष्णनाथ के यात्रा–वृत्तांत स्थान विशेष से जुड़े होकर भी भाषा, इतिहास, पुराण का संसार समेटे हुए हैं। पाठक उनके साथ खुद यात्रा करने लगता है। वे लोग, जो इन स्थानों की यात्रा कर चुके होते हैं, वे भी अगर कृष्णनाथ के यात्रा–वृत्तांत को पढ़ेंगे तो उन्हें कुछ नया लगेगा। उन्हें महसूस होगा कि उनकी पुरानी यात्रा अधूरी थी और कृष्णनाथ के यात्रा–वृत्तांत को पढ़कर वह पूरी हुई।

***स्पीति में बारिश** पाठ एक यात्रा–वृत्तांत है। स्पीति, हिमाचल के मध्य में स्थित है। यह स्थान अपनी भौगोलिक एवं प्राकृतिक विशेषताओं के कारण अन्य पर्वतीय स्थलों से भिन्न है। लेखक ने इस पाठ में स्पीति की जनसंख्या, ऋतु, फ़सल, जलवायु तथा भूगोल का वर्णन किया है जो परस्पर एक–दूसरे से संबंधित हैं। पाठ में दुर्गम क्षेत्र स्पीति में रहने वाले लोगों के कठिनाई भरे जीवन का भी वर्णन किया गया है। कुछ युवा पर्यटकों का पहुँचना स्पीति के पर्यावरण को बदल सकता है। ठंडे रेगिस्तान जैसे स्पीति के लिए उनका आना, वहाँ बूँदों भरा एक सुखद संयोग बन सकता है।*

स्पीति में बारिश

स्पीति हिमाचल प्रदेश के लाहुल-स्पीति ज़िले की तहसील है। लाहुल-स्पीति का यह योग भी आकस्मिक ही है। इनमें बहुत योगायोग नहीं है। ऊँचे दर्रों और कठिन रास्तों के कारण इतिहास में भी कम रहा है। अलंघ्य भूगोल यहाँ इतिहास का एक बड़ा कारक है। अब जबकि संचार में कुछ सुधार हुआ है तब भी लाहुल-स्पीति का योग प्रायः 'वायरलेस सेट' के ज़रिए है जो केलंग और काजा के बीच खड़कता रहता है। फिर भी केलंग के बादशाह को भय लगा रहता है कि कहीं काजा का सूबेदार उसकी अवज्ञा तो नहीं कर रहा है? कहीं बगावत तो नहीं करने वाला है? लेकिन सिवाय वायरलेस सेट पर संदेश भेजने के वह कर भी क्या सकता है? वसंत में भी 170 मील जाना-आना कठिन है। शीत में प्रायः असंभव है।

प्राचीनकाल में शायद स्पीति भारतीय साम्राज्यों का अनाम अंग रही है। जब ये साम्राज्य टूटे तो यह स्वतंत्र रही है। फिर मध्य युग में प्रायः लद्दाख मंडल और कभी कश्मीर मंडल, कभी बुशहर मंडल, कभी कुल्लू मंडल, कभी ब्रिटिश भारत के तहत रही है। तब भी प्रायः स्वायत्त रही है। इसकी स्वायत्तता भूगोल ने सिरजी है। भूगोल ही इसकी रक्षा करता है। भूगोल ही इसका संहार भी करता है।

पहले कभी उन राजाओं का कोई हरकारा आता था तो उसके आते-जाते वह अल्प वसंत बीत जाता था। कभी कोई जोरावर सिंह जैसा आता था तो स्पीति का तरीका वही था जो तुपचिलिंग गोनपा में मैंने देखा। जब डाइनामाइट का विस्फोट

हुआ तो लाहुली हदस कर, आँख बंदकर, चाँग्मा का तना पकड़ या एक-दूसरे को पकड़कर बैठ गए। जब धमाका गुज़र गया तो फिर डरते-डरते आँख खोल कर उठे। जोरावर सिंह के आक्रमण के समय स्पीति के लोग घर छोड़कर भाग गए। उसने स्पीति को और वहाँ के विहारों को लूटा। यह अप्रतिकार शायद स्पीति की सुरक्षा की पद्धति है।

स्पीति में जनसंख्या लाहुल से भी कम है। 1901 की जनगणना के अनुसार 3,231 रही है। 1971 की जनगणना के अनुसार 7,196 है। इसका क्षेत्रफल मुझे 1971 की जनगणना में लाहुल के साथ जोड़कर मिला है जो 12,015 वर्ग किलोमीटर है[1]। स्पीति का अलग क्षेत्रफल नहीं दिया गया है। इंपीरियल गजेटियर (ऑक्सफोर्ड, 1908, खंड 23) के अनुसार यह क्षेत्रफल 2,155 वर्गमील है। इस तरह स्पीति की जनसंख्या प्रति वर्गमील चार से भी कम है। 1901 में यह प्रति वर्गमील दो से भी कम थी।

लाहुल-स्पीति का प्रशासन ब्रिटिश राज से भारत को जस का तस मिला। अंग्रेज़ों को यह 1846 ई. में कश्मीर के राजा गुलाब सिंह के ज़रिए मिला। अंग्रेज़ इनके ज़रिए पश्चिमी तिब्बत के ऊन वाले क्षेत्र में प्रवेश चाहते थे। तिब्बत में अंग्रेज़ी साम्राज्य के दूरगामी हित भी थे। जो भी हो, 1846 में कुल्लू, लाहुल, स्पीति ब्रिटिश अधीनता में आए। पहले सुपरिंटेंडेंट के अधीन थे। फिर 1847 में वे काँगड़ा ज़िले में शरीक कर दिए गए। लद्दाख मंडल के दिनों में भी स्पीति का शासन एक नोनो[2] द्वारा चलाया जाता था। ब्रिटिश भारत में भी कुल्लू के असिस्टेंट कमिश्नर के समर्थन से यह नोनो कार्य करता रहा। इसका अधिकार-क्षेत्र केवल द्वितीय दरजे के मजिस्ट्रेट के बराबर था। लेकिन स्पीति के लोग इसे अपना राजा ही मानते थे। राजा नहीं है तो दमयंती जी को रानी मानते हैं।

---

1. *वर्तमान (2002 की जनगणना के अनुसार) – लाहुल-स्पीति का क्षेत्रफल 12,210 वर्ग किलोमीटर तथा जनसंख्या 34,000 है।*
2. *स्थानीय शासक*

1873 में स्पीति रेगुलेशन पास हुआ जिसके तहत लाहुल और स्पीति को विशेष दरजा दिया गया। ब्रिटिश भारत के अन्य कानून यहाँ नहीं लागू होते थे। रेगुलेशन के अधीन प्रशासन के अधिकार नोनो को दिए गए जिसमें मालगुज़ारी इकट्ठा करना और छोटे-छोटे फ़ौजदारी के मुकद्दमों का फ़ैसला करना भी शामिल था। उसके ऊपर के मामले वह कमिश्नर के पास भेज देता था। उन दिनों लाहुल-स्पीति का वृत्तांत काँगड़ा ज़िले के अंतर्गत कुल्लू तहसील में मिलता है। स्वराज्य के बाद 1960 में लाहुल-स्पीति पंजाब राज्य के अंतर्गत एक अलग ज़िला बना दिया गया जिसका केन्द्र केलंग में है। 1966 में जब हिमाचल प्रदेश राज्य बना तो लाहुल-स्पीति उसका उत्तरी छोर का ज़िला हो गया। यह देश का सबसे अधिक दुर्गम क्षेत्र है।

स्पीति 31.42 और 32.59 अक्षांश उत्तर और 77.26 और 78.42 पूर्व देशांतर के बीच स्थित है। यह चारों ओर से ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों का कैदी है। इन पहाड़ों की औसत ऊँचाई 18,000 फ़ीट है। यह पहाड़ उसे पूरब में तिब्बत, पश्चिम में लाहुल, दक्षिण में किन्नौर और उत्तर में लद्दाख से अलग करते हैं। इसकी मुख्य घाटी इसी नाम की स्पीति नदी की घाटी है। स्पीति पश्चिम हिमालय में लगभग 16,000 फ़ीट की ऊँचाई से निकल कर पूरब में तिब्बत में बहती है, वहाँ से स्पीति में आती है। स्पीति से बह कर पुराने रामपुर बुशहर राज्य में, अब किन्नौर ज़िले में बहती हुई सतलुज में मिलती है। मेरी इस स्पीति नदी से प्रीति है। स्पीति में मैं सिर्फ़ इसी नदी को पहचानता हूँ। सुनता हूँ कि कोई पारा नदी भी है, फिर घाटी है। स्पीति के अलावा पिन की घाटी प्रसिद्ध है। मान भाई से इसका किस्सा सुना है। अत्यंत बीहड़ और वीरान है। इनमें से शायद स्पीति की घाटी ही आबाद है। जैसी वह आबाद है वह आप देख ही रहे हैं। प्रति वर्गमील चार से भी कम लोग बसते हैं।

अचरज यह नहीं कि इतने कम लोग क्यों हैं? अचरज यह है कि इतने लोग भी कैसे बसे हुए हैं? मैंने जब भी स्पीति की विपत्ति बताई है तो लोगों ने यही पूछा कि आखिर तब लोग वहाँ रहते क्यों हैं? आठ-नौ महीने शेष दुनिया से कटे हुए हैं। ठंड में ठिठुर रहे हैं। सिर्फ़ एक फ़सल उगाते हैं। लकड़ी भी नहीं है कि घर गरम रख

सकें। वृत्ति नहीं है। फिर क्यों रहते हैं? क्या अपने धर्म की रक्षा के लिए रहते हैं? अपनी जन्मभूमि के ममत्व के कारण रहते हैं? या इस मजबूरी में रहते हैं कि कहीं और जा नहीं सकते? कहाँ जाएँ? या फिर और बातों के साथ-साथ यह सब कारण हैं? मैं नहीं जानता। मैं तो इतना ही देखता हूँ कि यहाँ रह रहे हैं, इसलिए रह रहे हैं। और कोई तर्क नहीं है। तर्क से हम किसी चीज़ को भले सिद्ध कर सकें, स्पीति में रहने को नहीं सिद्ध कर सकते। लेकिन तर्क का इतना मोह क्यों? ज़्यादा करके संसार और निर्वाण अतर्क्य है। तर्क के परे है।

स्पीति नदी के साथ-साथ मेरा थोड़ा परिचय स्पीति के पहाड़ों का भी है। स्पीति के पहाड़ लाहुल से ज़्यादा ऊँचे, नंगे और भव्य हैं। इनके सिरों पर स्पीति के नर-नारियों का आर्तनाद जमा हुआ है। शिव का अट्टहास नहीं, हिम का आर्तनाद है। ठिठुरन है। गलन है। व्यथा है।

इस व्यथा की कथा इन पहाड़ों की ऊँचाई के आँकड़ों में नहीं कही जा सकती। फिर भी जो सुंदरता को इंच में मापने के अभ्यासी हैं वे भला पहाड़ को कैसे बख्श सकते हैं। वे यह जान लें कि स्पीति मध्य हिमालय की घाटी है। जिसे वे हिमालय जानते हैं – स्केटिंग, सौंदर्य प्रतियोगिता, आइसक्रीम और छोले-भटूरे का कुल्लू-मनाली, शिमला, मसूरी, नैनीताल, श्रीनगर वह सब हिमालय नहीं है। हिमालय का तलुआ है। शिवालिक या पीरपंचाल या ऐसा ही कुछ उसका नाम है यह तलहटी है। रोहतांग जोत के पार मध्य हिमालय है। इसमें ही लाहुल-स्पीति की घाटियाँ हैं। इन घाटियों की औसत ऊँचाई नापी गई है। श्री कनिंघम के अनुसार लाहुल की समुद्र की सतह से ऊँचाई 10,535 फ़ीट है। स्पीति की 12,986 फ़ीट है। यानी लगभग 13,000 फ़ीट तो औसत ऊँचाई है।

मध्य हिमालय की जो श्रेणियाँ स्पीति को घेरे हुए हैं उनमें से जो उत्तर में हैं उसे बारालाचा श्रेणियों का विस्तार समझें। बारालाचा दर्रे की ऊँचाई का अनुमान 16,221 फ़ीट से लगाकर 16,500 फ़ीट का लगाया गया है। इस पर्वत-श्रेणी में दो चोटियों की ऊँचाई 21,000 फ़ीट से अधिक है। दक्षिण में जो श्रेणी है वह माने श्रेणी

कहलाती है। इसका क्या अर्थ है? कहीं यह बौद्धों के माने मंत्र के नाम पर तो नहीं है? "ओं मणि पद्मे हुं"* इनका बीज मंत्र है इसका बड़ा महात्म्य है। इसे संक्षेप में माने कहते हैं। कहीं इस श्रेणी का नाम इस माने के नाम पर तो नहीं है? अगर नहीं है तो करने जैसा है। यहाँ इन पहाड़ियों में माने का इतना जाप हुआ है कि यह नाम उन श्रेणियों को दे डालना ही सहज है।

इंपीरियल गज़ेटियर में माने श्रेणी की ऊँचाई 21,646 फ़ीट बताई गई है। यह तो इस श्रेणी की किसी चोटी की ऊँचाई होगी। पूरी श्रेणी की ऊँचाई तो एक नहीं होगी। इसमें जो छोटी-छोटी चोटियाँ हैं उनकी ऊँचाई भी 17,000 फ़ीट से अधिक है। कई गाँव समुद्र की सतह से 13,000 फ़ीट से ऊँचे बसे हैं। एक या दो 14,000 फ़ीट की ऊँचाई पर हैं। यह मध्य हिमालय है। इसमें स्पीति स्थित है।

इसके पार बाह्य हिमालय दीखता है। इसकी एक चोटी 23,064 फ़ीट ऊँची बताई जाती है। इसमें कई चोटियाँ 20,000 फ़ीट से अधिक ऊँची हैं।

मैं ऊँचाई के माप के चक्कर में नहीं हूँ। न इनसे होड़ लगाने के पक्ष में हूँ। वह एक बार लोसर में जो कर लिया सो बस है। इन ऊँचाइयों से होड़ लगाना मृत्यु है। हाँ, कभी-कभी उनका मान-मर्दन करना मर्द और औरत की शान है। मैं सोचता हूँ कि देश और दुनिया के मैदानों से और पहाड़ों से युवक-युवतियाँ आएँ और पहले तो स्वयं अपने अहंकार को गलाएँ- फिर इन चोटियों के अहंकार को चूर करें। उस आनंद का अनुभव करें जो साहस और कूवत से यौवन में ही प्राप्त होता है। अहंकार का ही मामला नहीं है। ये माने की चोटियाँ बूढ़े लामाओं के जाप से उदास हो गई हैं। युवक-युवतियाँ किलोल करें तो यह भी हर्षित हों। अभी तो इन पर स्पीति का आर्तनाद जमा हुआ है। वह इस युवा अट्टहास की गरमी से कुछ तो पिघले। यह एक युवा निमंत्रण है।

---

* *यह ध्वनि मंत्र है, जो ध्यान साधना के लिए प्रयुक्त होता है। बोधिसत्व आर्य अवलोकितेश्वर ने इस मंत्र का सबसे पहले उच्चारण किया था। इसके उच्चारण से करुणा की उत्पत्ति होती है।*

स्पीति

लाहुल की तरह ही स्पीति में भी दो ही ऋतुएँ होती हैं। कहीं मैंने षड्ऋतुओं का बखान किया है। वह अभ्यास दोष के कारण है। यहाँ जून से सितंबर तक की एक अल्पकालिक वसंत ऋतु है, शेष वर्ष शीत ऋतु होती है। वसंत में, जुलाई में औसत तापमान 15^0 सेंटीग्रेड और शीत में, जनवरी में औसत तापमान 8^0 रिकार्ड किया गया है। औसत से कुछ अंदाज़ नहीं लगता। वसंत में दिन गरम होता है, रात ठंडी होती है। शीत में क्या होता है? इसकी कल्पना ही की जा सकती है। कभी रहकर देखा जा सकता है।

स्पीति में वसंत लाहुल से भी कम दिनों का होता है। वसंत में भी यहाँ फूल नहीं खिलते, न हरियाली आती है, न वह गंध होती है। दिसंबर से घाटी में फिर बरफ़ पड़ने लगती है। अप्रैल-मई तक रहती है। यहाँ ठंडक भी लाहुल से ज़्यादा पड़ती है। नदी-नाले सब जम जाते हैं और हवाएँ तेज़ चलती हैं। मुँह, हाथ और जो खुले अंग हैं उनमें जैसे शूल की तरह चुभती हैं।

स्पीति में लाहुल से भी कम वर्षा होती है। मध्य हिमालय मानसून की पहुँच के परे है। यहाँ बरखा बहार नहीं है। कालिदास को अपने 'ऋतु संहार' में यहाँ वर्षा का तो संहार ही करना पड़ेगा। कालिदास में वर्षा का क्या ठाठ है? यह वर्षा वर्णन इस प्रकार शुरू होता है:

प्रिये! जल की फुहारों से भरे बादलों के मतवाले हाथी पर चढ़ा हुआ, चमकती हुई बिजलियों की झंडियों को फहराता हुआ और बादलों की गरज के नगाड़े बजाता हुआ यह कामीजनों का प्रिय पावस राजाओं का-सा ठाट-बाट बनाकर आ पहुँचा।

यह पावस यहाँ नहीं पहुँचता है। कालिदास की वर्षा की शोभा विंध्याचल में है। हिमाचल की इन मध्य की घाटियों में नहीं है। मैं नहीं जानता कि इसका लालित्य लाहुल-स्पीति के नर-नारी समझ भी पाएँगे या नहीं। वर्षा उनके संवेदन का अंग नहीं है। वह यह जानते नहीं हैं कि 'बरसात में नदियाँ बहती हैं, बादल बरसते, मस्त हाथी चिंघाड़ते हैं, जंगल हरे-भरे हो जाते हैं, अपने प्यारों से बिछुड़ी हुई स्त्रियाँ रोती-कलपती हैं, मोर नाचते हैं और बंदर चुप मारकर गुफाओं में जा छिपते हैं।'

अगर कालिदास यहाँ आकर कहें कि 'अपने बहुत से सुंदर गुणों से सुहानी लगने वाली, स्त्रियों का जी खिलाने वाली, पेड़ों की टहनियों और बेलों की सच्ची सखी तथा सभी जीवों का प्राण बनी हुई वर्षा ऋतु आपके मन की सब साधें पूरी करें' तो शायद स्पीति के नर-नारी यही पूछेंगे कि यह देवता कौन है? कहाँ रहता है? यहाँ क्यों नहीं आता?

स्पीति में कभी-कभी बारिश होती है। वर्षा ऋतु यहाँ मन की साध पूरी नहीं करती। धरती सूखी, ठंडी और वंध्या रहती है।

स्पीति में साल में एक फ़सल होती है। मुख्य फ़सलें हैं: दो किस्म का जौ, गेहूँ, मटर और सरसों। इसमें भी जौ मुख्य है। सिंचाई का साधन पहाड़ों से आ रहे नाले हैं या उनपर बनाए कूल हैं। ये नालियाँ पहाड़ों के किनारे-किनारे बहुत दूर तक जाती हैं। स्पीति नदी का तट इतना चौड़ा है कि इसका पानी किसी काम में नहीं आ पाता। स्पीति में ऐसी भूमि बहुत है जो खेती के लायक बनाई जा सकती है। शर्त इतनी है कि इसके लिए स्पीति में जल उलीचा जाए। या फिर पानी का कोई और स्रोत पहुँचाया जाए। स्पीति में कोई फल नहीं होता। मटर और सरसों को छोड़कर कोई सब्ज़ी नहीं होती। शायद ऊँचाई, वायुमंडल के दबाव में कमी, ठंड की अधिकता, वर्षा की कमी वगैरह के कारण यहाँ पेड़ नहीं होते। इसलिए स्पीति विशेषकर नंगी और वीरान है।

वर्षा यहाँ एक घटना है। एक सुखद संयोग है। हम काजा के डाक बंगले में सो रहे थे तो लगा कि कोई खिड़की खड़का रहा है। आधी रात का भी पिछला पहर है। इस समय कौन है? लैंप की लौ तेज़ की खिड़की का एक पल्ला खोला। तो तेज़ हवा का झोंका मुँह और हाथ को जैसे छीलने लगा। मैंने पल्ला भिड़ा दिया। उसकी आड़ से देखने लगा। देखा कि बारिश हो रही थी। मैं उसे देख नहीं रहा था। सुन रहा था। अँधेरा, ठंड और हवा का झोंका आ रहा था। जैसे बरफ़ का अंश लिए तुषार जैसी बूँदें पड़ रही थीं। जैसे नगाड़े पर थाप पड़ रही थी। दुंगछेन को हवा बजा रही थी। महाशंख की ध्वनि घाटी में तैर रही थी। स्पीति की घाटी में वर्षा हो रही थी। कमरे में ठंड बढ़ रही थी। मैं बिस्तर में पड़ा-पड़ा मालूम नहीं कब सो गया।

सुबह उठा। चाय पीते-पीते सुना कि स्पीति के लोग कह रहे हैं कि हमारी यात्रा शुभ है। स्पीति में बहुत दिनों बाद बारिश हुई है।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. इतिहास में स्पीति का वर्णन नहीं मिलता। क्यों?
2. स्पीति के लोग जीवनयापन के लिए किन कठिनाइयों का सामना करते हैं?
3. लेखक ***माने*** श्रेणी का नाम बौद्धों के ***माने*** मंत्र के नाम पर करने के पक्ष में क्यों है?
4. ***ये माने की चोटियाँ बूढ़े लामाओं के जाप से उदास हो गई हैं***– इस पंक्ति के माध्यम से लेखक ने युवा वर्ग से क्या आग्रह किया है?
5. ***वर्षा यहाँ एक घटना है, एक सुखद संयोग है***–लेखक ने ऐसा क्यों कहा है?
6. स्पीति अन्य पर्वतीय स्थलों से किस प्रकार भिन्न है?

पाठ के आस-पास

1. स्पीति में बारिश का वर्णन एक अलग तरीके से किया गया है। आप अपने यहाँ होने वाली बारिश का वर्णन कीजिए।
2. स्पीति के लोगों और मैदानी भागों में रहने वाले लोगों के जीवन की तुलना कीजिए। किन का जीवन आपको ज़्यादा अच्छा लगता है और क्यों?

3. ***स्पीति में बारिश*** एक यात्रा-वृत्तांत है। इसमें यात्रा के दौरान किए गए अनुभवों, यात्रा-स्थल से जुड़ी विभिन्न जानकारियों का बारीकी से वर्णन किया गया है। आप भी अपनी किसी यात्रा का वर्णन लगभग 200 शब्दों में कीजिए।
4. लेखक ने स्पीति की यात्रा लगभग तीस वर्ष पहले की थी। इन तीस वर्षों में क्या स्पीति में कुछ परिवर्तन आया है? जानें, सोचें और लिखें।

भाषा की बात

1. पाठ में से दिए गए अनुच्छेद में ***क्योंकि, और, बल्कि, जैसे ही, वैसे ही, मानो, ऐसे,*** शब्दों का प्रयोग करते हुए उसे दोबारा लिखिए–
लैंप की लौ तेज़ की। खिड़की का एक पल्ला खोला तो तेज़ हवा का झोंका मुँह और हाथ को जैसे छीलने लगा। मैंने पल्ला भिड़ा दिया। उसकी आड़ से देखने लगा। देखा कि बारिश हो रही थी। मैं उसे देख नहीं रहा था। सुन रहा था। अँधेरा, ठंड और हवा का झोंका आ रहा था। जैसे बरफ़ का अंश लिए तुषार जैसी बूँदें पड़ रही थीं।

शब्द-छवि

अलंघ्य	–	जिसे लाँघा या पार न किया जा सके।
स्वायत्त	–	स्वतंत्र
अतर्क्य	–	तर्क न करने योग्य
आर्तनाद	–	दर्द भरी ऊँची आवाज़, स्वर में दुख का ज्ञापन या सहायता की पुकार
पीरपंचाल	–	एक पर्वत शृंखला
महात्म्य	–	महिमा, गौरव
कूवत (फ़ा. कुव्वत)	–	बल, शक्ति
षड्ऋतुएँ	–	छह ऋतुएँ (वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेमन्त)
तुषार	–	हिम, बरफ़
दुंगछेन	–	एक तरह का वाद्ययंत्र, महाशंख जिसे फूँक मारकर बजाया जाता है

लोकप्रियता कभी भी रचना का मानक नहीं बन सकती। असली मानक तो होता है रचनाकार का दायित्वबोध, उसके सरोकार, उसकी जीवन-दृष्टि।

(एक कहानी यह भी)

मन्नू भंडारी

जन्मः सन् 1931, भानपुरा (मध्यप्रदेश)

प्रमुख रचनाएँ: एक प्लेट सैलाब, मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, यही सच है, त्रिशंकु, आँखों देखा झूठ *(कहानी-संग्रह)*; आपका बंटी, महाभोज, स्वामी, एक इंच मुस्कान *(राजेंद्र यादव के साथ) (उपन्यास)*

पटकथाएँ: रजनी, निर्मला, स्वामी, दर्पण

सम्मानः हिंदी अकादमी दिल्ली का शिखर सम्मान, बिहार सरकार, भारतीय भाषा परिषद् कोलकाता, राजस्थान संगीत नाटक अकादमी और उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा पुरस्कृत

मन्नू भंडारी हिंदी कहानी में उस समय सक्रिय हुईं जब नई कहानी आंदोलन अपने उठान पर था। नई कहानी आंदोलन (छठा दशक) में जो नया मोड़ आया उसमें मन्नू जी का विशेष योगदान रहा। उनकी कहानियों में कहीं पारिवारिक जीवन, कहीं नारी-जीवन और कहीं समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन की विसंगतियाँ विशेष आत्मीय अंदाज़ में अभिव्यक्त हुई हैं। उन्होंने आक्रोश, व्यंग्य और संवेदना को मनोवैज्ञानिक रचनात्मक आधार दिया है– वह चाहे कहानी हो, उपन्यास हो या फिर पटकथा ही क्यों न हो।

यहाँ आप मन्नू जी द्वारा लिखित एक पटकथा पढ़ने जा रहे हैं। पटकथा, यानी पट या स्क्रीन के लिए लिखी गई वह कथा रजत पट (फ़िल्म का स्क्रीन) के लिए भी हो सकती है और टेलीविज़न के लिए भी। मूल बात यह है कि जिस तरह मंच पर खेलने के लिए नाटक लिखे जाते हैं, उसी तरह कैमरे से फ़िल्माए जाने के लिए पटकथा लिखी जाती है।

कोई लेखक किसी भी दूसरी विधा में लेखन करके उतने लोगों तक अपनी बात नहीं पहुँचा सकता, जितना की पटकथा लेखन द्वारा; क्योंकि पटकथा शूट होने के बाद धारावाहिक या फ़िल्मों के रूप में लाखों-करोड़ों दर्शकों तक पहुँच जाती है। इस लोकप्रियता के चलते ही पटकथा लेखन की ओर लेखकों का भी पर्याप्त रुझान हुआ है और पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में भी पटकथाएँ छपने लगी हैं। प्रस्तुत पाठ में रजनी धारावाहिक की एक कड़ी दी जा रही है।

रजनी पिछली सदी के नवें दशक का एक बहुचर्चित टी.वी. धारावाहिक रहा है। यह वह समय था जब **हमलोग** *और* **बुनियाद** *जैसे सोप ओपेरा दूरदर्शन का भविष्य गढ़ रहे थे। बासु चटर्जी के निर्देशन में बने इस धारावाहिक की हर कड़ी अपने में स्वतंत्र और मुकम्मल होती थी और उन्हें आपस में गूँथनेवाली सूत्र रजनी थी। हर कड़ी में यह जुझारू और इंसाफ़-पसंद स्त्री-पात्र किसी न किसी सामाजिक-राजनीतिक समस्या से जूझती नज़र आती थी।*

प्रस्तुत अंश भी व्यवसाय बनती शिक्षा की समस्या की ओर हमारा ध्यान खींचता है।

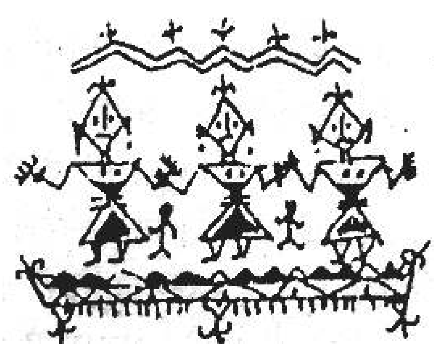

रजनी

(मध्यवर्गीय परिवार के फ़्लैट का एक कमरा। एक महिला रसोई में व्यस्त है। घंटी बजती है। बाई दरवाज़ा खोलती है। रजनी का प्रवेश।)

रजनी : लीला बेन कहाँ हो...बाज़ार नहीं चलना क्या?

लीला : *(रसोई में से हाथ पोंछती हुई निकलती है)* चलना तो था पर इस समय तो अमित आ रहा होगा अपना रिज़ल्ट लेकर। आज उसका रिज़ल्ट निकल रहा है न। *(चेहरे पर खुशी का भाव)*

रजनी : अरे वाह! तब तो मैं मिठाई खाकर ही जाऊँगी। अमित तो पढ़ने में इतना अच्छा है कि फ़र्स्ट आएगा और नहीं तो सेकंड तो कहीं गया नहीं। तुमको मिठाई भी बढ़िया खिलानी पड़ेगी...सूजी के हलवे से काम नहीं चलने वाला, मैं अभी से बता देती हूँ।

लीला : *(हँसकर)* नहीं-नहीं, मैं तुम्हें अच्छी मिठाई ही खिलाऊँगी...मैंने पहले से ही मँगवाकर रखी है– केसरिया रसमलाई। अमित को बहुत पसंद है न।

रजनी : देखा ऽऽ! मुझे अपने घर में ही केसर की सुगंध आ गई थी। बाज़ार का तो मैं बहाना करके चली आई वरना तुम तो मुझे काट ही देतीं।

लीला : कैसी बात करती हो? मैं एक बार काट भी दूँ, लेकिन अमित! अपने मुँह में डालने से पहले रसमलाई लेकर तुम्हारे फ़्लैट में दौड़ता। मैं कोई भी चीज़ घर में बनाऊँ या बाहर से लाऊँ, अमित जब तक तुम्हारे भोग नहीं लगा लेता, हम लोग खा थोड़े ही सकते हैं। रजनी आंटी तो हीरो हैं उसकी। *(दोनों खिलखिलाकर हँसती हैं)*

रजनी : बहुत मेधावी बच्चा है अमित...तुम देखना तो, आगे जाकर क्या बनता है!

लीला : बस, सऽब तुम्हारा ही आशीर्वाद है।

(फिर घंटी बजती है। लीला एक तरह से दौड़ते हुए दरवाज़ा खोलती है। अमित का प्रवेश। रोज़ की तरह भारी बस्ते की जगह एक हल्का-सा थैला है।)

रजनी : ***(अमित को बाँहों में भरने के लिए दोनों बाँहें फैलाते हुए आगे बढ़ती है।)*** कांग्रेचुलेशंस अमित। बधाई देने के लिए रजनी आंटी पहले से मौजूद हैं। ***(अमित का चेहरा उतरा हुआ है, पर दोनों में से अभी तक उसपर किसी का ध्यान नहीं गया। अमित आँसू भरी आँखों से थैले में से रिपोर्ट निकालकर माँ की ओर फेंकते हुए।)***

अमित : लो...लो...देखो, क्या हुआ है मेरे रिज़ल्ट का। मैंने कितना कहा था कि मैथ्स में भी मेरी ट्यूशन लगवा दीजिए, वरना मेरा रिज़ल्ट बिगड़ जाएगा। बस वही हुआ। मैथ्स में ही तो पूरे नंबर आ सकते हैं, रिज़ल्ट बन-बिगड़ सकता है। रिपोर्ट रजनी देखने लगती है। ***(लीला उसे अपनी बाँहों में भरकर)***

लीला : पर तू तो सारे सवाल ठीक करके आया था। यहाँ आकर पापा के सामने तूने फिर से किया था अपना सारा पेपर। सब तो ठीक था। तेरे पापा ने नहीं कहा था कि चार-पाँच नंबर भले ही काट ले सफ़ाई-वफ़ाई के पर नाइंटी-फ़ाइव तो तेरे पक्के हैं।

रजनी : ***(रिपोर्ट देखते हुए)*** पर मिले तो कुल बहत्तर ही हैं। ***(फिर दूसरे विषयों के नंबर भी पढ़ने लगती है इंगलिश 86, हिस्ट्री 80, सिविक्स 88, हिंदी 82, ड्राइंग 90...सबसे कम मैथ्स में ही।)***

अमित : ***(गुस्से और दुख से)*** कम तो होंगे ही। ट्यूशन नहीं लेने से मिलते हैं कहीं अच्छे नंबर? सर तो बार-बार कहते ही थे कि ट्यूशन कर लो, ट्यूशन कर लो वरना फिर बाद में मत रोना। ***(रो पड़ता है)***

लीला : *(अपराधी की तरह सफ़ाई देते हुए)* तुझे अंग्रेज़ी को लेकर थोड़ी परेशानी थी सो अंग्रेज़ी में करवा दी थी ट्यूशन। अब दो-दो विषयों की ट्यूशन...फिर लंबी-चौड़ी फ़ीस। बेटे...*(अपनी आर्थिक मजबूरी की बात वह शब्दों से नहीं, चेहरे से व्यक्त करती है।)* पर यह तो अँधेर ही हुआ कि सारा पेपर ठीक हो, फिर भी नंबर काट लो।

रजनी : *(रजनी की भौंहों में एकाएक बल पड़ जाते हैं। वह रोते हुए अमित को खींचकर अपने पास सटा लेती है)* रोओ मत। *(उसके आँसू पोंछते हुए)* अमित रोएगा नहीं...समझे। मैं जो पूछती हूँ उसका जवाब देना। बस। *(कुछ देर रुककर)* तुझे अच्छी तरह याद है कि तूने पूरा पेपर ठीक किया था? *(अमित स्वीकृति में सिर हिलाता है)* पापा के पास दुबारा पेपर करने से पहले दोस्तों से या किताबों से उन सवालों के जवाब तो नहीं देख लिए थे?

अमित : नहीं। ज्यों-के-त्यों आकर कर दिए थे। हमको आते थे वो सारे सवाल।

रजनी : मैथ्स के सर कौन हैं?

अमित : मिस्टर पाठक।

रजनी : कितने लड़के ट्यूशन लेते हैं उनसे?

अमित : बाइस। साल के शुरू में तो आठ लेते थे...फिर पहले टर्मिनल के बाद से पंद्रह हो गए थे। हाफ़-ईयरली के बाद सात लड़कों ने और लेना शुरू कर दिया। मुझसे भी तभी से कह रहे थे।

लीला : हाफ़-ईयरली में तो इसके नाइंटी-सिक्स नंबर आए थे...इसी ने बताया था कि क्लास में सबसे ज़्यादा हैं।

रजनी : उसके बाद भी कहते थे कि ट्यूशन लो?

अमित : हाँ! कॉपी लौटाते हुए कहा था कि तुमने किया तो अच्छा है पर यह तो हाफ़-ईयरली है...बहुत आसान पेपर होता है इसका तो। अब अगर ईयरली में भी पूरे नंबर लेने हैं तो तुरंत ट्यूशन लेना शुरू कर दो। वरना रह जाओगे। सात लड़कों ने तो शुरू भी कर दिया था। पर मैंने

जब मम्मी-पापा से कहा, हमेशा बस एक ही जवाब ***(मम्मी की नकल उतारते हुए)*** मैथ्स में तो तू वैसे ही बहुत अच्छा है, क्या करेगा ट्यूशन लेकर? देख लिया अब? सिक्स्थ पोज़ीशन आई है मेरी। जो आज तक कभी नहीं आई थी। ***(अमित की आँखों से फिर आँसू टपक पड़ते हैं।)***

रजनी : ***(डाँटते हुए)*** फिर आँसू। जानता नहीं, रोने वाले बच्चे रजनी आंटी को बिलकुल पसंद नहीं। मम्मी ने बिलकुल ठीक ही कहा और ठीक ही किया। जिस विषय में तुम वैसे ही बहुत अच्छे हो, उसमें क्यों लोगे ट्यूशन? ट्यूशन तो कमज़ोर बच्चे लेते हैं।

अमित : आप जानती नहीं आंटी...अच्छे-बुरे की बात नहीं होती। अगर सर कहें और बार-बार कहें तो लेनी ही होती है। वरना तो नंबर कम हो ही जाते हैं।

रजनी : पेपर अच्छा करो तब भी नंबर कम हो जाते हैं?

अमित : हाँ, कितना ही अच्छा करो फिर भी कम हो जाते हैं...जैसे मेरे हो गए।

रजनी : यानी कि अच्छा पेपर करने पर भी कम आते हैं। सिर्फ़ इसलिए कि ट्यूशन नहीं ली थी! तो यह तो सर की गलती नहीं, बदमाशी है और तू मम्मी से लड़ रहा है। सर से जाकर लड़।

(अमित इस भाव से सिर हिलाता है मानो कितनी बेकार की बात कर रही हैं रजनी आंटी। लीला दो गिलासों में शिकंजी बनाकर लाती है। अमित लेने के लिए हाथ नहीं बढ़ाता तो रजनी घुड़कती है।)

रजनी : चलो पियो शिकंजी। देखते नहीं, चेहरा कैसे पसीना-पसीना हो रहा है। ***(दोनों शिकंजी पीने लगते हैं। इस दौरान रजनी कुछ सोच रही है। शिकंजी खत्म करके)***

कल आप नौ बजे तैयार रहिए अमित साहब...आपके स्कूल चलना है।

अमित : ***(अमित एकदम डर जाता है)*** कल से तो छुट्टी है। पर आप अगर स्कूल जाकर कुछ कहेंगी तो सर मुझसे बहुत गुस्सा हो जाएँगे...वहाँ मत जाइए...प्लीज़ वहाँ बिलकुल मत जाइए।

लीला : हाँ रजनी तुम कुछ करोगी–कहोगी तो अगले साल कहीं और ज़्यादा परेशान न करें इसे। अब जब रहना इसी स्कूल में है तो इन लोगों से झगड़ा।

रजनी : *(बात को बीच में ही काटकर गुस्से से)* यानी कि वे लोग जो भी जुलुम–ज़्यादती करें, हम लोग चुपचाप बर्दाश्त करते जाएँ? सही बात कहने में डर लग रहा है तुझे, तेरी माँ को! अरे जब बच्चे ने सारा पेपर ठीक किया है तो हम कॉपी देखने की माँग तो कर ही सकते हैं...पता तो लगे कि आखिर किस बात के नंबर काटे हैं?

अमित : *(झुँझलाकर)* बता तो दिया आंटी। आप...

रजनी : *(गुस्से से)* ठीक है तो अब बैठकर रोओ तुम माँ–बेटे दोनों। *(दनदनाती निकल जाती है। दोनों के चेहरे पर एक असहाय-सा भाव।)*

लीला : अब यह रजनी कोई और मुसीबत न खड़ी करे।

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(स्कूल के हैडमास्टर का कमरा। बड़ी-सी टेबल। दीवार के सहारे रखी काँच की अलमारी में बच्चों द्वारा जीते हुए कप और शील्ड्स जमे हुए रखे हैं। दीवार पर कुछ नेताओं की तसवीरें, एक बड़ा-सा मैप लटका है। एक स्कूल के हैडमास्टर के कमरे का वातावरण तैयार किया जाए। हैडमास्टर काम में व्यस्त है। चपरासी बड़े अदब से एक चिट लाकर रखता है। हैडमास्टर कुछ क्षण उसे देखता रहता है।)

हैडमास्टर : बुलाओ। *(रजनी का प्रवेश नमस्कार करती है।)*

हैडमास्टर : बैठिए *(कुछ देर रुककर)* कहिए मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ?

रजनी : मैं सेविंथ क्लास के अमित सक्सेना की मैथ्स की कॉपी देखना चाहती हूँ *(हैडमास्टर के चेहरे पर ऐसा भाव जैसे वह कुछ समझा न हो)* ईयरली एक्ज़ाम्स की, कल ही जिसका रिज़ल्ट निकला है।

हैडमास्टर : सॉरी मैडम, ईयरली एक्ज़ाम्स की कॉपियाँ तो हम लोग नहीं दिखाते हैं।

रजनी : जानती हूँ मैं, लेकिन बात यह है कि अमित ने मैथ्स का पूरा पेपर ठीक किया था लेकिन उसे कुल बहत्तर नंबर ही मिले हैं। कॉपी देखकर सिर्फ़ यह जानना चाहती हूँ कि अमित को अपने बारे में कुछ गलतफ़हमी हो गई थी या ***(एक-एक शब्द पर ज़ोर देकर)*** गलती एक्ज़ामिनर की है।

हैडमास्टर : ***(सारी बात को बहुत हलके ढंग से लेते हुए)*** आप भी कमाल करती हैं, बच्चे ने कहा और आपने मान लिया। अरे, हर बच्चा घर जाकर यही कहता है कि उसने पेपर बहुत अच्छा किया है और उसे बहुत अच्छे नंबर मिलेंगे। अगर हम इसी तरह कॉपियाँ दिखाने लग जाएँ तो यहाँ तो पेरेंट्स की भीड़ लगी रहे सारे समय। इसीलिए तो ईयरली एक्ज़ाम्स की कॉपियाँ न दिखाने का नियम बनाया गया है स्कूलों में।

रजनी : ***(अपने गुस्से पर काबू पाते हुए)*** देखिए आप चाहें तो अमित का पूरा रिज़ल्ट देख सकते हैं। मैथ्स में हमेशा सेंट-परसेंट नंबर लेता रहा है। इस साल भी उसने पूरा पेपर ठीक किया है। ***(तैश आ ही जाता है)*** कॉपी देखकर मैं सिर्फ़ यह जानना चाहती हूँ कि नंबर आखिर कटे किस बात के हैं?

हैडमास्टर : आप बहस करके बेकार ही अपना और मेरा समय बर्बाद कर रही हैं। मैंने कह दिया न कि इन कॉपियों को दिखाने का नियम नहीं है और मैं नियम नहीं तोड़ूँगा।

रजनी : ***(व्यंग्य से)*** नियम! यानी कि आपका स्कूल बहुत नियम से चलता है।

हैडमास्टर : ***(गुस्से से)*** व्हॉट डू यू मीन?

रजनी : आई मीन व्हॉट आई से। नियम का ज़रा भी खयाल होता तो इस तरह की हरकतें नहीं होतीं स्कूल में। कोई बच्चा बहुत अच्छा है किसी विषय में फिर भी उसे मजबूर किया जाता है कि वह ट्यूशन ले। यह कौन-सा नियम है आपके स्कूल का?

हैडमास्टर : देखिए यह टीचर्स और स्टूडेंट्स का अपना आपसी मामला है, वो पढ़ने जाते हैं और वो पढ़ाते हैं। इसमें न स्कूल आता है, न स्कूल के नियम! इस बारे में हम क्या कर सकते हैं?

रजनी : कुछ नहीं कर सकते आप? तो मेहरबानी करके यह कुर्सी छोड़ दीजिए। क्योंकि यहाँ पर कुछ कर सकने वाला आदमी चाहिए। जो ट्यूशन के नाम पर चलने वाली धाँधलियों को रोक सके...मासूम और बेगुनाह बच्चों को ऐसे टीचर्स के शिकंजों से बचा सके जो ट्यूशन न लेने पर बच्चों के नंबर काट लेते हैं...और आप हैं कि कॉपियाँ न दिखाने के नियम से उनके सारे गुनाह ढक देते हैं।

हैडमास्टर : ***(चीखकर)*** विल यू प्लीज़ गेट आउट ऑफ दिस रूम। ***(ज़ोर-ज़ोर से घंटी बजाने लगता है। दौड़ता हुआ चपरासी आता है)*** मेमसाहब को बाहर ले जाओ।

रजनी : मुझे बाहर करने की ज़रूरत नहीं। बाहर कीजिए उन सब टीचर्स को जिन्होंने आपकी नाक के नीचे ट्यूशन का यह घिनौना रैकेट चला रखा है। ***(व्यंग्य से)*** पर आप तो कुछ कर नहीं सकते, इसलिए अब मुझे ही कुछ करना होगा और मैं करूँगी, देखिएगा आप। ***(तमतमाती हुई निकल जाती है।) (हैडमास्टर चपरासी पर ही बिगड़ पड़ता है)*** जाने किस-किस को भेज देते हो भीतर।

चपरासी : मैंने तो आपको स्लिप लाकर दी थी साहब।
(हैडमास्टर गुस्से में स्लिप की चिंदी-चिंदी करके फेंक देता है, कुछ इस भाव से मानो रजनी की ही चिंदियाँ बिखेर रहा हो।)

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(रजनी का फ़्लैट। शाम का समय। घंटी बजती है। रजनी आकर दरवाज़ा खोलती है। पति का प्रवेश। उसके हाथ से ब्रीफ़केस लेती है।)

पति : *(जूते खोलते हुए)* तुम आज दिन में कहीं बाहर गई थीं क्या?

रजनी : तुम्हें कैसे मालूम?

पति : फ़ोन किया था। एक फ़ाइल रह गई थी, सोचा चपरासी को भेजकर मँगवा लूँ पर कोई घर में हो तब न। ***(पति के चेहरे पर खीज भरा गुस्सा पुता हुआ है)***

रजनी : तुम फ़ाइल भूल गए...और जिसके बारे में मुझे पता भी नहीं। पर फिर भी उसके लिए मुझे घर बैठना चाहिए। यह कौन-सी बात हुई?

पति : *(ज़रा शांत होते हुए)* अच्छा गई कहाँ थीं?

रजनी : *(एक स्कूल का नाम लेती है)*

पति : *(स्कूल का नाम दोहराता है)*...तुम क्या करने गई थीं वहाँ?

रजनी : *(गद्‌गद भाव से)* पहले चाय ले आऊँ, फिर बताती हूँ।

(कैमरा रजनी के साथ किचन में। गुनगुनाते हुए रजनी खाने का भी कुछ बना रही है। लगता है जो कुछ करके आई, उससे बहुत प्रसन्न है।)

(दृश्य फिर बाहर के कमरे में। नाश्ते की प्लेट काफ़ी खाली हो चुकी है, जिससे लगे कि रजनी सारी बात बता चुकी है।)

रजनी : बोलती बंद कर दी हैडमास्टर साहब की। जवाब देते नहीं बना तो चिल्लाने लगे। पर मैं क्या छोड़ने वाली हूँ इस बात को?

पति : अच्छा मास्टर लोग ट्यूशन करते हैं या धंधा करते हैं, पर तुम्हें अभी बैठे-बिठाए इससे क्या परेशानी हो गई? तुम्हारा बेटा तो अभी पढ़ने नहीं जा रहा है न?

रजनी : *(एकदम भड़क जाती है)* यानी कि मेरा बेटा जाए तभी आवाज़ उठानी चाहिए...अमित के लिए नहीं उठानी चाहिए...और जो इतने-इतने बच्चे इसका शिकार हो रहे हैं, उनके लिए नहीं उठानी चाहिए। सब कुछ जानने के बाद भी नहीं उठानी चाहिए?

पति : ठेका लिया है तुमने सारी दुनिया का?

रजनी : देखो, तुम मुझे फिर गुस्सा दिला रहे हो रवि...गलती करने वाला तो है ही गुनहगार, पर उसे बर्दाश्त करने वाला भी कम गुनहगार नहीं होता जैसे लीला बेन और कांति भाई और हज़ारों-हज़ारों माँ-बाप। लेकिन सबसे बड़ा गुनहगार तो वह है जो चारों तरफ़ अन्याय, अत्याचार और तरह-तरह की धाँधलियों को देखकर भी चुप बैठा रहता है, जैसे तुम। ***(नकल उतारते हुए)*** हमें क्या करना है, हमने कोई ठेका ले रखा है दुनिया का। ***(गुस्से और हिकारत से)*** माई फ़ुट ***(उठकर भीतर जाने लगती है। जाते-जाते मुड़कर)*** तुम जैसे लोगों के कारण ही तो इस देश में कुछ नहीं होता, हो भी नहीं सकता! ***(भीतर चली जाती है।)***

पति : ***(बेहद हताश भाव से दोनों हाथों से माथा थामकर)*** चढ़ा दिया सूली पर।

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(डायरेक्टर ऑफ एजुकेशन के ऑफ़िस का बाहरी कक्ष। कमरे के बाहर उसके नाम और पद की तख्ती लगी है। साथ ही मिलने का समय भी लिखा है। एक स्टूल पर चपरासी बैठा है। सामने की बेंच पर रजनी और तीन-चार लोग और बैठे हैं—प्रतीक्षारत। रजनी के चेहरे से बेचैनी टपक रही है। बार-बार घड़ी देखती है, मिलने का समय समाप्त होता जा रहा है।)

रजनी : ***(चपरासी से)*** कितनी देर और बैठना होगा?

चपरासी : हम क्या बोलेगा...जब साहब घंटी मारेगा...बुलाएगा तभी तो ले जाएगा। बहुत बिज़ी रहता न साहब।

रजनी : ***(अपने में ही गुनगुनाते हुए)*** यह तो लोगों से मिलने का समय है, न जाने किसमें बिज़ी बनकर बैठ जाते हैं ***(चपरासी दूसरी तरफ़ देखने लगता है।)***

(कैमरा ऑफिस के अंदर चला जाता है। साहब मेज़ पर पेपर-वेट घुमा रहा

है। फिर घड़ी देखता है, फिर घुमाने लगता है। बाहर एक आदमी आता है। अपने नाम की स्लिप के नीचे पाँच रुपए का एक नोट रखकर देता है और चपरासी का कंधा थपथपाता है। चपरासी हँसकर भीतर जाता है। लौटकर उस आदमी को तुरंत अपने साथ ले जाता है। रजनी के चेहरे पर तनाव, घूरकर चपरासी को देखती है। थोड़ी देर में आदमी बाहर निकलता है। रजनी उठकर दनदनाती हुई भीतर जाने लगती है।)

चपरासी : अरे...अरे...अरे...किधर कू जाता? अभी घंटी बजा क्या?

रजनी : घंटी तो मिलने का समय खत्म होने तक बजेगी भी नहीं। *(दरवाज़ा धकेलकर भीतर चली जाती है)*

चपरासी : अरे कैसी औरत है...सुनतीच नई। *(वहाँ बैठे दो-तीन लोग हँसने लगते हैं।)*

(दृश्य कमरे के भीतर। निदेशक कुर्सी की पीठ से टिककर सिगरेट पी रहा है। रजनी को देखकर आश्चर्य से।)

निदेशक : आपको स्लिप भेजकर भीतर आना चाहिए न।

रजनी : *(मुस्कराकर)* स्लिप तो घंटे भर से आपके चपरासी की जेब में पड़ी है। और शायद दो-चार दिन चक्कर लगवाने तक पड़ी ही रहेगी।

निदेशक : क्या कह रही हैं आप?

रजनी : तो क्या यह सीधी-साफ़-सी बात भी मुझे ही समझानी होगी आपको? खैर अभी छोड़िए इस बात को, इस समय मैं आपके पास किसी दूसरे ही काम से आई हूँ।

(निदेशक के चेहरे पर रजनी को लेकर एक आश्चर्य मिश्रित कौतूहल का भाव उभरता है।)

निदेशक : कहिए।

रजनी : *(थोड़ा सोचते हुए)* देखिए, मैं स्कूलों, विशेषकर प्राइवेट स्कूलों और बोर्ड के आपसी रिलेशंस के बारे में कुछ जानकारी इकट्ठा कर रही हूँ।

निदेशक : कोई रिसर्च प्रोजेक्ट है क्या? व्हेरी इंटरेस्टिंग सब्जेक्ट।

रजनी : बस कुछ ऐसा ही समझ लीजिए।

निदेशक : कहिए आप क्या जानना चाहती हैं?

रजनी : जिन प्राइवेट स्कूलों को आप रिकगनाइज़ कर लेते हैं उन्हें बोर्ड शायद 90% ग्रांट देता है।

निदेशक : ***(ज़रा गर्व से)*** जी हाँ, देता है। बोर्ड का काम ही यह है कि शिक्षा के प्रचार-प्रसार में जितना भी हो सके सहयोग करे। इट्स अवर ड्यूटी मैडम।

रजनी : जब इतनी बड़ी एड देते हैं तो आपका कोई कंट्रोल भी रहता होगा स्कूलों पर।

निदेशक : ऑफ़कोर्स। बोर्ड के बहुत से ऐसे नियम हैं जो स्कूलों को मानने होते हैं, स्कूल मानते हैं। सिलेबस बोर्ड बनाता है...फ़ाइनल ईयर के एक्ज़ाम्स बोर्ड कंडक्ट करता है।

रजनी : ***(निदेशक के चेहरे पर नज़रें गड़ाकर)*** स्कूलों में आजकल प्राइवेट ट्यूशंस का जो सिलसिला चला हुआ है, ट्यूशंस क्या बच्चों को लूटने का जो धंधा चला हुआ है, उसके बारे में आपका बोर्ड क्या करता है?

निदेशक : ***(बड़े सहज भाव से)*** इसमें धंधे की क्या बात है? जब किसी का बच्चा कमज़ोर होता है तभी उसके माँ-बाप ट्यूशन लगवाते हैं। अगर लगे कि कोई टीचर लूट रहा है तो उस टीचर से न लें ट्यूशन, किसी और के पास चले जाएँ...यह कोई मजबूरी तो है नहीं।

रजनी : बच्चा कमज़ोर नहीं, होशियार है...बहुत होशियार...उसके बावजूद उसका टीचर लगातार उसे कोंचता रहता है कि वह ट्यूशन ले...वह ट्यूशन ले वरना पछताएगा। लेकिन बच्चे के माँ-बाप को ज़रूरी नहीं लगता और वे नहीं लगवाते। जानते हैं क्या हुआ? मैथ्स का पूरा पेपर ठीक करने के बावजूद उसे कुल 72 नंबर मिलते हैं, जानते हैं क्यों?. ..क्योंकि उसने टीचर के बार-बार कहने पर भी ट्यूशन नहीं ली।

निदेशक : वैरी सैड! हैडमास्टर को एक्शन लेना चाहिए ऐसे टीचर के खिलाफ़।

रजनी : क्या खूब! आप कहते हैं कि हैडमास्टर को एक्शन लेना चाहिए... हैडमास्टर कहते हैं मैं कुछ नहीं कर सकता, तब करेगा कौन? मैं पूछती हूँ कि ट्यूशन के नाम पर चलने वाले इस घिनौने रैकेट को तोड़ने के लिए दखलअंदाज़ी नहीं करनी चाहिए आपको, आपके बोर्ड को? ***(चेहरा तमतमा जाता है)***

निदेशक : लेकिन हमारे पास तो आज तक किसी पेरेंट से इस तरह की कोई शिकायत नहीं आई।

रजनी : यानी की शिकायत आने पर ही आप इस बारे में कुछ सोच सकते हैं। वैसे शिक्षा के नाम पर दिन-दहाड़े चलने वाली इस दुकानदारी की आपके ***(बहुत ही व्यंग्यात्मक ढंग से)*** बोर्ड ऑफ एजुकेशन को कोई जानकारी ही नहीं, कोई चिंता ही नहीं?

निदेशक : कैसी बात करती हैं आप? कितने इंपोर्टेंट मैटर्स रहते हैं हम लोगों के पास? अभी पिछले छह महीने से तो नई शिक्षा प्रणाली को लेकर ही कितने सेमिनार्स ऑर्गनाइज़ किए हैं हमने?

रजनी : ***(व्यंग्य से)*** ओह, इंपोर्टेंट मैटर्स, नई शिक्षा प्रणाली। अरे पहले इस शिक्षा प्रणाली के छेदों को तो रोकिए वरना बच्चों के भविष्य के साथ-साथ आपकी नई शिक्षा प्रणाली भी छनकर गड्ढे में चली जाएगी।

निदेशक : ***(थोड़े गुस्से के साथ)*** आप ही पहली महिला हैं, और हो सकता है कि आखिरी भी हों, जो इस तरह की शिकायत लेकर आई हैं।

रजनी : ठीक है तो फिर आपके पास शिकायत का ढेर ही लगवाकर रहूँगी। ***(झटके से उठकर बाहर चली जाती है, निदेशक देखता रहता है, फिर कंधे उचका देता है।)***

(अब मोंटाज में कुछ दृश्य दिखाए जाएँ। रजनी .फ़ोन कर रही है। मेज़ पर कुछ पत्र रखे हैं और रजनी एक रजिस्टर में उनके नाम पते उतार रही है।

साथ में एक-दो महिलाएँ और भी हैं। फिर एक के बाद एक तीन-चार घरों में माँ-बाप से मिल रही है उन्हें समझा रही है। साथ में लीला बेन और तीन-चार महिलाएँ और भी हैं।)

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(किसी अखबार का दफ़्तर। कमरे में संपादक बैठे हैं, साथ में तीन-चार स्त्रियों के साथ रजनी बैठी है।)

संपादक : आपने तो इसे बाकायदा एक आंदोलन का रूप ही दे दिया। बहुत अच्छा किया। इसके बिना यहाँ चीज़ें बदलती भी तो नहीं हैं। शिक्षा के क्षेत्र में फैली इस दुकानदारी को तो बंद होना ही चाहिए।

रजनी : ***(एकाएक जोश में आकर)*** आप भी महसूस करते हैं न ऐसा?... तो फिर साथ दीजिए हमारा। अखबार यदि किसी इश्यू को उठा ले और लगातार उस पर चोट करता रहे तो फिर वह थोड़े से लोगों की बात नहीं रह जाती। सबकी बन जाती है...आँख मूँदकर नहीं रह सकता फिर कोई उससे। आप सोचिए ज़रा अगर इसके खिलाफ़ कोई नियम बनता है तो ***(आवेश के मारे जैसे बोला नहीं जा रहा है।)*** कितने पेरेंट्स को राहत मिलेगी...कितने बच्चों का भविष्य सुधर जाएगा, उन्हें अपनी मेहनत का फल मिलेगा, माँ-बाप के पैसे का नहीं, ...शिक्षा के नाम पर बचपन से ही उनके दिमाग में यह तो नहीं भरेगा कि पैसा ही सब कुछ है...वे...वे...

संपादक : ***(हँसकर)*** बस-बस मैं समझ गया आपकी सारी तकलीफ़, आपका सारा गुस्सा।

रजनी : तो फिर दीजिए हमारा साथ...उठाइए इस इश्यू को। लगातार लिखिए और धुआँधार लिखिए।

संपादक : इसमें आप अखबारवालों को अपने साथ ही पाएँगी। अमित के उदाहरण से आपकी सारी बात मैंने नोट कर ली है। एक अच्छा-सा राइट-अप तैयार करके पी.टी.आई. के द्वारा मैं एक साथ फ़्लैश करवाता हूँ।

रजनी : ***(गद्गद होते हुए)*** एक काम और कीजिए। 25 तारीख को हम लोग पेरेंट्स की एक मीटिंग कर रहे हैं, राइट-अप के साथ इसकी सूचना भी दे दीजिए तो सब लोगों तक खबर पहुँच जाएगी। व्यक्तिगत तौर पर तो हम मुश्किल से सौ-सवा सौ लोगों से संपर्क कर पाए हैं... वह भी रात-दिन भाग-दौड़ करके ***(ज़रा-सा रुककर)*** अधिक-से-अधिक लोगों के आने के आग्रह के साथ सूचना दीजिए।

संपादक : दी। ***(सब लोग हँस पड़ते हैं।)***

रजनी : ये हुई न कुछ बात।

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(मीटिंग का स्थान। बाहर कपड़े का बैनर लगा हुआ है। बड़ी संख्या में लोग आ रहे हैं और भीतर जा रहे हैं, लोग खुश हैं, लोगों में जोश है। विरोध और विद्रोह का पूरा माहौल बना हुआ है। दृश्य कटकर अंदर जाता है। हॉल भरा हुआ है। एक ओर प्रेस वाले बैठे हैं, इसे बाकायदा फ़ोकस करना है। एक महिला माइक पर से उतरकर नीचे आती है। हॉल में तालियों की गड़गड़ाहट। अब मंच पर से उठकर रजनी माइक पर आती है। पहली पंक्ति में रजनी के पति भी बैठे हैं।)

बहनों और भाइयों,

इतनी बड़ी संख्या में आपकी उपस्थिति और जोश ही बता रहा है कि अब हमारी मंज़िल दूर नहीं है। इन दो महीनों में लोगों से मिलने पर इस समस्या के कई पहलू हमारे सामने आए...कुछ अभी आप लोगों ने भी यहाँ सुने। ***(कुछ रुककर)*** यह भी सामने आया कि बहुत से बच्चों के लिए ट्यूशन ज़रूरी भी है। माँएँ इस लायक नहीं होतीं कि अपने बच्चों को पढ़ा सकें और पिता ***(ज़रा रुककर)*** जैसे वे घर के और

किसी काम में ज़रा-सी भी मदद नहीं करते, बच्चों को भी नहीं पढ़ाते। ***(ठहाका, कैमरा उसके पति पर भी जाए)*** तब कमज़ोर बच्चों के लिए ट्यूशन ज़रूरी भी हो जाती है। ***(रुककर)*** बड़ा अच्छा लगा जब टीचर्स की ओर से भी एक प्रतिनिधि ने आकर बताया कि कई प्राइवेट स्कूलों में तो उन्हें इतनी कम तनख्वाह मिलती है कि ट्यूशन न करें तो उनका गुज़ारा ही न हो। कई जगह तो ऐसा भी है कि कम तनख्वाह देकर ज़्यादा पर दस्तखत करवाए जाते हैं। ऐसे टीचर्स से मेरा अनुरोध है कि वे संगठित होकर एक आंदोलन चलाएँ और इस अन्याय का पर्दाफ़ाश करें ***(हॉल में बैठा हुआ पति धीरे से फुसफुसाता है, लो, अब एक और आंदोलन का मसाला मिल गया, कैमरा फिर रजनी पर)*** इसलिए अब हम अपनी समस्या से जुड़ी सारी बातों को नज़र में रखते हुए ही बोर्ड के सामने यह प्रस्ताव रखेंगे कि वह ऐसा नियम बनाए ***(एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए)*** कि कोई भी टीचर अपने ही स्कूल के छात्रों का ट्यूशन नहीं करेगा। ***(रुककर)*** ऐसी स्थिति में बच्चों के साथ ज़ोर-ज़बरदस्ती करने, उनके नंबर काटने की गंदी हरकतें अपने आप बंद हो जाएँगी। साथ ही यह भी हो कि इस नियम को तोड़ने वाले टीचर्स के खिलाफ़ सख्त-से-सख्त कार्यवाही की जाएगी...। अब आप लोग अपनी राय दीजिए।

(सारा हॉल, एप्रूव्ड, एप्रूव्ड की आवाज़ों और तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठता है।)

दृश्य समाप्त

नया दृश्य

(रजनी का फ़्लैट। सवेरे का समय। कमरे में पति अखबार पढ़ रहा है। पहला पृष्ठ पलटते ही रजनी की तस्वीर दिखाई देती है, जल्दी-जल्दी पढ़ता है, फिर एकदम चिल्लाता है।)

पति : अरे रजनी...रजनी, सुनो तो बोर्ड ने तुम लोगों का प्रस्ताव ज्यों-का-त्यों स्वीकार कर लिया।

रजनी : ***(भीतर से दौड़ती हुई आती है। अखबार छीनकर जल्दी-जल्दी पढ़ती है। चेहरे पर संतोष, प्रसन्नता और गर्व का भाव।)***

रजनी : तो मान लिया गया हमारा प्रस्ताव...बिलकुल जैसा का तैसा और बन गया यह नियम। ***(खुशी के मारे अखबार को ही छाती से चिपका लेती है।)*** मैं तो कहती हूँ कि अगर डटकर मुकाबला किया जाए तो कौन-सा ऐसा अन्याय है, जिसकी धज्जियाँ न बिखेरी जा सकती हैं।

पति : ***(मुग्ध भाव से उसे देखते हुए)*** आई एम प्राउड ऑफ यू रजनी...रियली, रियली...आई एम वैरी प्राउड ऑफ यू।

रजनी : ***(इतराते हुए)*** हूँ ऽऽ दो महीने तक लगातार मेरी धज्जियाँ बिखेरने के बाद। ***(दोनों हँसते हैं।)***

(लीला बेन, कांतिभाई और अमित का प्रवेश)

लीला बेन : उस दिन तुम्हारी जो रसमलाई रह गई, वह आज खाओ।

कांतिभाई : और सबके हिस्से की तुम्हीं खाओ।

(अमित दौड़कर अपने हाथ से उसे रसमलाई खिलाने जाता है पर रजनी उसे अमित के मुँह में ही डाल देती है।)
(सब हँसते हैं। हँसी के साथ ही धीरे-धीरे दृश्य समाप्त हो जाता है।)

अभ्यास

पाठ के साथ

1. रजनी ने अमित के मुद्दे को गंभीरता से लिया, क्योंकि –
   क. वह अमित से बहुत स्नेह करती थी।
   ख. अमित उसकी मित्र लीला का बेटा था।
   ग. वह अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने की सामर्थ्य रखती थी।
   घ. उसे अखबार की सुर्खियों में आने का शौक था।
2. ***जब किसी का बच्चा कमज़ोर होता है, तभी उसके माँ-बाप ट्यूशन लगवाते हैं। अगर लगे कि कोई टीचर लूट रहा है, तो उस टीचर से न ले ट्यूशन, किसी और के पास चले जाएँ... यह कोई मजबूरी तो है नहीं***– प्रसंग का उल्लेख करते हुए बताएँ कि यह संवाद आपको किस सीमा तक सही या गलत लगता है, तर्क दीजिए।
3. ***तो एक और आंदोलन का मसला मिल गया***– फुसफुसाकर कही गई यह बात–
   क. किसने किस प्रसंग में कही?
   ख. इससे कहने वाले की किस मानसिकता का पता चलता है।
4. रजनी धारावाहिक की इस कड़ी की मुख्य समस्या क्या है? क्या होता अगर–
   क. अमित का पर्चा सचमुच खराब होता।
   ख. संपादक रजनी का साथ न देता।

पाठ के आस-पास

1. ***गलती करने वाला तो है ही गुनहगार, पर उसे बर्दाश्त करने वाला भी कम गुनहगार नहीं होता***– इस संवाद के संदर्भ में आप सबसे ज़्यादा किसे और क्यों गुनहगार मानते हैं?
2. स्त्री के चरित्र की बनी बनाई धारणा से रजनी का चेहरा किन मायनों में अलग है?
3. पाठ के अंत में मीटिंग के स्थान का विवरण कोष्ठक में दिया गया है। यदि इसी दृश्य को फ़िल्माया जाए तो आप कौन-कौन से निर्देश देंगे?
4. इस पटकथा में दृश्य-संख्या का उल्लेख नहीं है। मगर गिनती करें तो सात दृश्य हैं। आप किस आधार पर इन दृश्यों को अलग करेंगे?

भाषा की बात

1. निम्नलिखित वाक्यों के रेखांकित अंश में जो अर्थ निहित हैं उन्हें स्पष्ट करते हुए लिखिए–
   (क) *वरना तुम तो मुझे काट ही देतीं।*
   (ख) *अमित जबतक तुम्हारे भोग नहीं लगा लेता, हमलोग खा थोडे ही सकते हैं।*
   (ग) *बस-बस, मैं समझ गया।*

कोड मिक्सिंग/कोड स्विचिंग

1. ***कोई रिसर्च प्रोजेक्ट है क्या? व्हेरी इंटरेस्टिंग सब्जेक्ट।***
   ऊपर दिए गए संवाद में दो पंक्तियाँ हैं पहली पंक्ति में रेखांकित अंश हिंदी से अलग अंग्रेज़ी भाषा का है जबकि शेष हिंदी भाषा का है। दूसरा वाक्य पूरी तरह अंग्रेज़ी में है। हम बोलते समय कई बार एक ही वाक्य में दो भाषाओं (कोड) का इस्तेमाल करते हैं। यह कोड मिक्सिंग कहलाता है। जबकि एक भाषा में बोलते-बोलते दूसरी भाषा का इस्तेमाल करना कोड स्विचिंग कहलाता है। पाठ में से कोड मिक्सिंग और कोड स्विचिंग के तीन-तीन उदाहरण चुनिए और हिंदी भाषा में रूपांतरण करके लिखिए।

पटकथा की दुनिया

- आपने दूरदर्शन या सिनेमा हॉल में अनेक चलचित्र देखे होंगे। पर्दे पर चीज़ें जिस सिलसिलेवार ढंग से चलती हैं उसमें पटकथा का विशेष योगदान होता है। पटकथा कई महत्वपूर्ण संकेत देती है, जैसे–
  - कहानी/कथा
  - संवादों की विषय-वस्तु
  - संवाद अदायगी का तरीका
  - आस-पास का वातावरण/दृश्य
  - दृश्य का बदलना
- इस पुस्तक के अपने पसंदीदा पाठ के किसी एक अंश को पटकथा में रूपांतरित कीजिए।

शब्द-छवि

कांग्रेचुलेशंस	-	बधाई हो, मुबारक हो
हाफ़-ईयरली	-	छमाही, अर्द्धवार्षिक
बेगुनाह	-	जिसका कोई गुनाह न हो, निर्दोष

हिकारत - उपेक्षा

डायरेक्टर ऑफ़ एजुकेशन - शिक्षा निदेशक

रिकगनाइज़ - मान्य

रिसर्च प्रोजेक्ट - शोध परियोजना

कंडक्ट - संचालन

सुनतीच नई - सुनती ही नहीं

दखलअंदाज़ी - हस्तक्षेप

पेरेंट - अभिभावक

इंपोर्टेंट मैटर्स - महत्वपूर्ण विषय

बाकायदा - कायदे के अनुसार

इश्यू - मुद्दा

फ़ोकस करना - ध्यान में लाना

एप्रूव्ड - स्वीकृत

मोंटाज - दृश्य मीडिया (टेलीविज़न में) में जब अलग दृश्यों या छवियों को एक साथ इकट्ठा कर उसे संयोजित किया जाता है तो उसे मोंटाज कहते हैं।

अफ़सोस इस बात का नहीं है कि मौत बेरहम है।
अफ़सोस इस बात का है कि अस्पताल बेरहम क्यों हैं?
(आईने के सामने)

कृश्नचंदर

जन्मः सन् 1914, पंजाब के वज़ीराबाद गाँव (ज़िला-गुजरांकलां)

प्रमुख रचनाएँ: एक गिरजा-ए-खंदक, यूकेलिप्ट्स की डाली *(कहानी-संग्रह)*; शिकस्त, ज़रगाँव की रानी, सड़क वापस जाती है, आसमान रौशन है, एक गधे की आत्मकथा, अन्नदाता, हम वहशी हैं, जब खेत जागे, बावन पत्ते, एक वायलिन समंदर के किनारे, कागज़ की नाव, मेरी यादों के किनारे *(उपन्यास)*

सम्मानः साहित्य अकादमी सहित बहुत से पुरस्कार

मृत्युः सन् 1977

प्रेमचंद के बाद जिन कहानीकारों ने कहानी विधा को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया, उनमें उर्दू कथाकार कृश्नचंदर का नाम महत्वपूर्ण है। प्रगतिशील लेखक संघ से उनका गहरा संबंध था, जिसका असर उनकी रचनाओं में स्पष्ट रूप से झलकता है। कृश्नचंदर ऐसे गिने-चुने लेखकों में आते हैं, जिन्होंने बाद में चलकर लेखन को ही रोज़ी-रोटी का सहारा बनाया।

कृश्नचंदर की प्राथमिक शिक्षा पुंछ (जम्मू एवं कश्मीर) में हुई। उच्च शिक्षा के लिए वे सन् 1930 में लाहौर आ गए और फॉरमेन क्रिश्चियन कॉलेज में प्रवेश लिया। 1934 में पंजाब विश्वविद्यालय से उन्होंने अंग्रेज़ी में एम.ए. किया। बाद में उनका जुड़ाव फ़िल्म जगत से हो गया और अंतिम समय तक वे मुंबई में ही रहे।

यों तो कृश्नचंदर ने उपन्यास, नाटक, रिपोर्ताज और लेख भी बहुत से लिखे हैं, लेकिन उनकी पहचान कहानीकार के रूप में अधिक हुई है। **महालक्ष्मी का पुल**, **आईने के सामने** आदि उनकी मशहूर कहानियाँ हैं। उनकी लोकप्रियता इस कारण भी है कि वे काव्यात्मक रोमानियत और शैली की विविधता के कारण अलग मुकाम बनाते हैं। कृश्नचंदर उर्दू कथा-साहित्य में अनूठी रचनाशीलता के लिए बहुचर्चित रहे हैं। वे प्रगतिशील और यथार्थवादी नज़रिए से लिखे जाने वाले साहित्य के पक्षधर थे।

जामुन का पेड़ कृश्नचंदर की एक प्रसिद्ध हास्य-व्यंग्य कथा है। हास्य-व्यंग्य के लिए चीज़ों को अनुपात से ज़्यादा फैला-फुलाकर दिखलाने की परिपाटी पुरानी है और यह कहानी भी उसका अनुपालन करती है। इसलिए यहाँ घटनाएँ अतिशयोक्ति-पूर्ण और अविश्वसनीय जान पड़ें, तो कोई हैरत नहीं। विश्वसनीयता ऐसी रचनाओं के मूल्यांकन की कसौटी नहीं हो सकती। प्रस्तुत पाठ में हँसते-हँसते ही हमारे भीतर इस बात की समझ पैदा होती है कि कार्यालयी तौर-तरीकों में पाया जाने वाला विस्तार कितना निरर्थक और पदानुक्रम कितना हास्यास्पद है। बात यहीं तक नहीं रहती? इस व्यवस्था के संवेदनशून्य एवं अमानवीय होने का पक्ष भी हमारे सामने आता है।

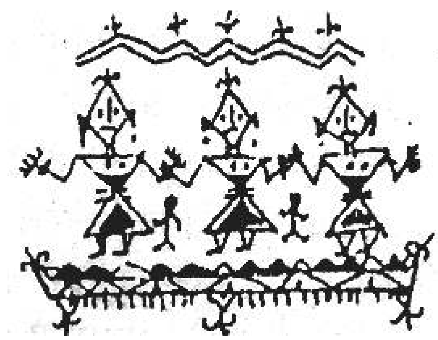

जामुन का पेड़

रात को बड़े ज़ोर का झक्कड़ चला। सेक्रेटेरियेट के लॉन में जामुन का एक पेड़ गिर पड़ा। सवेरे को जब माली ने देखा, तो उसे पता चला कि पेड़ के नीचे एक आदमी दबा पड़ा है।

माली दौड़ा-दौड़ा चपरासी के पास गया, चपरासी दौड़ा-दौड़ा क्लर्क के पास गया, क्लर्क दौड़ा-दौड़ा सुपरिंटेंडेंट के पास गया, सुपरिंटेंडेंट दौड़ा-दौड़ा बाहर लॉन में आया। मिनटों में गिरे हुए पेड़ के नीचे दबे हुए आदमी के चारों ओर भीड़ इकट्ठी हो गई।

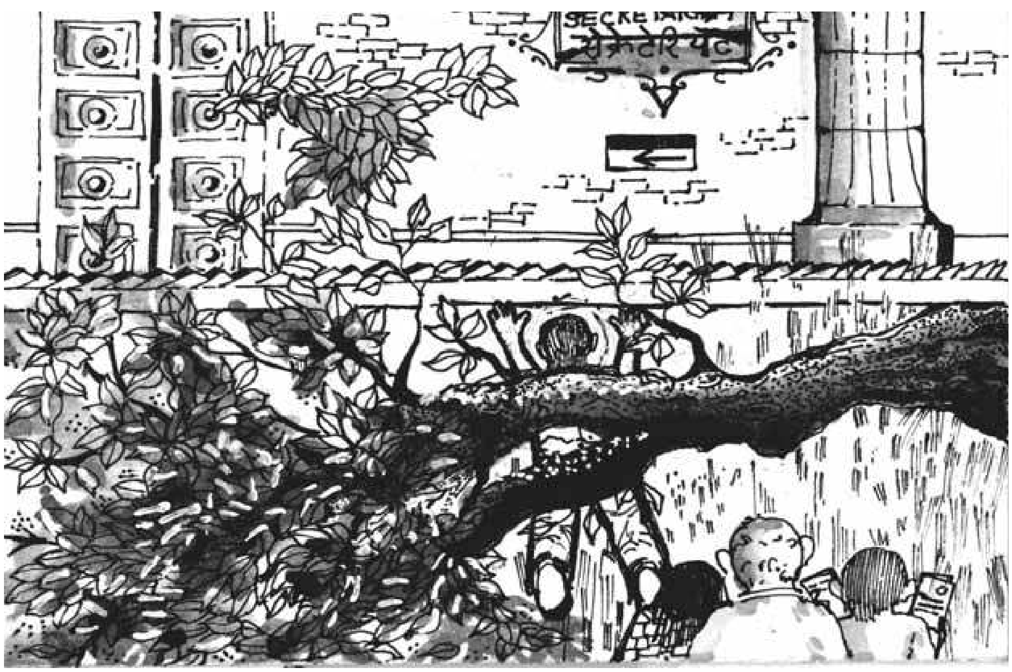

"बेचारा जामुन का पेड़। कितना फलदार था!" एक क्लर्क बोला।

"और इसकी जामुनें कितनी रसीली होती थीं!" दूसरा क्लर्क याद करते हुए बोला।

"मैं फलों के मौसम में झोली भरकर ले जाता था, मेरे बच्चे इसकी जामुनें कितनी खुशी से खाते थे।" तीसरा क्लर्क लगभग रुआँसा होकर बोला।

"मगर यह आदमी?" माली ने दबे हुए आदमी की तरफ़ इशारा किया।

"हाँ, यह आदमी।" सुपरिंटेंडेंट सोच में पड़ गया।

"पता नहीं ज़िंदा है कि मर गया?" एक चपरासी ने पूछा।

"मर गया होगा, इतना भारी पेड़ जिसकी पीठ पर गिरे वह बच कैसे सकता है?" दूसरा चपरासी बोला।

"नहीं, मैं ज़िंदा हूँ।" दबे हुए आदमी ने बड़ी कठिनता से कराहते हुए कहा।

"ज़िंदा है!" एक क्लर्क ने ताज्जुब से कहा।

"पेड़ को हटाकर इसे जल्दी से निकाल लेना चाहिए।" माली ने सुझाव दिया।

"मुश्किल मालूम होता है," एक सुस्त, कामचोर और मोटा चपरासी बोला, "पेड़ का तना बहुत भारी और वज़नी है।"

"क्या मुश्किल है?" माली बोला, "अगर सुपरिंटेंडेंट साहब हुक्म दें, तो अभी पंद्रह-बीस माली, चपरासी और क्लर्क लगाकर पेड़ के नीचे से दबे हुए आदमी को निकाला जा सकता है।"

"माली ठीक कहता है," बहुत-से क्लर्क एक साथ बोल पड़े,"लगाओ ज़ोर, हम तैयार हैं।"

एक साथ बहुत से लोग पेड़ को उठाने को तैयार हो गए।

"ठहरो!" सुपरिंटेंडेंट बोला, "मैं अंडर-सेक्रेटरी से पूछ लूँ।"

सुपरिंटेंडेंट अंडर-सेक्रेटरी के पास गया। अंडर-सेक्रेटरी डिप्टी सेक्रेटरी के पास गया। डिप्टी सेक्रेटरी ज्वाइंट सेक्रेटरी के पास गया। ज्वाइंट सेक्रेटरी चीफ़ सेक्रेटरी के पास गया। चीफ़ सेक्रेटरी मिनिस्टर के पास गया। मिनिस्टर ने चीफ़ सेक्रेटरी से कुछ कहा। चीफ़ सेक्रेटरी ने ज्वाइंट सेक्रेटरी से कुछ कहा। ज्वाइंट सेक्रेटरी ने डिप्टी

सेक्रेटरी से कहा। डिप्टी सेक्रेटरी ने अंडर सेक्रेटरी से कहा। फ़ाइल चलती रही। इसी में आधा दिन बीत गया।

दोपहर के खाने पर दबे हुए आदमी के चारों ओर बहुत भीड़ हो गई थी। लोग तरह-तरह की बातें कर रहे थे। कुछ मनचले क्लर्कों ने समस्या को खुद ही सुलझाना चाहा। वे हुकूमत के फैसले का इंतज़ार किए बिना पेड़ को अपने-आप हटा देने का निश्चय कर रहे थे कि इतने में सुपरिंटेंडेंट फ़ाइल लिए भागा-भागा आया। बोला– "हमलोग खुद इस पेड़ को नहीं हटा सकते। हमलोग व्यापार-विभाग से संबंधित हैं, और यह पेड़ की समस्या है, जो कृषि-विभाग के अधीन है। मैं इस फ़ाइल को अर्जेंट मार्क करके कृषि-विभाग में भेज रहा हूँ– वहाँ से उत्तर आते ही इस पेड़ को हटवा दिया जाएगा।''

दूसरे दिन कृषि-विभाग से उत्तर आया कि पेड़ व्यापार-विभाग के लॉन में गिरा है, इसलिए इस पेड़ को हटवाने या न हटवाने की ज़िम्मेदारी व्यापार-विभाग पर पड़ती है।

यह उत्तर पढ़कर व्यापार विभाग को गुस्सा आ गया। उन्होंने फौरन लिखा कि पेड़ों को हटवाने या न हटवाने की ज़िम्मेदारी कृषि-विभाग पर लागू होती है, व्यापार विभाग का इससे कोई संबंध नहीं है।

दूसरे दिन भी फ़ाइल चलती रही। शाम को जवाब आ गया–हम इस मामले को हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट के हवाले कर रहे हैं, क्योंकि यह एक फलदार पेड़ का मामला है और एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट अनाज और खेती-बाड़ी के मामलों में फ़ैसला करने का हकदार है। जामुन का पेड़ चूँकि एक फलदार पेड़ है, इसलिए यह पेड़ हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट के अंतर्गत आता है।

रात को माली ने दबे हुए आदमी को दाल-भात खिलाया, जबकि उसके चारों तरफ़ पुलिस का पहरा था कि कहीं लोग कानून को अपने हाथ में लेकर पेड़ को खुद से हटवाने की कोशिश न करें। मगर एक पुलिस कांस्टेबल को दया आ गई और उसने माली को दबे हुए आदमी को खाना खिलाने की इजाज़त दे दी।

माली ने दबे हुए आदमी से कहा, "तुम्हारी फ़ाइल चल रही है, उम्मीद है कल तक फ़ैसला हो जाएगा।''

दबा हुआ आदमी कुछ नहीं बोला।

माली ने पेड़ के तने को ध्यान से देखकर कहा, "अच्छा हुआ कि तना तुम्हारे कूल्हे पर गिरा, अगर कमर पर गिरता तो रीढ़ की हड्डी टूट जाती।''

दबा हुआ आदमी फिर भी कुछ नहीं बोला।

माली ने फिर कहा, "तुम्हारा यहाँ कोई वारिस है तो मुझे उसका अता-पता बताओ, मैं उन्हें खबर देने की कोशिश करूँगा।''

"मैं लावारिस हूँ।'' दबे हुए आदमी ने बड़ी मुश्किल से कहा।

माली खेद प्रकट करता हुआ वहाँ से हट गया।

तीसरे दिन हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट से जवाब आ गया। बड़ा कड़ा जवाब था और व्यंग्यपूर्ण!

हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट का सेक्रेटरी साहित्य-प्रेमी आदमी जान पड़ता था। उसने लिखा था, "आश्चर्य है, इस समय जब हम 'पेड़ लगाओ' स्कीम ऊँचे स्तर पर चला रहे हैं, हमारे देश में ऐसे सरकारी अफ़सर मौजूद हैं जो पेड़ों को काटने का सुझाव देते हैं, और वह भी एक फलदार पेड़ को, और वह भी जामुन के पेड़ को, जिसके फल जनता बड़े चाव से खाती है! हमारा विभाग किसी हालत में इस फलदार वृक्ष को काटने की इजाज़त नहीं दे सकता।''

"अब क्या किया जाए?'' इसपर एक मनचले ने कहा, "अगर पेड़ काटा नहीं जा सकता, तो इस आदमी ही को काटकर निकाल लिया जाए।''

"यह देखिए,'' उस आदमी ने इशारे से बताया, "अगर इस आदमी को ठीक बीच में से, यानी धड़ से काटा जाए तो आधा आदमी इधर से निकल आएगा, आधा आदमी उधर से बाहर आ जाएगा और पेड़ वहीं का वहीं रहेगा।

"मगर इस तरह तो मैं मर जाऊँगा।'' दबे हुए आदमी ने आपत्ति प्रकट करते हुए कहा।

"यह भी ठीक कहता है।'' एक क्लर्क बोला।

आदमी को काटने वाली युक्ति प्रस्तुत करने वाले ने भरपूर विरोध किया, "आप जानते नहीं हैं, आजकल प्लास्टिक सर्जरी कितनी उन्नति कर चुकी है। मैं तो समझता हूँ, अगर इस आदमी को बीच में से काटकर निकाल लिया जाए तो प्लास्टिक सर्जरी से धड़ के स्थान से इस आदमी को फिर से जोड़ा जा सकता है।"

इस बार फ़ाइल को मेडिकल डिपार्टमेंट में भेज दिया गया। मेडिकल डिपार्टमेंट ने फ़ौरन एक्शन लिया और जिस दिन फ़ाइल उनके विभाग में पहुँची, उसके दूसरे ही दिन उन्होंने अपने विभाग का सबसे योग्य प्लास्टिक सर्जन छान-बीन के लिए भेज दिया। सर्जन ने दबे हुए आदमी को अच्छी तरह टटोलकर, उसका स्वास्थ्य देखकर, खून का दबाव देखा, नाड़ी की गति को परखा, दिल और फेफड़ों की जाँच करके रिपोर्ट भेज दी कि इस आदमी का प्लास्टिक ऑपरेशन तो हो सकता है, और ऑपरेशन सफल भी होगा, मगर आदमी मर जाएगा।

इसलिए यह फ़ैसला भी रद्द कर दिया गया।

रात को माली ने दबे हुए आदमी के मुँह में खिचड़ी डालते हुए उसे बताया कि अब मामला ऊपर चला गया है। सुना है कि कल सेक्रेटेरियेट के सारे सेक्रेटेरियों की मीटिंग होगी। उसमें तुम्हारा केस रखा जाएगा। उम्मीद है सब काम ठीक हो जाएगा।

दबा हुआ आदमी एक आह भरकर धीरे से बोला–

"ये तो माना कि तगाफ़ुल न करोगे लेकिन
*खाक हो जाएँगे हम तुमको खबर होने तक!"**

माली ने अचंभे से मुँह में उँगली दबा ली और चकित भाव से बोला, "क्या तुम शायर हो?"

दबे हुए आदमी ने धीरे से सिर हिला दिया।

दूसरे दिन माली ने चपरासी को बताया, चपरासी ने क्लर्क को, क्लर्क ने हैड-क्लर्क को। थोड़ी ही देर में सेक्रेटेरियेट में यह अफ़वाह फैल गई कि दबा हुआ आदमी शायर है। बस, फिर क्या था। लोगों का झुंड का झुंड शायर को देखने के लिए

---

* *मिर्ज़ा गालिब का शेर*

उमड़ पड़ा। इसकी चर्चा शहर में भी फैल गई और शाम तक गली-गली से शायर जमा होने शुरू हो गए। सेक्रेटेरियेट का लॉन भाँति-भाँति के कवियों से भर गया और दबे हुए आदमी के चारों ओर कवि-सम्मेलन का-सा वातावरण उत्पन्न हो गया। सेक्रेटेरियेट के कई क्लर्क और अंडर सेक्रेटरी तक जिन्हें साहित्य और कविता से लगाव था, रुक गए। कुछ शायर दबे हुए आदमी को अपनी कविताएँ और दोहे सुनाने लगे। कई क्लर्क उसको अपनी कविता पर आलोचना करने को मजबूर करने लगे।

जब यह पता चला कि दबा हुआ आदमी एक कवि है, तो सेक्रेटेरियेट की सब-कमेटी ने फैसला किया कि– चूँकि दबा हुआ आदमी एक कवि है, इसलिए इस फ़ाइल का संबंध न एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट से है, न हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट से, बल्कि सिर्फ़ कल्चरल डिपार्टमेंट से है। कल्चरल डिपार्टमेंट से अनुरोध किया गया कि जल्द से जल्द मामले का फ़ैसला करके अभागे कवि को इस फलदार पेड़ से छुटकारा दिलाया जाए।

फ़ाइल कल्चरल डिपार्टमेंट के अनेक विभागों से गुज़रती हुई साहित्य अकादमी के सेक्रेटरी के पास पहुँची। बेचारा सेक्रेटरी उसी समय अपनी गाड़ी में सवार होकर सेक्रेटेरियेट पहुँचा और दबे हुए आदमी से इंटरव्यू लेने लगा।

"तुम कवि हो?'' उसने पूछा।

"जी हाँ।'' दबे हुए आदमी ने जवाब दिया।

"किस उपनाम से शोभित हो?''

"ओस।''

"ओस?'' सेक्रेटरी ज़ोर से चीखा, "क्या तुम वही 'ओस' हो, जिसका गद्य-संग्रह 'ओस के फूल' अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है?"

दबे हुए कवि ने हुँकार में सिर हिलाया।

"क्या तुम हमारी अकादमी के मेंबर हो?'' सेक्रेटरी ने पूछा।

"नहीं!"

"आश्चर्य है," सेक्रेटरी ज़ोर से चीखा, "इतना बड़ा कवि– 'ओस के फूल' का लेखक और हमारी अकादमी का मेंबर नहीं है। उफ़! कैसी भूल हो गई हमसे, कितना बड़ा कवि और कैसी अँधेरी गुमनामी में दबा पड़ा है।''

"गुमनामी में नहीं,– एक पेड़ के नीचे दबा हूँ, कृपया मुझे इस पेड़ के नीचे से निकालिए।''

"अभी बंदोबस्त करता हूँ।'' सेक्रेटरी फ़ौरन बोला और फ़ौरन उसने अपने विभाग में रिपोर्ट की।

दूसरे दिन सेक्रेटरी भागा-भागा कवि के पास आया और बोला, "मुबारक हो, मिठाई खिलाओ। हमारी सरकारी साहित्य अकादमी ने तुम्हें अपनी केंद्रीय शाखा का मेंबर चुन लिया है, यह लो चुनाव-पत्र।''

"मगर मुझे इस पेड़ के नीचे से तो निकालो!'' दबे हुए आदमी ने कराहकर कहा। उसकी साँस बड़ी मुश्किल से चल रही थी और उसकी आँखों से मालूम होता था कि वह घोर पीड़ा और दुःख में पड़ा है।

"यह हम नहीं कर सकते।'' सेक्रेटरी ने कहा, "और जो हम कर सकते थे, वह हमने कर दिया है, बल्कि हम तो यहाँ तक कर सकते हैं कि अगर तुम मर जाओ, तो तुम्हारी बीवी को वज़ीफा दे सकते हैं, अगर तुम दरख्वास्त दो, तो हम वह भी कर सकते हैं।''

"मैं अभी जीवित हूँ।'' कवि रुक-रुककर बोला, "मुझे ज़िंदा रखो।''

"मुसीबत यह है,'' सरकारी साहित्य अकादमी का सेक्रेटरी हाथ मलते हुए बोला, "हमारा विभाग सिर्फ़ कल्चर से संबंधित है। पेड़ काटने का मामला कलम-दवात से नहीं, आरी-कुल्हाड़ी से संबंधित है। उसके लिए हमने फ़ॉरेस्ट डिपार्टमेंट को लिख दिया है और अर्जेंट लिखा है।''

शाम को माली ने आकर दबे हुए आदमी को बताया, "कल फ़ॉरेस्ट डिपार्टमेंट के आदमी आकर इस पेड़ को काट देंगे और तुम्हारी जान बच जाएगी।''

माली बहुत खुश था। दबे हुए आदमी का स्वास्थ्य जवाब दे रहा था, मगर वह किसी न किसी तरह अपने जीवन के लिए लड़े जा रहा था। कल तक, कल सवेरे तक...किसी न किसी तरह उसे जीवित रहना है।

दूसरे दिन जब फ़ॉरेस्ट डिपार्टमेंट के आदमी आरी-कुल्हाड़ी लेकर पहुँचे तो उनको पेड़ काटने से रोक दिया गया। मालूम हुआ कि विदेश-विभाग से हुक्म आया था कि इस पेड़ को न काटा जाए। कारण यह था कि इस पेड़ को दस साल पहले पीटोनिया राज्य के प्रधानमंत्री ने सेक्रेटेरियेट के लॉन में लगाया था। अब अगर यह पेड़ काटा गया, तो इस बात का काफ़ी अंदेशा था कि पीटोनिया सरकार से हमारे संबंध सदा के लिए बिगड़ जाएँगे।

"मगर एक आदमी की जान का सवाल है," एक क्लर्क चिल्लाया।

"दूसरी ओर दो राज्यों के संबंधों का सवाल है," दूसरे क्लर्क ने पहले क्लर्क को समझाया, "और यह भी तो समझो कि पीटोनिया सरकार हमारे राज्य को कितनी सहायता देती है– क्या हम उनकी मित्रता की खातिर एक आदमी के जीवन का भी बलिदान नहीं कर सकते?"

"कवि को मर जाना चाहिए।"

"निस्संदेह।"

अंडर सेक्रेटरी ने सुपरिंटेंडेंट को बताया, "आज सवेरे प्रधानमंत्री दौरे से वापस आ गए हैं। आज चार बजे विदेश विभाग इस पेड़ की फ़ाइल उनके सामने पेश करेगा। जो वे फैसला देंगे, वही सबको स्वीकार होगा।"

शाम के पाँच बजे स्वयं सुपरिंटेंडेंट कवि की फ़ाइल लेकर उसके पास आया, "सुनते हो!" आते ही वह खुशी से फ़ाइल को हिलाते हुए चिल्लाया, "प्रधानमंत्री ने इस पेड़ को काटने का हुक्म दे दिया, और इस घटना की सारी अंतर्राष्ट्रीय ज़िम्मेदारी अपने सिर ले ली है। कल यह पेड़ काट दिया जाएगा, और तुम इस संकट से छुटकारा हासिल कर लोगे। सुनते हो? आज तुम्हारी फ़ाइल पूर्ण हो गई।"

मगर कवि का हाथ ठंडा था, आँखों की पुतलियाँ निर्जीव और चींटियों की एक लंबी पाँत उसके मुँह में जा रही थी....।

उसके जीवन की फ़ाइल भी पूर्ण हो चुकी थी।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. ***बेचारा जामुन का पेड़। कितना फलदार था।***
   और इसकी जामुनें कितनी रसीली होती थीं।
   क.ये संवाद कहानी के किस प्रसंग में आए हैं?
   ख.इससे लोगों की कैसी मानसिकता का पता चलता है?
2. दबा हुआ आदमी एक कवि है, यह बात कैसे पता चली और इस जानकारी का फ़ाइल की यात्रा पर क्या असर पड़ा?
3. कृषि-विभाग वालों ने मामले को हॉर्टीकल्चर विभाग को सौंपने के पीछे क्या तर्क दिया?
4. इस पाठ में सरकार के किन-किन विभागों की चर्चा की गई है और पाठ से उनके कार्य के बारे में क्या अंदाज़ा मिलता है?

पाठ के आस-पास

1. कहानी में दो प्रसंग ऐसे हैं, जहाँ लोग पेड़ के नीचे दबे आदमी को निकालने के लिए कटिबद्ध होते हैं। ऐसा कब-कब होता है और लोगों का यह संकल्प दोनों बार किस-किस वजह से भंग होता है।
2. यह कहना कहाँ तक युक्तिसंगत है कि इस कहानी में हास्य के साथ-साथ करुणा की भी अंतर्धारा है। अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दें।
3. यदि आप माली की जगह पर होते, तो हुकूमत के फैसले का इंतज़ार करते या नहीं? अगर हाँ, तो क्यों? और नहीं, तो क्यों?

शीर्षक सुझाइए

कहानी के वैकल्पिक शीर्षक सुझाएँ। निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखकर शीर्षक गढ़े जा सकते हैं–

- कहानी में बार-बार फ़ाइल का ज़िक्र आया है और अंत में ***दबे हुए आदमी के जीवन की फाइल पूर्ण होने*** की बात कही गई है।
- सरकारी दफ़्तरों की लंबी और विवेकहीन कार्यप्रणाली की ओर बार-बार इशारा किया गया है।
- कहानी का मुख्य पात्र उस विवेकहीनता का शिकार हो जाता है।

भाषा की बात

1. नीचे दिए गए अंग्रेज़ी शब्दों के हिंदी प्रयोग लिखिए–
अर्जेंट, फॉरेस्ट डिपार्टमेंट, मेंबर, डिप्टी सेक्रेटरी, चीफ़ सेक्रेटरी, मिनिस्टर, अंडर सेक्रेटरी, हॉर्टीकल्चर डिपार्टमेंट, एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट
2. ***इसकी चर्चा शहर में भी फैल गई और शाम तक गली-गली से शायर जमा होने शुरू हो गए–*** यह एक संयुक्त वाक्य है, जिसमें दो स्वतंत्र वाक्यों को समानाधिकरण समुच्चयबोधक शब्द ***और*** से जोड़ा गया है। संयुक्त वाक्य को इस प्रकार सरल वाक्य में बदला जा सकता है– ***इसकी चर्चा शहर में फैलते ही शाम तक गली-गली से शायर जमा होने शुरू हो गए।*** पाठ में से पाँच संयुक्त वाक्यों को चुनिए और उन्हें सरल वाक्य में रूपांतरित कीजिए।
3. साक्षात्कार अपने-आप में एक विधा है। जामुन के पेड़ के नीचे दबे आदमी के फाइल बंद होने (मृत्यु) के लिए ज़िम्मेदार किसी एक व्यक्ति का काल्पनिक साक्षात्कार करें और लिखें।

शब्द छवि

झक्कड़	-	आँधी
रुआँसा	-	रोनी सूरत
ताज्जुब	-	आश्चर्य
हॉर्टीकल्चर	-	उद्यान कृषि
एग्रीकल्चर	-	कृषि
तगाफ़ुल	-	विलंब, देर, उपेक्षा

सच्ची संस्कृति को दुनिया के हर कोने से प्रेरणा मिलती है, लेकिन वह अपनी ही धरती पर पैदा होती है और उसकी जड़ें जन-मन में समाई रहती हैं।

(उपसंहार, भारत की खोज)

जवाहरलाल नेहरू

जन्म: सन् 1889, इलाहाबाद (उ.प्र.)

प्रमुख रचनाएँ: मेरी कहानी *(आत्मकथा)* विश्व इतिहास की झलक, हिंदुस्तान की कहानी, पिता के पत्र पुत्री के नाम *(हिंदी अनुवाद)*, हिंदुस्तान की समस्याएँ, स्वाधीनता और उसके बाद, राष्ट्रपिता, भारत की बुनियादी एकता, लड़खड़ाती दुनिया आदि *(लेखों और भाषणों का संग्रह)*

मृत्यु: सन् 1964

जवाहरलाल नेहरू का जन्म इलाहाबाद के एक संपन्न परिवार में हुआ। उनके पिता वहाँ के बड़े वकील थे। नेहरू की प्रारंभिक शिक्षा घर पर तथा उच्च शिक्षा इंग्लैंड में हैरो तथा कैम्ब्रिज में हुई। वहीं से वकालत की पढ़ाई भी की लेकिन नेहरू पर गांधी जी का बहुत प्रभाव पड़ा। उनकी पुकार पर वे पढ़ाई छोड़कर आज़ादी की लड़ाई में जुट गए। आगे चलकर सन् 1929 में वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन के अध्यक्ष बने और पूर्ण स्वतंत्रता की माँग की। नेहरू का झुकाव समाजवाद की ओर भी रहा।

सन् 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तो नेहरू जी पहले प्रधानमंत्री बने और भारत के निर्माण में अंत तक जुटे रहे। उन्होंने देश के विकास के लिए कई योजनाएँ बनाईं, जिनमें आर्थिक और औद्योगिक प्रगति तथा वैज्ञानिक अनुसंधान से लेकर साहित्य, कला, संस्कृति आदि क्षेत्र शामिल थे। नेहरू जी बच्चों के बीच ***चाचा नेहरू*** *के रूप*

में जाने जाते थे। शांति, अहिंसा और मानवता के हिमायती नेहरू ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विश्वशांति और पंचशील के सिद्धांतों का प्रचार किया।

प्रस्तुत पाठ ***हिंदुस्तान की कहानी*** *का पाँचवाँ अध्याय है। अंग्रेज़ी से भाषांतर* ***हरिभाऊ उपाध्याय*** *ने किया है। इसमें पं. नेहरू ने बताया है कि किस तरह देश के कोने-कोने में आयोजित जलसों में जाकर वे आम लोगों को बताते थे कि अनेक हिस्सों में बँटा होने के बाद भी हिंदुस्तान एक है। इस अपार फैलाव के बीच एकता के क्या आधार हैं और क्यों भारत* **एक** *देश है, जिसके सभी हिस्सों की नियति एक ही तरीके से बनती-बिगड़ती है—यही पूरे पाठ की विषयवस्तु है। इसी क्रम में पं. नेहरू ने* ***भारत माता*** *शब्द पर भी विचार किया है और उनका निष्कर्ष है कि* ***भारत माता की जय*** *का मतलब है, यहाँ के करोड़ों-करोड़ लोगों की जय। कहने की ज़रूरत नहीं कि अपने छोटे आकार के बावजूद इस लेख का कथ्य अत्यंत विराट और प्रस्तुतीकरण पैना है।*

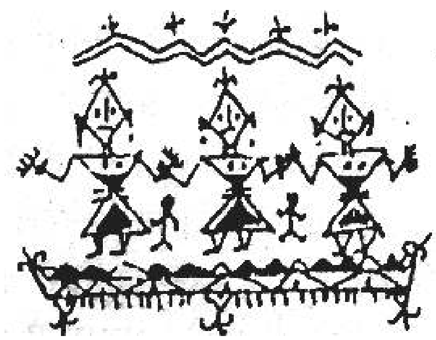

भारत माता

अकसर जब मैं एक जलसे से दूसरे जलसे में जाता होता, और इस तरह चक्कर काटता रहता होता था, तो इन जलसों में मैं अपने सुनने वालों से अपने इस हिंदुस्तान या भारत की चर्चा करता। भारत एक संस्कृत शब्द है और इस जाति के परंपरागत संस्थापक के नाम से निकला हुआ है। मैं शहरों में ऐसा बहुत कम करता, क्योंकि वहाँ के सुनने वाले कुछ ज़्यादा सयाने थे और उन्हें दूसरे ही किस्म की गिज़ा की ज़रूरत थी। लेकिन किसानों से, जिनका नज़रिया महदूद था, मैं इस बड़े देश की चर्चा करता, जिसकी आज़ादी के लिए हम लोग कोशिश कर रहे थे और बताता कि किस तरह देश का एक हिस्सा दूसरे से जुदा होते हुए भी हिंदुस्तान एक था। मैं उन मसलों का ज़िक्र करता, जो उत्तर से लेकर दक्खिन तक और पूरब से लेकर पच्छिम तक, किसानों के लिए यक-साँ थे, और स्वराज्य का भी ज़िक्र करता, जो थोड़े लोगों के लिए नहीं, बल्कि सभी के फ़ायदे के लिए हो सकता था।

मैं उत्तर-पच्छिम में खैबर के दर्रे से लेकर धुर दक्खिन में कन्याकुमारी तक की अपनी यात्रा का हाल बताता और यह कहता कि सभी जगह किसान मुझसे एक-से सवाल करते, क्योंकि उनकी तकलीफ़ें एक-सी थीं–यानी गरीबों, कर्ज़दारों, पूँजीपतियों के शिकंजे, ज़मींदार, महाजन, कड़े लगान और सूद, पुलिस के जुल्म, और ये सभी बातें गुँथी हुई थीं, उस ढद्धे के साथ, जिसे एक विदेशी सरकार ने हम पर लाद रखा था और इनसे छुटकारा भी सभी को हासिल करना था। मैंने इस बात की कोशिश की कि लोग सारे हिंदुस्तान के बारे में सोचें और कुछ हद तक इस बड़ी दुनिया के बारे में भी, जिसके हम एक जुज़ हैं। मैं अपनी बातचीत में चीन, स्पेन, अबीसिनिया, मध्य यूरोप, मिस्र और पच्छिमी एशिया में होनेवाले कशमकशों का ज़िक्र भी ले

आता। मैं उन्हें सोवियत यूनियन में होने वाली अचरज-भरी तब्दीलियों का हाल भी बताता और कहता कि अमरीका ने कैसी तरक्की की है। यह काम आसान न था, लेकिन जैसा मैंने समझ रखा था, वैसा मुश्किल भी न था। इसकी वजह यह थी कि हमारे पुराने महाकाव्यों ने और पुराणों की कथा-कहानियों ने, जिन्हें वे खूब जानते थे, उन्हें इस देश की कल्पना करा दी थी, और हमेशा कुछ लोग ऐसे मिल जाते थे, जिन्होंने हमारे बड़े-बड़े तीर्थों की यात्रा कर रखी थी, जो हिंदुस्तान के चारों कोनों पर हैं। या हमें पुराने सिपाही मिल जाते, जिन्होंने पिछली बड़ी जंग में या और धावों के सिलसिले में विदेशों में नौकरियाँ की थीं। सन् तीस के बाद जो आर्थिक मंदी पैदा हुई थी, उसकी वजह से दूसरे मुल्कों के बारे में मेरे हवाले उनकी समझ में आ जाते थे।

कभी ऐसा भी होता कि जब मैं किसी जलसे में पहुँचता, तो मेरा स्वागत "भारत माता की जय!" इस नारे से ज़ोर के साथ किया जाता। मैं लोगों से अचानक पूछ बैठता कि इस नारे से उनका क्या मतलब है? यह भारत माता कौन है, जिसकी वे जय चाहते हैं। मेरे सवाल से उन्हें कुतूहल और ताज्जुब होता और कुछ जवाब न बन पड़ने पर वे एक-दूसरे की तरफ़ या मेरी तरफ़ देखने लग जाते। मैं सवाल करता ही रहता। आखिर एक हट्टे-कट्टे जाट ने, जो अनगिनत पीढ़ियों से किसानी करता आया था, जवाब दिया कि भारत माता से उनका मतलब धरती से है। कौन-सी धरती? खास उनके गाँव की धरती या ज़िले की या सूबे की या सारे हिंदुस्तान की धरती से उनका मतलब है? इस तरह सवाल-जवाब चलते रहते, यहाँ तक कि वे ऊबकर मुझसे कहने लगते कि मैं ही बताऊँ। मैं इसकी कोशिश करता और बताता कि हिंदुस्तान वह सब कुछ है, जिसे उन्होंने समझ रखा है, लेकिन वह इससे भी बहुत ज़्यादा है। हिंदुस्तान के नदी और पहाड़, जंगल और खेत, जो हमें अन्न देते हैं, ये सभी हमें अज़ीज़ हैं। लेकिन आखिरकार जिनकी गिनती है, वे हैं हिंदुस्तान के लोग, उनके और मेरे जैसे लोग, जो इस सारे देश में फैले हुए हैं। भारत माता दरअसल यही करोड़ों लोग हैं, और "भारत माता की जय!" से मतलब हुआ इन लोगों की जय का।

मैं उनसे कहता कि तुम इस भारत माता के अंश हो, एक तरह से तुम ही भारत माता हो, और जैसे-जैसे ये विचार उनके मन में बैठते, उनकी आँखों में चमक आ जाती, इस तरह, मानो उन्होंने कोई बड़ी खोज कर ली हो।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. भारत की चर्चा नेहरू जी कब और किससे करते थे?
2. नेहरू जी भारत के सभी किसानों से कौन-सा प्रश्न बार-बार करते थे?
3. दुनिया के बारे में किसानों को बताना नेहरू जी के लिए क्यों आसान था?
4. किसान सामान्यत: ***भारत माता*** का क्या अर्थ लेते थे?
5. ***भारत माता*** के प्रति नेहरू जी की क्या अवधारणा थी?
6. आज़ादी से पूर्व किसानों को किन समस्याओं का सामना करना पड़ता था?

पाठ के आस-पास

1. आज़ादी से पहले भारत-निर्माण को लेकर नेहरू के क्या सपने थे? क्या आज़ादी के बाद वे साकार हुए? चर्चा कीजिए।
2. भारत के विकास को लेकर आप क्या सपने देखते हैं?
3. आपकी दृष्टि में भारत माता और हिंदुस्तान की क्या संकल्पना है? बताइए।
4. वर्तमान समय में किसानों की स्थिति किस सीमा तक बदली है? चर्चा कर लिखिए?
5. आज़ादी से पूर्व अनेक नारे प्रचलित थे। किन्हीं दस नारों का संकलन करें और संदर्भ भी लिखें।

भाषा की बात

1. नीचे दिए गए वाक्यों का पाठ के संदर्भ में अर्थ लिखिए -
   दक्खिन, पच्छिम, यक-साँ, एक जुज़, ढट्ठे
2. नीचे दिए गए संज्ञा शब्दों के विशेषण रूप लिखिए–
   आज़ादी, चमक, हिंदुस्तान, विदेश, सरकार, यात्रा, पुराण, भारत

शब्द-छवि

सयाने	-	समझदार
गिज़ा	-	खुराक, भोजन, खाद्य
नज़रिया	-	दृष्टिकोण
महदूद	-	सीमित
मसला	-	मुद्दा
यक-साँ	-	एक समान
ढङ्गे	-	बोझ
तब्दीलियों	-	परिवर्तनों
जुज़	-	खंड, भाग
कशमकश	-	ऊहापोह, पसोपेश
हवाले	-	संदर्भ
कुतूहल	-	उत्सुकता
ताज्जुब	-	आश्चर्य
हट्टे-कट्टे	-	हृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ, मज़बूत कद-काठी वाला
अज़ीज़	-	प्रिय
दरअसल	-	वास्तव में
जलसा	-	समारोह
धावा	-	आक्रमण

कलाकर्म एक विचित्र उन्माद है। इसे विश्वास से सहेजना है— संपूर्णता से, पहाड़ों के धैर्य के समान, मौन प्रतीक्षा में, अकेले ही।

(आत्मा का ताप)

सैयद हैदर रज़ा

जन्म: सन् 1922, बाबरिया गाँव (म.प्र.)

सम्मान: 'ग्रेड ऑव ऑफ़िसर ऑव द ऑर्डर ऑव आर्ट्स ऐंड लेटर्स'

रज़ा ने चित्रकला की शिक्षा नागपुर स्कूल ऑफ़ आर्ट व सर जे.जे. स्कूल ऑफ़ आर्ट, मुंबई से प्राप्त की। भारत में अनेक प्रदर्शनियाँ आयोजित करने के बाद सन् 1950 में वे फ्रांसीसी सरकार की छात्रवृत्ति पर फ्रांस गए और अध्ययन किया।

आधुनिक भारतीय चित्रकला को जिन कलाकारों ने नया और आधुनिक मुहावरा दिया, उनमें सैयद हैदर रज़ा का नाम महत्वपूर्ण है। रज़ा सिर्फ़ इसी वजह से कला की दुनिया में सम्मान्य नहीं हैं बल्कि, जिन कलाकारों ने आधुनिक भारतीय कला को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित किया उनमें हुसैन और सूज़ा के साथ रज़ा का नाम अगली पंक्ति में आता है।

इनमें हुसैन सबसे ज़्यादा घुमक्कड़ रहे, लेकिन उनका केंद्र भारत ही रहा। सूज़ा न्यूयार्क चले गए और रज़ा पेरिस में जाकर बस गए। इस तरह रज़ा की कला में भारतीय और पश्चिमी कला दृष्टियों का मेल हुआ। लंबे समय तक पश्चिम में रहने और वहाँ की कला की बारीकियों से प्रभावित होने के बावजूद रज़ा ठेठ रूप से भारतीय कलाकार हैं। बिंदु उनकी कला-रचना के केंद्र में है। उनकी कई

कलाकृतियाँ बिंदु का रूपाकार हैं। यह बिंदु केवल रूपाकार नहीं है, बल्कि पारंपरिक भारतीय चिंतन का केंद्र-बिंदु भी है। यहाँ यह भी गौरतलब है कि बिंदु की तरफ़ उनका झुकाव उनके स्कूली शिक्षक नंदलाल झरिया ने कराया था।

रज़ा की कला और व्यक्तित्व में उदात्तता है। उनकी कला में रंगों की व्यापकता और अध्यात्म की गहराई है। उनकी कला को भारत और दूसरे देशों में काफ़ी सराहा गया है। रुडॉल्फ़ वॉन लेडेन, पियरे गोदिबेयर, गीति सेन, जाक लासें, मिशेल एंबेयर आदि ने रज़ा पर मोनोग्राफ़ लिखे हैं।

यहाँ दिया गया पाठ सैयद हैदर रज़ा की आत्मकथात्मक पुस्तक ***आत्मा का ताप*** *का एक अध्याय है। इसका अंग्रेज़ी से हिंदी अनुवाद* **मधु बी. जोशी** *ने किया है। यहाँ रज़ा ने चित्रकला के क्षेत्र में अपने आरंभिक संघर्षों और सफलताओं के बारे में बताया है। एक कलाकार का जीवन-संघर्ष और कला-संघर्ष, उसकी सर्जनात्मक बेचैनी, अपनी रचना में सर्वस्व झोंक देने का उसका जुनून—ये सारी चीज़ें इसमें बहुत रोचक व सहज शैली में उभरकर आई हैं।*

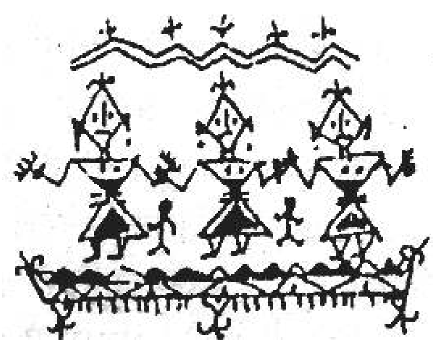

आत्मा का ताप

नागपुर स्कूल की परीक्षा में मैं कक्षा में प्रथम आया, दस में से नौ विषयों में मुझे विशेष योग्यता प्राप्त हुई। इससे मुझे बड़ी मदद मिली। पिता जी रिटायर हो चुके थे। अब मुझे नौकरी ढूँढ़नी थी। मैं गोंदिया[1] में ड्राइंग का अध्यापक बन गया। महीने-भर में ही मुझे बंबई में 'जे.जे. स्कूल ऑफ़ आर्ट' में अध्ययन के लिए मध्य प्रांत की सरकारी छात्रवृत्ति मिली। यह सितंबर 1943 की बात है। मैंने अमरावती[2] के गवर्नमेंट नॉर्मल स्कूल से त्यागपत्र दे दिया। जब तक मैं बंबई पहुँचा तब तक जे.जे. स्कूल में दाखिला बंद हो चुका था। दाखिला हो भी जाता तो उपस्थिति का प्रतिशत पूरा न हो पाता। छात्रवृत्ति वापस ले ली गई। सरकार ने मुझे अकोला[3] में ड्राइंग अध्यापक की नौकरी देने की पेशकश की। मैंने तय किया कि मैं लौटूँगा नहीं, बंबई में ही अध्ययन करूँगा। मुझे शहर पसंद आया, वातावरण पसंद आया, गैलरियाँ और शहरों में अपने पहले मित्र पसंद आए। और भी अच्छी बात यह हुई कि मुझे एक्सप्रेस ब्लॉक स्टूडियो में डिज़ाइनर की नौकरी मिल गई। यह स्टूडियो फ़ीरोज़शाह मेहता रोड पर था। एक बार फिर कड़ी मेहनत का दौर चला। करीब साल-भर में ही स्टूडियो के मालिक श्री जलील और मैनेजर श्री हुसैन ने मुझे मुख्य डिज़ाइनर बना दिया। सुबह दस बजे से शाम छह बजे तक मैं दफ़्तर में काम करता। फिर मैं अध्ययन के लिए मोहन आर्ट क्लब जाता और फिर जेकब सर्कल जहाँ भाई के परिचित एक टैक्सी ड्राइवर ने मुझे रहने की जगह दे रखी थी। उसने कहा कि मैं तो टैक्सी रात

1, 2, 3 – *महाराष्ट्र में स्थित*

को ही चलाता हूँ तो तुम वहाँ सो सकते हो। वह दिन में कमरे पर लौटता। यह छोटा-सा कमरा जेकब सर्कल सात रास्ता में पहली मंज़िल पर था। एक रात जब साढ़े नौ बजे मैं कमरे पर पहुँचा तो हमारे दरवाज़े पर एक पुलिसवाला खड़ा था। उसने कहा कि तुम अंदर नहीं जा सकते, यहाँ हत्या की वारदात हुई है। हमलोग कभी भी राजनीति या किसी भी तरह की संदिग्ध गतिविधियों में शामिल नहीं हुए थे। मेरी तो अक्ल गुम हो गई। मैं तुरंत पुलिस स्टेशन जाकर कमिश्नर से मिला। उन्हें बताया कि मैं एक विद्यार्थी हूँ, जेकब सर्कल में रहता हूँ, मेरे कमरे के बाहर पुलिसवाला खड़ा है और मुझे अंदर नहीं जाने दे रहा है। उन्होंने बताया कि मेरे टैक्सी ड्राइवर मित्र राल्फ़ पर या मुझ पर शक नहीं है। राल्फ़ की टैक्सी में किसी ने एक सवारी की छुरा मारकर हत्या कर दी थी। अगले दिन मैंने जलील साहब को रामकहानी सुनाई तो उन्होंने मुझे आर्ट डिपार्टमेंट में कमरा दे दिया। मैं फ़र्श पर सोता। वे मुझे रात ग्यारह-बारह बजे तक गलियों के चित्र या और तरह-तरह के स्केच बनाते देखते। कभी-कभी वे कहते कि तुम बहुत देर तक काम करते रह गए, अब सो जाओ। कुछ महीने बाद उन्होंने मुझे एक बहुत शानदार ठिकाना देने की पेशकश की—उनके चचेरे भाई के छठी मंज़िल के फ़्लैट का एक कमरा। उसमें दो पलंग पड़े थे। उनकी योजना यह थी कि अगर मैं उनके यहाँ काम करता रहा तो मुझे कला विभाग का प्रमुख बना दिया जाए। मैं जेकब सर्कल का सात रास्ते वाला घर और उसका गलीज़ वातावरण छोड़कर नए ठिकाने पर आ गया और पूरी तरह अपने काम में डूब गया। इसका परिणाम यह हुआ कि चार बरस में, 1948 में, बॉम्बे आर्ट्स सोसाइटी का स्वर्ण पदक मुझे मिला। इस सम्मान को पाने वाला मैं सबसे कम आयु का कलाकार था। दो बरस बाद मुझे फ्रांस सरकार की छात्रवृत्ति मिल गई। मैंने खुद को याद दिलायाः भगवान के घर देर है, अंधेर नहीं। मेरे पहले दो चित्र नवंबर 1943 में आर्ट्स सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की प्रदर्शनी में प्रदर्शित हुए। उद्घाटन में मुझे आमंत्रित नहीं किया गया, क्योंकि मैं जाना-माना नाम नहीं था। अगले दिन मैंने 'द टाइम्स ऑफ़ इंडिया' में प्रदर्शनी की समीक्षा पढ़ी। कला-समीक्षक

रुडॉल्फ़ वॉन लेडेन ने मेरे चित्रों की काफ़ी तारीफ़ की थी। उसका पहला वाक्य मुझे आज भी याद है, ''इनमें से कई चित्र पहले भी प्रदर्शित हो चुके हैं, और नयों में कोई नई प्रतिभा नहीं दिखी। हाँ, एस.एच. रज़ा के नाम के छात्र के एक-दो जलरंग लुभावने हैं। उनमें संयोजन और रंगों के दक्ष प्रयोग की ज़बरदस्त समझदारी दिखती है।'' दोनों चित्र 40-40 रुपये में बिक गए। एक्सप्रेस ब्लॉक स्टूडियोज़ में आठ-दस घंटा रोज़ काम करने के बाद भी महीने-भर में मुझे इतने रुपये नहीं मिल पाते थे। वेनिस अकादमी के प्रोफ़ेसर वाल्टर लैंगहैमर से भेंट हुई तो उन्होंने जर्मन उच्चारणवाली अंग्रेज़ी में कहा, ''आई लफ्ड यूअर स्टॅफ़, मिस्टर रत्ज़ा'' (रज़ा साहब, मुझे आपका काम पसंद आया)। रुडॉल्फ़ वॉन लेडेन भी कृपा बनाए रखते थे। इसके बाद वियना के एक कला-संग्राहक एम्मेनुएल श्लैसिंगर मेरे काम के प्रशंसक बने, यह मेरी बहुमूल्य उपलब्धि थी। समय के साथ-साथ चीज़ें होती चली गईं। प्रोफ़ेसर लैंगहैमर ने काम करने के लिए अपना स्टूडियो दे दिया। वे 'द टाइम्स ऑफ़ इंडिया' में आर्ट डायरेक्टर थे। मैं दिन में उनके स्टूडियो में चित्र बनाता, शाम को चित्र उन्हें दिखाता तो वे बारीकी से उनका विश्लेषण करते। मेरे काम में उनकी रुचि बढ़ती गई। मेरा काम निखरता गया। वे मेरे चित्र खरीदने लगे और आखिर मेरे लिए नौकरी छोड़कर कला के अध्ययन में जुट पाना संभव हो सका। 1947 में मैं जे.जे. स्कूल ऑफ़ आर्ट का नियमित छात्र बन गया, क्योंकि अब मैं नौकरी किए बिना भी अपनी फ़ीस और रहने का खर्चा उठा सकता था।

भले ही 1947 और 1948 में महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी हों, मेरे लिए वे कठिन बरस थे। पहले तो कल्याण वाले घर में मेरे पास रहते मेरी माँ का देहांत हो गया। पिता जी मेरे पास ही थे। वे मंडला लौट गए। मई 1948 में वे भी नहीं रहे। विभाजन की त्रासदी के बावजूद भारत स्वतंत्र था। उत्साह था, उदासी भी थी। जीवन पर अचानक ज़िम्मेदारियों का बोझ आ पड़ा। हम युवा थे। मैं पच्चीस बरस का था, लेखकों, कवियों, चित्रकारों की संगत थी। हमें लगता था कि हम पहाड़ हिला सकते हैं। और सभी अपने-अपने क्षेत्रों में, अपने माध्यम में सामर्थ्य भर-बढ़िया काम करने

में जुट गए। देश का विभाजन, महात्मा गांधी की हत्या क्रूर घटनाएँ थीं। व्यक्तिगत स्तर पर, मेरे माता-पिता की मृत्यु भी ऐसी ही क्रूर घटना थी। हमें इन क्रूर अनुभवों को आत्मसात करना था। हम उससे उबर काम में जुट गए।

1948 में मैं श्रीनगर गया, वहाँ चित्र बनाए। ख्वाज़ा अहमद अब्बास भी वहीं थे। कश्मीर पर कबायली* आक्रमण हुआ, तब तक मैंने तय कर लिया था कि भारत में ही रहूँगा। मैं श्रीनगर से आगे बारामूला तक गया। घुसपैठियों ने बारामूला को ध्वस्त कर दिया था। मेरे पास कश्मीर के तत्कालीन प्रधानमंत्री शेख अब्दुल्ला का पत्र था, जिसमें कहा गया था कि यह एक भारतीय कलाकार हैं, इन्हें जहाँ चाहे वहाँ जाने दिया जाए और इनकी हर संभव सहायता की जाए। एक बार मैं बस से बारामूला से लौट रहा था या वहाँ जा रहा था तो स्थानीय कश्मीरियों के बीच मुझ पैंटधारी शहराती को देखकर एक पुलिसवाले ने मुझे बस से उतार लिया। मैं उसके साथ चल दिया। उसने पूछा, ''कहाँ से आए हो? नाम क्या है?'' मैंने बता दिया कि मैं रज़ा हूँ, बंबई से आया हूँ। शेख साहब की चिट्ठी उसे दिखाई। उसने सलाम ठोंका और परेशानी के लिए माफ़ी माँगता हुआ चला गया।

श्रीनगर की इसी यात्रा में मेरी भेंट प्रख्यात फ्रेंच फोटोग्राफ़र हेनरी कार्तिए-ब्रेसाँ से हुई। मेरे चित्र देखने के बाद उन्होंने जो टिप्पणी की वह मेरे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण रही है। उन्होंने कहा ''तुम प्रतिभाशाली हो, लेकिन प्रतिभाशाली युवा चित्रकारों को लेकर मैं संदेहशील हूँ। तुम्हारे चित्रों में रंग है, भावना है, लेकिन रचना नहीं है। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि चित्र इमारत की ही तरह बनाया जाता है–आधार, नींव, दीवारें, बीम, छत और तब जाकर वह टिकता है। मैं कहूँगा कि तुम सेज़ाँ का काम ध्यान से देखो।'' इन टिप्पणियों का मुझ पर गहरा प्रभाव रहा। बंबई लौटकर मैंने फ्रेंच सीखने के लिए अलयांस फ्रांसे में दाखिला ले लिया। फ्रेंच पेंटिंग में मेरी खासी रुचि थी, लेकिन मैं समझना चाहता था कि चित्र में रचना या बनावट वास्तव में क्या होगी।

---

* *कबीलों का आक्रमण*

रज़ा अपने स्टूडियो में, पेरिस

1950 में एक गंभीर वार्तालाप के दौरान फ्रें च दूतावास के सांस्कृतिक सचिव ने मुझसे पूछा, "तुम फ्रांस जाकर कला का अध्ययन क्यों करना चाहते हो?" मैंने पूरे आत्मविश्वास से उत्तर दिया, "फ्रेंच कलाकारों का चित्रण पर अधिकार है। फ्रेंच पेंटिंग मुझे अच्छी लगती है।" "तुम्हारे पसंदीदा कलाकार?" "सेज़ाँ, वॉन गॉग, गोगाँ पिकासो, मातीस, शागाल और ब्रॉक।" "पिकासो के काम के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?" मैंने कहा "पिकासो का हर दौर महत्वपूर्ण है, क्योंकि पिकासो जीनियस है।" वह इतने खुश हुए कि मुझे एक के बजाय दो बरस के लिए छात्रवृत्ति मिली। मैं सितंबर में फ्रांस के लिए निकला और 2 अक्टूबर 1950 को मार्सेई पहुँचा। यूँ पेरिस में मेरा जीवन प्रारंभ हुआ। बंबई में रहते एक ऊर्जा थी, काम करने की एक इच्छा थी। आत्मा को चढ़ा यह ताप लोगों को दिखाई देता था। अपने यहाँ ज़बरदस्त उदारता थी। कोई काम करने का इच्छुक हो तो लोग सहायता को तैयार रहते थे।

मैं अपने कुटुंब के युवा लोगों से कहता रहता हूँ कि तुम्हें सब कुछ मिल सकता है बस, तुम्हें मेहनत करनी होगी। चित्रकला व्यवसाय नहीं, अंतरात्मा की पुकार है। इसे अपना सर्वस्व देकर ही कुछ ठोस परिणाम मिल पाते हैं। केवल ज़हरा जाफ़री को कार्य करने की ऐसी लगन मिली। वह पूरे समर्पण से दमोह शहर के आसपास के ग्रामीणों के साथ काम करती हैं। कल मैंने उन्हें फ़ोन किया–यह जानने के लिए कि वह दमोह में क्या कर रही हैं। उन्हें बड़ी खुशी हुई कि मुझे सूर्यप्रकाश (उस ग्रामीण

स्त्री का पति, जो अपने पति का नाम नहीं ले रही थी) का किस्सा याद है। मैंने धृष्टता से उन्हें बताया कि 'बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख।' मेरे मन में शायद युवा मित्रों को यह संदेश देने की कामना है कि कुछ घटने के इंतजार में हाथ पर हाथ धरे न बैठे रहो–खुद कुछ करो। ज़रा देखिए, अच्छे-खासे संपन्न परिवारों के बच्चे काम नहीं कर रहे, जबकि उनमें तमाम संभावनाएँ हैं। और यहाँ हम बेचैनी से भरे, काम किए जाते हैं। मैं बुखार से छटपटाता-सा, अपनी आत्मा, अपने चित्त को संतप्त किए रहता हूँ। मैं कुछ ऐसी बात कर रहा हूँ, जिसमें खामी लगती है। यह बहुत गज़ब की बात नहीं है, लेकिन मुझमें काम करने का संकल्प है। भगवद् गीता कहती है, ''जीवन में जो कुछ भी है, तनाव के कारण है।'' बचपन, जीवन का पहला चरण, एक जागृति है। लेकिन मेरे जीवन का बंबईवाला दौर भी जागृति का चरण ही था। कई निजी मसले थे, जिन्हें सुलझाना था। मुझे आजीविका कमानी थी। मैं कहूँगा कि पैसा कमाना महत्वपूर्ण होता है, वैसे अंततः वह महत्वपूर्ण नहीं ही होता। उत्तरदायित्व होते हैं, किराया देना होता है, फ़ीस देनी होती है, अध्ययन करना होता है, काम करना होता है। कुल मिलाकर स्थिति खासी जटिल थी। मेरे माता-पिता के न रहने और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को खो देने से जटिलता और बढ़ी।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. रज़ा ने अकोला में ड्राइंग अध्यापक की नौकरी की पेशकश क्यों नहीं स्वीकार की?
2. बंबई में रहकर कला के अध्ययन के लिए रज़ा ने क्या-क्या संघर्ष किए
3. ***भले ही 1947 और 1948 में महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी हों, मेरे लिए वे कठिन बरस थे***– रज़ा ने ऐसा क्यों कहा?
4. रज़ा के पसंदीदा फ्रेंच कलाकार कौन थे?
5. ***तुम्हारे चित्रों में रंग है, भावना है, लेकिन रचना नहीं है। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि चित्र***

इमारत की ही तरह बनाया जाता है– आधार, नींव, दीवारें, बीम, छत; और तब जाकर वह टिकता है– यह बात

क. किसने, किस संदर्भ में कही?

ख. रज़ा पर इसका क्या प्रभाव पड़ा?

पाठ के आस-पास

1. रज़ा को जलील साहब जैसे लोगों का सहारा न मिला होता तो क्या तब भी वे एक जाने-माने चित्रकार होते? तर्क सहित लिखिए।
2. ***चित्रकला व्यवसाय नहीं, अंतरात्मा की पुकार है–*** इस कथन के आलोक में कला के वर्तमान और भविष्य पर विचार कीजिए।
3. ***हमें लगता था कि हम पहाड़ हिला सकते हैं–*** आप किन क्षणों में ऐसा सोचते हैं?
4. राजा रवि वर्मा, मकबूल फ़िदा हुसैन, अमृता शेरगिल के प्रसिद्ध चित्रों का एक अलबम बनाइए। सहायता के लिए इंटरनेट या किसी आर्टगैलरी से संपर्क करें।

भाषा की बात

1. ***जब तक मैं बंबई पहुँचा, तब तक जे.जे. स्कूल में दाखिला बंद हो चुका था–*** इस वाक्य को हम दूसरे तरीके से भी कह सकते हैं। ***मेरे बंबई पहुँचने से पहले जे.जे. स्कूल में दाखिला बंद हो चुका था।*** नीचे दिए गए वाक्यों को दूसरे तरीके से लिखिए-

   (क) जब तक मैं प्लेटफ़ॉर्म पहुँचती तब तक गाड़ी जा चुकी थी।

   (ख) जब तक डॉक्टर हवेली पहुँचता तब तक सेठ जी की मृत्यु हो चुकी थी।

   (ग) जब तक रोहित दरवाज़ा बंद करता तब तक उसके साथी होली का रंग लेकर अंदर आ चुके थे।

   (घ) जब तक रुचि कैनवास हटाती तब तक बारिश शुरू हो चुकी थी।

2. ***आत्मा का ताप*** पाठ में कई शब्द ऐसे आए हैं जिनमें ***ऑ*** का इस्तेमाल हुआ है, जैसे- *ऑफ ब्लॉक, नॉर्मल*। नीचे दिए गए शब्दों में यदि *ऑ* का इस्तेमाल किया जाए तो शब्द के अर्थ में क्या परिवर्तन आएगा? दोनों शब्दों का वाक्य-प्रयोग करते हुए अर्थ के अंतर को स्पष्ट कीजिए-

   हाल, काफ़ी, बाल

काव्य खंड

यदि तोर डाक शुने केउ न आशे
तबे एक्ला चलो रे।
एक्ला चलो, एक्ला चलो,
एक्ला चलो रे।।
रवींद्र नाथ टैगोर

(तेरी आवाज़ पे कोई ना आए
तो फिर चल अकेला रे।
चल अकेला, चल अकेला,
चल अकेला रे।।)

- *जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।*

  (कविता क्या है, रामचंद्र शुक्ल)

- *जगत-जीवन के संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना में कमाई हुई मार्मिक आलोचना दृष्टि के बिना कविकर्म अधूरा है।*

  (काव्य की रचना प्रक्रिया, गजानन माधव मुक्तिबोध)

मैं कहता हौं आँखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी

(कबीर वाणी, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी)

कबीर

जन्मः सन् 1398, वाराणसी[1] के पास 'लहरतारा' (उ.प्र.)

प्रमुख रचनाएँः 'बीजक' जिसमें साखी, सबद एवं रमैनी संकलित हैं

मृत्युः सन् 1518 में बस्ती के निकट मगहर में

कबीर भक्तिकाल की निर्गुण धारा (ज्ञानाश्रयी शाखा) के प्रतिनिधि कवि हैं। वे अपनी बात को साफ़ एवं दो टूक शब्दों में प्रभावी ढंग से कह देने के हिमायती थे, 'बन पड़े तो सीधे-सीधे नहीं तो दरेरा देकर।' इसीलिए कबीर को हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'वाणी का डिक्टेटर' कहा है।

कबीर के जीवन के बारे में अनेक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं। उन्होंने अपनी विभिन्न कविताओं में खुद को काशी का जुलाहा कहा है। कबीर के विधिवत साक्षर होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। ***मसि कागद छुयो नहि कलम गहि नहि हाथ*** *जैसी कबीर की पंक्तियाँ भी इसका प्रमाण देती हैं। उन्होंने देशाटन और सत्संग से ज्ञान प्राप्त किया। किताबी ज्ञान के स्थान पर आँखों देखे सत्य और अनुभव को प्रमुखता दी। उनकी रचनाओं में नाथों, सिद्धों और सूफ़ी संतों की बातों का प्रभाव मिलता है। वे कर्मकांड और वेद-विचार के विरोधी थे तथा जाति-भेद, वर्ण-भेद और संप्रदाय-भेद के स्थान पर प्रेम, सद्भाव और समानता का समर्थन करते थे।*

1. प्राचीन नाम काशी

यहाँ प्रस्तुत पहले पद में कबीर ने परमात्मा को सृष्टि के कण-कण में देखा है, ज्योति रूप में स्वीकारा है तथा उसकी व्याप्ति चराचर संसार में दिखाई है। इसी व्याप्ति को अद्वैत सत्ता के रूप में देखते हुए विभिन्न उदाहरणों के द्वारा रचनात्मक अभिव्यक्ति दी है।

दूसरे पद में कबीर ने बाह्याडंबरों पर प्रहार किया है, साथ ही यह भी बताया है कि अधिकांश लोग अपने भीतर की ताकत को न पहचानकर अनजाने में अवास्तविक संसार से रिश्ता बना बैठते हैं और वास्तविक संसार से बेखबर रहते हैं।

दोनों पद जयदेव सिंह और वासुदेव सिंह द्वारा संकलित-संपादित ***कबीर वाङ्मय–खंड 2*** (सबद) *से लिए गए हैं।*

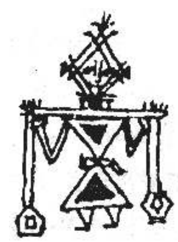

पद 1

हम तौ एक एक करि जानां।
दोइ कहैं तिनहीं कौं दोजग जिन नाहिंन पहिचानां ।।
एकै पवन एक ही पानीं एकै जोति समानां।
एकै खाक गढ़े सब भांड़ै एकै कोंहरा सांनां।।
जैसे बाढ़ी काष्ट ही काटै अगिनि न काटै कोई।
सब घटि अंतरि तूँही व्यापक धरै सरूपै सोई।।
माया देखि के जगत लुभानां काहे रे नर गरबांनां।
निरभै भया कछू नहिं ब्यापै कहै कबीर दिवांनां।।

पद 2

संतो देखत जग बौराना।
साँच कहौं तो मारन धावै, झूठे जग पतियाना।।
नेमी देखा धरमी देखा, प्रात करै असनाना।
आतम मारि पखानहि पूजै, उनमें कछु नहिं ज्ञाना।।
बहुतक देखा पीर औलिया, पढ़ै कितेब कुराना।
कै मुरीद तदबीर बतावैं, उनमें उहै जो ज्ञाना।।
आसन मारि डिंभ धरि बैठे, मन में बहुत गुमाना।
पीपर पाथर पूजन लागे, तीरथ गर्व भुलाना।।
टोपी पहिरे माला पहिरे, छाप तिलक अनुमाना।

साखी सब्दहि गावत भूले, आतम खबरि न जाना।
हिन्दू कहै मोहि राम पियारा, तुर्क कहै रहिमाना।
आपस में दोउ लरि लरि मूए, मर्म न काहू जाना।।
घर घर मन्तर देत फिरत हैं, महिमा के अभिमाना।
गुरु के सहित सिख्य सब बूड़े, अंत काल पछिताना।
कहै कबीर सुनो हो संतो, ई सब भर्म भुलाना।
केतिक कहौं कहा नहिं मानै, सहजै सहज समाना।।

अभ्यास

पद के साथ

1. कबीर की दृष्टि में ईश्वर एक है। इसके समर्थन में उन्होंने क्या तर्क दिए हैं?
2. मानव शरीर का निर्माण किन पंच तत्वों से हुआ है?
3. ***जैसे बाढ़ी काष्ट ही काटै अगिनि न काटै कोई।***
   सब घटि अंतरि तूँही व्यापक धरै सरूपै सोई।।
   इसके आधार पर बताइए कि कबीर की दृष्टि में ईश्वर का क्या स्वरूप है?
4. कबीर ने अपने को *दीवाना* क्यों कहा है?
5. कबीर ने ऐसा क्यों कहा है कि संसार बौरा गया है?
6. कबीर ने नियम और धर्म का पालन करने वाले लोगों की किन कमियों की ओर संकेत किया है?
7. अज्ञानी गुरुओं की शरण में जाने पर शिष्यों की क्या गति होती है?
8. बाह्याडंबरों की अपेक्षा स्वयं (आत्म) को पहचानने की बात किन पंक्तियों में कही गई है? उन्हें अपने शब्दों में लिखें।

पद के आस-पास

1. अन्य संत कवियों नानक, दादू और रैदास आदि के ईश्वर संबंधी विचारों का संग्रह करें और उनपर एक परिचर्चा करें।

2. कबीर के पदों को शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत दोनों में लयबद्ध भी किया गया है। जैसे- कुमारगंधर्व, भारती बंधु और प्रह्लाद सिंह टिपाणिया आदि द्वारा गाए गए पद। इनके कैसेट्स अपने पुस्तकालय के लिए मँगवाएं और पाठ्यपुस्तक के पदों को भी लयबद्ध करने का प्रयास करें।

शब्द-छवि

दोजग (फा. दोज़ख)	-	नरक
समांनां	-	व्याप्त
खाक	-	मिट्टी
कोंहरा	-	कुम्हार, कुंभकार
सांनां	-	एक साथ मिलाकर
बाढ़ी	-	बढ़ई
अंतरि	-	भीतर
सरूपै	-	स्वरूप
गरबांनां	-	गर्व करना
निरभै	-	निर्भय
बौराना	-	बुद्धि भ्रष्ट हो जाना, पगला जाना
धावै	-	दौड़ते हैं
पतियाना	-	विश्वास करना
नेमी	-	नियमों का पालन करने वाला
धरमी	-	धर्म का पाखंड करने वाला
असनाना	-	स्नान करना, नहाना
आतम	-	स्वयं
पखानहि	-	पत्थर को, पत्थरों की मूर्तियों को
बहुतक	-	बहुत से
पीर औलिया	-	धर्मगुरु और संत, ज्ञानी
कुराना	-	कुरान शरीफ़ जो इस्लाम धर्म की धार्मिक पुस्तक है

मुरीद	शिष्य, अनुगामी
तदबीर	उपाय
आसन मारि	समाधि या ध्यान मुद्रा में बैठना
डिंभ धरि	दंभ करके, आडंबर करके
गुमाना	अहंकार
पीपर	पीपल का वृक्ष
पाथर	पत्थर
छाप तिलक अनुमाना	मस्तक पर विभिन्न प्रकार के तिलक लगाना
साखी	साक्षी, गवाह, स्वयं अपनी आँखों देखे तथ्य का वर्णन, कबीर ने अपनी उक्तियों का शीर्षक 'साखी' दिया है
सब्दहि	वह मंत्र जो गुरु शिष्य को दीक्षा के अवसर पर देता है, सबद पद के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है, आप्त वचन
आतम खबरि	आत्मज्ञान, आत्म तत्व का ज्ञान
रहिमाना	रहम करने वाला, दयालु
महिमा	गुरु का महात्म्य
सिख्य	शिष्य

घाइल की गत घाइल जाणै, हियड़ों अगठा सँजोय।
जौहर की गत जौहरी जाणै, क्या जाण्या जिण खोय।
(मीराँबाई की पदावली, परशुराम चतुर्वेदी)

मीरा

जन्म : सन् 1498, कुड़की गाँव (मारवाड़ रियासत)
प्रमुख रचनाएँ: मीरा पदावली, नरसीजी-रो-माहेरो
मृत्यु : सन् 1546

मीरा सगुण धारा की महत्वपूर्ण भक्त कवयित्री थीं। कृष्ण की उपासिका होने के कारण उनकी कविता में सगुण भक्ति मुख्य रूप से मौजूद है लेकिन निर्गुण भक्ति का प्रभाव भी मिलता है। संत कवि रैदास उनके गुरु माने जाते हैं। बचपन से ही उनके मन में कृष्ण भक्ति की भावना जन्म ले चुकी थी। इसलिए वे कृष्ण को ही अपना आराध्य और पति मानती रहीं।

अन्य भक्तिकालीन कवियों की तरह मीरा ने भी देश में दूर-दूर तक यात्राएँ कीं। चित्तौड़ राजघराने में अनेक कष्ट उठाने के बाद मीरा वापस मेड़ता आ गईं। यहाँ से उन्होंने कृष्ण की लीला भूमि वृन्दावन की यात्रा की। जीवन के अंतिम दिनों में वे द्वारका चली गईं। माना जाता है कि वहीं रणछोड़ दास जी की मंदिर की मूर्ति में वे समाहित हो गईं।

उन्होंने लोकलाज और कुल की मर्यादा के नाम पर लगाए गए सामाजिक और वैचारिक बंधनों का हमेशा विरोध किया। पर्दा प्रथा का भी पालन नहीं किया तथा मंदिर में सार्वजनिक रूप से नाचने-गाने में कभी हिचक महसूस नहीं की। मीरा

मानती थीं कि महापुरुषों के साथ संवाद (जिसे सत्संग कहा जाता था) से ज्ञान प्राप्त होता है और ज्ञान से मुक्ति मिलती है। अपनी इन मान्यताओं को लेकर वे दृढ़निश्चयी थीं। निंदा या बंदगी उनको अपने पथ से विचलित नहीं कर पाई। जिस पर विश्वास किया, उस पर अमल किया। इस अर्थ में उस युग में जहाँ रूढ़ियों से ग्रस्त समाज का दबदबा था, वहाँ मीरा स्त्री मुक्ति की आवाज़ बनकर उभरीं।

मीरा की कविता में प्रेम की गंभीर अभिव्यंजना है। उसमें विरह की वेदना है और मिलन का उल्लास भी। मीरा की कविता का प्रधान गुण सादगी और सरलता है। कला का अभाव ही उसकी सबसे बड़ी कला है। उन्होंने मुक्तक गेय पदों की रचना की। लोक संगीत और शास्त्रीय संगीत दोनों क्षेत्रों में उनके पद आज भी लोकप्रिय हैं। उनकी भाषा मूलतः राजस्थानी है तथा कहीं-कहीं ब्रजभाषा का प्रभाव है। कृष्ण के प्रेम की दीवानी मीरा पर सूफ़ियों के प्रभाव को भी देखा जा सकता है। मीरा की कविता के मूल में दर्द है। वे बार-बार कहती हैं कि कोई मेरे दर्द को पहचानता नहीं, न शत्रु न मित्र।

यहाँ प्रस्तुत पहले पद में मीरा ने कृष्ण से अपनी अनन्यता व्यक्त की है तथा व्यर्थ के कार्यों में व्यस्त लोगों के प्रति दुख प्रकट किया है।

दूसरे पद में, प्रेम रस में डूबी हुई मीरा सभी रीति-रिवाजों और बंधनों से मुक्त होने और गिरिधर के स्नेह के कारण अमर होने की बात कर रही हैं।

दोनों पद नरोत्तम दास स्वामी द्वारा संकलित-संपादित ***मीराँ मुक्तावली*** *से लिए गए हैं।*

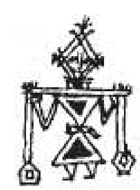

पद 1

मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई
जा के सिर मोर-मुकुट, मेरो पति सोई
छांड़ि दयी कुल की कानि, कहा करिहै कोई?
संतन ढिग बैठि-बैठि, लोक-लाज खोयी
अंसुवन जल सींचि-सींचि, प्रेम-बेलि बोयी
अब त बेलि फैलि गयी, आणंद-फल होयी
दूध की मथनियाँ बड़े प्रेम से विलोयी
दधि मथि घृत काढ़ि लियो, डारि दयी छोयी
भगत देखि राजी हुयी, जगत देखि रोयी
दासि मीरां लाल गिरधर! तारो अब मोही

पद 2

पग घुंघरू बांधि मीरां नाची,
मैं तो मेरे नारायण सूं, आपहि हो गई साची
लोग कहै, मीरां भइ बावरी; न्यात कहै कुल-नासी
विस का प्याला राणा भेज्या, पीवत मीरां हाँसी
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, सहज मिले अविनासी

अभ्यास

पद के साथ

1. मीरा कृष्ण की उपासना किस रूप में करती हैं? वह रूप कैसा है?
2. भाव व शिल्प सौंदर्य स्पष्ट कीजिए –
   (क) ***अंसुवन जल सींचि-सींचि, प्रेम-बेलि बोयी***
   अब त बेलि फैलि गई, आणंद-फल होयी
   (ख) ***दूध की मथनियाँ बड़े प्रेम से विलोयी***
   दधि मथि घृत काढ़ि लियो, डारि दयी छोयी
3. लोग मीरा को बावरी क्यों कहते हैं?
4. ***विस का प्याला राणा भेज्या, पीवत मीरां हाँसी*** –इसमें क्या व्यंग्य छिपा है?
5. मीरा जगत को देखकर रोती क्यों हैं?

पद के आस-पास

1. कल्पना करें, प्रेम प्राप्ति के लिए मीरा को किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा।
2. लोक लाज खोने का अभिप्राय क्या है?
3. मीरा ने 'सहज मिले अविनासी' क्यों कहा है?
4. ***लोग कहै, मीरां भइ बावरी, न्यात कहै कुल-नासी*** –मीरा के बारे में लोग (समाज) और न्यात (कुटुंब) की ऐसी धारणाएँ क्यों हैं?

शब्द-छवि

कानि	-	मर्यादा
ढिग	-	साथ
बेलि	-	प्रेम की बेल
विलोयी	-	मथी
छोयी	-	छाछ, सारहीन अंश
आपहि	-	अपने ही आप, बिना प्रयास
साची	-	सच्ची

न्यात	-	कुटुंब के लोग
कुल-नासी	-	कुल का नाश करने वाली
विस	-	विष
पीवत	-	पीती हुई
हाँसी	-	हँस पड़ी, हँस दी
सहज	-	स्वाभाविक रूप से, अनायास

पराधीन रहकर अपना सुख शोक न कह सकता है
यह अपमान जगत में केवल पशु ही सह सकता है।
(पथिक)

रामनरेश त्रिपाठी

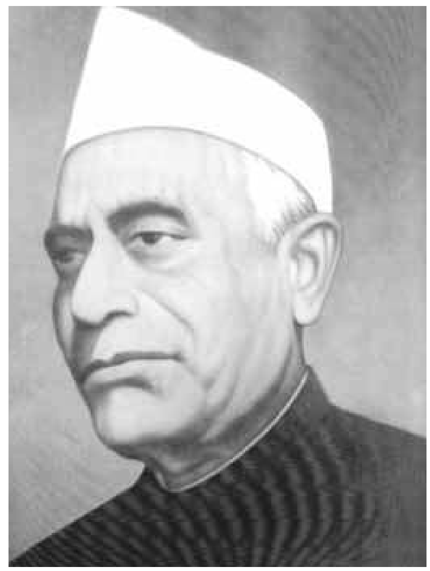

जन्मः सन् 1881, कोइरीपुर, ज़िला जौनपुर (उ.प्र)
प्रमुख रचनाएँः मिलन, पथिक, स्वप्न *(खंड काव्य)*
मानसी *(फुटकर कविता संग्रह)*
मृत्युः सन् 1962

राम नरेश त्रिपाठी छायावाद पूर्व की खड़ी बोली के महत्वपूर्ण कवि माने जाते हैं। आरंभिक शिक्षा पूरी करने के बाद स्वाध्याय से हिंदी, अंग्रेज़ी, बांग्ला और उर्दू का ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने उस समय के कवियों के प्रिय विषय समाज-सुधार के स्थान पर रोमांटिक प्रेम को कविता का विषय बनाया। उनकी कविताओं में देशप्रेम और वैयक्तिक प्रेम दोनों मौजूद हैं, लेकिन देशप्रेम को ही विशेष स्थान दिया गया है। ***कविता कौमुदी*** *(आठ भाग) में उन्होंने हिंदी, उर्दू, बांग्ला और संस्कृत की लोकप्रिय कविताओं का संकलन किया है। इसी के एक खंड में* ***ग्रामगीत*** *संकलित हैं, जिसे उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर एकत्र किया था। लोक-साहित्य के संरक्षण की दृष्टि से हिंदी में यह उनका पहला मौलिक कार्य था। हिंदी में वे बाल साहित्य के जनक माने जाते हैं। उन्होंने कई वर्षों तक* ***बानर*** *नामक बाल पत्रिका का संपादन किया, जिसमें मौलिक एवं शिक्षाप्रद कहानियाँ, प्रेरक प्रसंग आदि प्रकाशित होते थे। कविता के अलावा उन्होंने नाटक, उपन्यास, आलोचना, संस्मरण आदि अन्य विधाओं में भी रचनाएँ कीं।*

*प्रस्तुत अंश **पथिक** शीर्षक खंड काव्य के पहले सर्ग से लिया गया है। इस दुनिया के दुखों से विरक्त काव्य नायक पथिक प्रकृति के सौंदर्य पर मुग्ध होकर वहीं बसना चाहता है। यहाँ किसी साधुजन द्वारा संदेश ग्रहण करके वह देशसेवा का व्रत लेता है। राजा द्वारा उसे मृत्युदंड मिलता है, परंतु उसकी कीर्ति समाज में बनी रहती है।*

*सागर के किनारे खड़ा पथिक उसके सौंदर्य पर मुग्ध है। प्रकृति के इस अद्‌भुत सौंदर्य को वह **मधुर मनोहर उज्ज्वल प्रेम** कहानी की तरह पाना चाहता है। प्रकृति के प्रति पथिक का यह प्रेम उसे अपनी पत्नी के प्रेम से दूर ले जाता है। स्वच्छंदतावादी इस रचना में प्रेम, भाषा और कल्पना का अद्‌भुत संयोग मिलता है।*

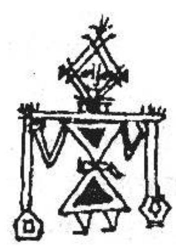

पथिक

प्रतिक्षण नूतन वेश बनाकर रंग-बिरंग निराला।
रवि के सम्मुख थिरक रही है नभ में वारिद-माला।
नीचे नील समुद्र मनोहर ऊपर नील गगन है।
घन पर बैठ, बीच में बिचरूँ यही चाहता मन है।।

रत्नाकर गर्जन करता है, मलयानिल बहता है।
हरदम यह हौसला हृदय में प्रिये! भरा रहता है।
इस विशाल, विस्तृत, महिमामय रत्नाकर के घर के–
कोने-कोने में लहरों पर बैठ फिरूँ जी भर के ।।

निकल रहा है जलनिधि-तल पर दिनकर-बिंब अधूरा।
कमला के कंचन-मंदिर का मानो कांत कँगूरा।
लाने को निज पुण्य-भूमि पर लक्ष्मी की असवारी।
रत्नाकर ने निर्मित कर दी स्वर्ण-सड़क अति प्यारी।।

निर्भय, दृढ़, गंभीर भाव से गरज रहा सागर है।
लहरों पर लहरों का आना सुंदर, अति सुंदर है।
कहो यहाँ से बढ़कर सुख क्या पा सकता है प्राणी?
अनुभव करो हृदय से, हे अनुराग-भरी कल्याणी।।

जब गंभीर तम अर्द्ध-निशा में जग को ढक लेता है।
अंतरिक्ष की छत पर तारों को छिटका देता है।
सस्मित-वदन जगत का स्वामी मृदु गति से आता है।
तट पर खड़ा गगन-गंगा के मधुर गीत गाता है।।

उससे ही विमुग्ध हो नभ में चंद्र विहँस देता है।
वृक्ष विविध पत्तों-पुष्पों से तन को सज लेता है।
पक्षी हर्ष सँभाल न सकते मुग्ध चहक उठते हैं।
फूल साँस लेकर सुख की सानंद महक उठते हैं—

वन, उपवन, गिरि, सानु, कुंज में मेघ बरस पड़ते हैं।
मेरा आत्म-प्रलय होता है, नयन नीर झड़ते हैं।
पढ़ो लहर, तट, तृण, तरु, गिरि, नभ, किरन, जलद पर प्यारी।
लिखी हुई यह मधुर कहानी विश्व-विमोहनहारी।।

कैसी मधुर मनोहर उज्ज्वल है यह प्रेम-कहानी।
जी में है अक्षर बन इसके बनूँ विश्व की बानी।
स्थिर, पवित्र, आनंद-प्रवाहित, सदा शांति सुखकर है।
अहा! प्रेम का राज्य परम सुंदर, अतिशय सुंदर है।।

अभ्यास

कविता के साथ

1. पथिक का मन कहाँ विचरना चाहता है?
2. सूर्योदय वर्णन के लिए किस तरह के बिंबों का प्रयोग हुआ है?

3. आशय स्पष्ट करें –
   (क) ***सस्मित-वदन जगत का स्वामी मृदु गति से आता है।***
   तट पर खड़ा गगन-गंगा के मधुर गीत गाता है॥
   (ख) ***कैसी मधुर मनोहर उज्ज्वल है यह प्रेम-कहानी।***
   जी में है अक्षर बन इसके बनूँ विश्व की बानी।
4. कविता में कई स्थानों पर प्रकृति को मनुष्य के रूप में देखा गया है। ऐसे उदाहरणों का भाव स्पष्ट करते हुए लिखें।

कविता के आस-पास

1. समुद्र को देखकर आपके मन में क्या भाव उठते हैं? लगभग 200 शब्दों में लिखें।
2. ***प्रेम सत्य है, सुंदर है***-प्रेम के विभिन्न रूपों को ध्यान में रखते हुए इस विषय पर परिचर्चा करें।
3. ***वर्तमान समय में हम प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं***– इस पर चर्चा करें और लिखें कि प्रकृति से जुड़े रहने के लिए क्या कर सकते हैं।
4. सागर संबंधी दस कविताओं का संकलन करें और पोस्टर बनाएँ।

शब्द-छवि

वारिद-माला	-	गिरती हुई वर्षा की लड़ियाँ
रत्नाकर	-	सागर
मलयानिल	-	मलय पर्वत (जहाँ चंदन वन है) से आने वाली शीतल, सुगंधित हवा
कँगूरा	-	गुंबद, बुर्ज़
असवारी	-	सवारी
अंतरिक्ष	-	आकाश, धरती और आकाश के बीच की खुली जगह
सानु	-	समतल भूमि
आत्म-प्रलय	-	स्वयं को भूल जाना
विश्व-विमोहनहारी	-	संसार को मुग्ध करने वाली

कविता के लिए चित्र भाषा की आवश्यकता पड़ती है, उसके शब्द सस्वर होने चाहिए, जो बोलते हों, सेब की तरह जिनके रस की मधुर लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर झलक पड़े।

('पल्लव' की भूमिका)

सुमित्रानंदन पंत

मूल नाम: गोसाँई दत्त

जन्म: सन् 1900, कौसानी, ज़िला अल्मोड़ा (उत्तरांचल)

प्रमुख रचनाएँ: वीणा, ग्रंथि, पल्लव, गुंजन, युगवाणी, ग्राम्या, चिंदबरा, उत्तरा, स्वर्ण किरण, कला और बूढ़ा चाँद, लोकायतन आदि

सम्मान: भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार, पद्मभूषण

मृत्यु: सन् 1977

छायावाद के महत्वपूर्ण स्तंभ सुमित्रानंदन पंत प्रकृति के चितेरे कवि हैं। हिंदी कविता में प्रकृति को पहली बार प्रमुख विषय बनाने का काम पंत ने ही किया। उनकी कविता प्रकृति और मनुष्य के अंतरंग संबंधों का दस्तावेज है।

इनकी प्रारंभिक शिक्षा कौसानी के गाँव में तथा उच्च शिक्षा बनारस और इलाहाबाद में हुई। युवावस्था तक पहुँचते-पहुँचते महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी। उसके बाद स्वतंत्र लेखन करते रहे।

प्रकृति के अद्भुत चित्रकार पंत का मिज़ाज कविता में बदलाव का पक्षधर रहा है। शुरुआती दौर में छायावादी कविताएँ लिखीं। ***पल-पल परिवर्तित प्रकृति वेश*** *इन्हें ज़ादू की तरह आकृष्ट कर रहा था। बाद में चल कर प्रगतिशील दौर में* ***ताज*** *और* ***वे आँखें***

जैसी कविताएँ भी लिखीं। इसके साथ ही अरविन्द के ***मानववाद*** *से प्रभावित होकर* ***मानव तुम सबसे सुंदरतम*** *जैसी पंक्तियाँ भी लिखते रहे। उन्होंने नाटक, कहानी, आत्मकथा, उपन्यास और आलोचना के क्षेत्र में भी काम किया है।* ***रूपाभ*** *नामक पत्रिका का संपादन भी किया जिसमें प्रगतिवादी साहित्य पर विस्तार से विचार-विमर्श होता था।*

पंत जी भाषा के प्रति बहुत सचेत थे। इनकी रचनाओं में प्रकृति की ज़ादूगरी जिस भाषा में अभिव्यक्त हुई है उसे स्वयं पंत ***चित्र भाषा*** *(बिंबात्मक भाषा) की संज्ञा देते हैं। ब्रजभाषा और खड़ी बोली के विवाद में उन्होंने खड़ी बोली का पक्ष लिया और* ***पल्लव*** *की भूमिका में विस्तार से खड़ी बोली का समर्थन किया।*

प्रस्तुत कविता ***वे आँखें*** *पंत जी के प्रगतिशील दौर की कविता है। इसमें विकास की विरोधाभासी अवधारणाओं पर करारा प्रहार किया गया है। युग-युग से शोषण के शिकार किसान का जीवन कवि को आहत करता है। दुखद बात यह है कि स्वाधीन भारत में भी किसानों को केंद्र में रखकर व्यवस्था ने निर्णायक हस्तक्षेप नहीं किया। कविता ऐसे ही दुश्चक्र में फँसे किसानों के व्यक्तिगत एवं पारिवारिक दुखों की परतों को खोलती है और स्पष्ट रूप से विभाजित समाज की वर्गीय चेतना का खाका प्रस्तुत करती है।*

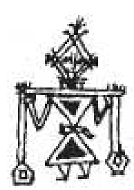

वे आँखें

अंधकार की गुहा सरीखी
उन आँखों से डरता है मन,
भरा दूर तक उनमें दारुण
दैन्य दुख का नीरव रोदन!

वह स्वाधीन किसान रहा,
अभिमान भरा आँखों में इसका,
छोड़ उसे मँझधार आज
संसार कगार सदृश बह खिसका!

लहराते वे खेत दृगों में
हुआ बेदखल वह अब जिनसे,
हँसती थी उसके जीवन की
हरियाली जिनके तृन-तृन से!

आँखों ही में घूमा करता
वह उसकी आँखों का तारा,
कारकुनों की लाठी से जो
गया जवानी ही में मारा!

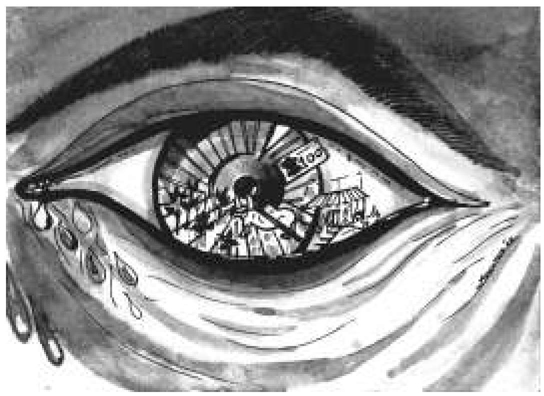

बिका दिया घर द्वार,
महाजन ने न ब्याज की कौड़ी छोड़ी,
रह–रह आँखों में चुभती वह
कुर्क हुई बरधों की जोड़ी!

उजरी उसके सिवा किसे कब
पास दुहाने आने देती?
अह, आँखों में नाचा करती
उजड़ गई जो सुख की खेती!

बिना दवा दर्पन के घरनी
स्वरग चली,–आँखें आती भर,
देख–रेख के बिना दुधमुँही
बिटिया दो दिन बाद गई मर!

घर में विधवा रही पतोहू,
लछमी थी, यद्यपि पति घातिन,
पकड़ मँगाया कोतवाल ने,
डूब कुएँ में मरी एक दिन!

खैर, पैर की जूती, जोरू
न सही एक, दूसरी आती,
पर जवान लड़के की सुध कर
साँप लोटते, फटती छाती।

पिछले सुख की स्मृति आँखों में
क्षण भर एक चमक है लाती,
तुरत शून्य में गड़ वह चितवन
तीखी नोक सदृश बन जाती।

अभ्यास

कविता के साथ

1. ***अंधकार की गुहा सरीखी***
   उन आँखों से डरता है मन।
   क. आमतौर पर हमें डर किन बातों से लगता है?
   ख. ***उन आँखों*** से किसकी ओर संकेत किया गया है?
   ग. कवि को ***उन आँखों*** से डर क्यों लगता है?
   घ. डरते हुए भी कवि ने उस किसान की आँखों की पीड़ा का वर्णन क्यों किया है?
   ङ. यदि कवि इन आँखों से नहीं डरता क्या तब भी वह कविता लिखता?
2. कविता में किसान की पीड़ा के लिए किन्हें ज़िम्मेदार बताया गया है?
3. ***पिछले सुख की स्मृति आँखों में क्षण भर एक चमक है लाती*** – इसमें किसान के किन पिछले सुखों की ओर संकेत किया गया है?

4. संदर्भ सहित आशय स्पष्ट करें-

(क) ***उजरी उसके सिवा किसे कब
पास दुहाने आने देती?***

(ख) ***घर में विधवा रही पतोहू
लछमी थी, यद्यपि पति घातिन,***

(ग) ***पिछले सुख की स्मृति आँखों में
क्षण भर एक चमक है लाती,
तुरत शून्य में गड़ वह चितवन
तीखी नोक सदृश बन जाती।***

कविता के आस-पास

किसान अपने व्यवसाय से पलायन कर रहे हैं। इस विषय पर परिचर्चा आयोजित करें तथा कारणों की भी पड़ताल करें।

शब्द-छवि

सरीखी	-	समान
दारुण	-	घोर, निर्दय, कठोर
चितवन	-	दृष्टि
बेदखल	-	हिस्सेदारी से अलग करना
कारकुन	-	ज़मींदारों के कारिंदे
कुर्क	-	नीलामी
बरधों	-	बैंलों
घरनी	-	घरवाली, पत्नी

कुछ लिख के सो, कुछ पढ़ के सो तू
जिस जगह जागा सबेरे, उस जगह से बढ़ के सो
(भवानी प्रसाद मिश्र रचनावली)

भवानी प्रसाद मिश्र

जन्मः सन् 1913, टिगरिया गाँव, होशंगाबाद(म.प्र.)
प्रमुख रचनाएँ: सतपुड़ा के जंगल, सन्नाटा, गीतफ़रोश, चकित है दुख, बुनी हुई रस्सी, खुशबू के शिलालेख, अनाम तुम आते हो, इदं न मम् आदि
प्रमुख सम्मानः साहित्य अकादमी, मध्य प्रदेश शासन का शिखर सम्मान, दिल्ली प्रशासन का गालिब पुरस्कार एवं पद्मश्री से अलंकृत
मृत्युः सन् 1985

सहज लेखन और सहज व्यक्तित्व का नाम है भवानी प्रसाद मिश्र। कविता और साहित्य के साथ-साथ राष्ट्रीय आंदोलन में जिन कवियों की सक्रिय भागीदारी थी उनमें ये प्रमुख हैं। गांधीवाद पर आस्था रखने वाले मिश्र जी ने गांधी वाङ्मय के हिंदी खंडों का संपादन कर कविता और गांधी जी के बीच सेतु का काम किया।

*भवानी प्रसाद मिश्र की कविता हिंदी की सहज लय की कविता है। इस सहजता का संबंध गांधी के चरखे की लय से भी जुड़ता है इसीलिए उन्हें **कविता का गांधी** भी कहा गया है। मिश्र जी की कविताओं में बोल-चाल के गद्यात्मक-से लगते वाक्य-विन्यास को ही कविता में बदल देने की अद्भुत क्षमता है। इसी कारण उनकी*

कविता सहज और लोक के अधिक करीब है। भवानी प्रसाद मिश्र जिस किसी विषय को उठाते हैं उसे घरेलू बना लेते हैं- आँगन का पौधा, शाम और दूर दिखती पहाड़ की नीली चोटी भी जैसे परिवार का एक अंग हो जाती है। वृद्धावस्था और मृत्यु के प्रति भी एक आत्मीय स्वर मिलता है। उन्होंने प्रौढ़ प्रेम की कविताएँ भी लिखी हैं जिनमें उद्दाम श्रृंगारिकता की बजाय सहजीवन के सुख-दुख और प्रेम की व्यंजना है। नई कविता के दौर के कवियों में मिश्र जी के यहाँ व्यंग्य और क्षोभ भरपूर है किंतु वह प्रतिक्रियापरक न होकर सृजनात्मक है। गांधीवाद पर आस्था रखने के कारण उन्होंने अहिंसा और सहनशीलता को रचनात्मक अभिव्यक्ति दी है।

घर की याद *कविता में घर के मर्म का उद्‌घाटन है। कवि को जेल-प्रवास के दौरान घर से विस्थापन की पीड़ा सालती है। कवि के स्मृति-संसार में उसके परिजन एक-एक कर शामिल होते चले जाते हैं। घर की अवधारणा की सार्थक और मार्मिक याद कविता की केंद्रीय संवेदना है।*

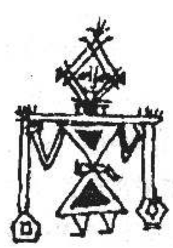

घर की याद

आज पानी गिर रहा है,
बहुत पानी गिर रहा है,
रात भर गिरता रहा है,
प्राण मन घिरता रहा है,

बहुत पानी गिर रहा है,
घर नज़र में तिर रहा है,
घर कि मुझसे दूर है जो,
घर खुशी का पूर है जो,

घर कि घर में चार भाई,
मायके में बहिन आई,
बहिन आई बाप के घर,
हाय रे परिताप के घर!

घर कि घर में सब जुड़े हैं,
सब कि इतने कब जुड़े हैं,
चार भाई चार बहिनें,
भुजा भाई प्यार बहिनें,

और माँ बिन-पढ़ी मेरी,
दुःख में वह गढ़ी मेरी
माँ कि जिसकी गोद में सिर,
रख लिया तो दुख नहीं फिर,

माँ कि जिसकी स्नेह-धारा,
का यहाँ तक भी पसारा,
उसे लिखना नहीं आता,
जो कि उसका पत्र पाता।

पिता जी जिनको बुढ़ापा,
एक क्षण भी नहीं व्यापा,
जो अभी भी दौड़ जाएँ,
जो अभी भी खिलखिलाएँ,

मौत के आगे न हिचकें,
शेर के आगे न बिचकें,
बोल में बादल गरजता,
काम में झंझा लरजता,

आज गीता पाठ करके,
दंड दो सौ साठ करके,
खूब मुगदर हिला लेकर,
मूठ उनकी मिला लेकर,

जब कि नीचे आए होंगे,
नैन जल से छाए होंगे,
हाय, पानी गिर रहा है,
घर नज़र में तिर रहा है,

चार भाई चार बहिनें,
भुजा भाई प्यार बहिनें,
खेलते या खड़े होंगे,
नज़र उनको पड़े होंगे।

पिता जी जिनको बुढ़ापा,
एक क्षण भी नहीं व्यापा,
रो पड़े होंगे बराबर,
पाँचवें का नाम लेकर,

पाँचवाँ मैं हूँ अभागा,
जिसे सोने पर सुहागा,
पिता जी कहते रहे हैं,
प्यार में बहते रहे हैं,

आज उनके स्वर्ण बेटे,
लगे होंगे उन्हें हेटे,
क्योंकि मैं उनपर सुहागा
बँधा बैठा हूँ अभागा,

और माँ ने कहा होगा,
दु:ख कितना बहा होगा,
आँख में किस लिए पानी
वहाँ अच्छा है भवानी

वह तुम्हारा मन समझकर,
और अपनापन समझकर,
गया है सो ठीक ही है,
यह तुम्हारी लीक ही है,

पाँव जो पीछे हटाता,
कोख को मेरी लजाता,
इस तरह होओ न कच्चे,
रो पड़ेंगे और बच्चे,

पिता जी ने कहा होगा,
हाय, कितना सहा होगा,
कहाँ, मैं रोता कहाँ हूँ,
धीर मैं खोता, कहाँ हूँ,

हे सजीले हरे सावन,
हे कि मेरे पुण्य पावन,
तुम बरस लो वे न बरसें,
पाँचवें को वे न तरसें,

मैं मज़े में हूँ सही है,
घर नहीं हूँ बस यही है,
किंतु यह बस बड़ा बस है,
इसी बस से सब विरस है,

किंतु उनसे यह न कहना,
उन्हें देते धीर रहना,
उन्हें कहना लिख रहा हूँ,
उन्हें कहना पढ़ रहा हूँ,

काम करता हूँ कि कहना,
नाम करता हूँ कि कहना,
चाहते हैं लोग कहना,
मत करो कुछ शोक कहना,

और कहना मस्त हूँ मैं,
कातने में व्यस्त हूँ मैं,
वज़न सत्तर सेर मेरा,
और भोजन ढेर मेरा,

कूदता हूँ, खेलता हूँ,
दु:ख डट कर ठेलता हूँ,
और कहना मस्त हूँ मैं,
यों न कहना अस्त हूँ मैं,

हाय रे, ऐसा न कहना,
है कि जो वैसा न कहना,
कह न देना जागता हूँ,
आदमी से भागता हूँ,

कह न देना मौन हूँ मैं,
खुद न समझूँ कौन हूँ मैं,
देखना कुछ बक न देना,
उन्हें कोई शक न देना,

हे सजीले हरे सावन,
हे कि मेरे पुण्य पावन,
तुम बरस लो वे न बरसें,
पाँचवें को वे न तरसें।

अभ्यास

कविता के साथ

1. पानी के रात भर गिरने और प्राण-मन के घिरने में परस्पर क्या संबंध है?
2. मायके आई बहन के लिए कवि ने घर को ***परिताप का घर*** क्यों कहा है?
3. पिता के व्यक्तित्व की किन विशेषताओं को उकेरा गया है?
4. निम्नलिखित पंक्तियों में ***बस*** शब्द के प्रयोग की विशेषता बताइए।

    मैं मजे में हूँ सही है
    घर नहीं हूँ बस यही है

किंतु यह बस बड़ा बस है,
इसी बस से सब विरस है'

5. कविता की अंतिम 12 पंक्तियों को पढ़कर कल्पना कीजिए कि कवि अपनी किस स्थिति व मन:स्थिति को अपने परिजनों से छिपाना चाहता है?

कविता के आस-पास

1. ऐसी पाँच रचनाओं का संकलन कीजिए जिसमें प्रकृति के उपादानों की कल्पना संदेशवाहक के रूप में की गई है।
2. घर से अलग होकर आप घर को किस तरह से याद करते हैं? लिखें।

शब्द-छवि

नज़र में तिर रहा है	-	आँखों में तैर रहा है
पूर है जो	-	वह घर जो परिपूर्ण है यानी खुशियों से भरापूरा है
परिताप	-	अत्यधिक दुख
नवनीत	-	मक्खन
हेटे	-	गौण, हीन
लीक	-	परंपरा

कविताएँ रहेंगी तो / सपने भी रहेंगे / जीने के लिए / सपने सभी को / आश्वासन देते हैं / भँवर में झकोरे खाती नाव को / जैसे-तैसे / उबार लेते हैं / कविताएँ / सपनों के संग ही / जीवन के साथ हैं / कभी-कभी पाँव हैं / कभी-कभी हाथ हैं

(मेरा घर)

त्रिलोचन

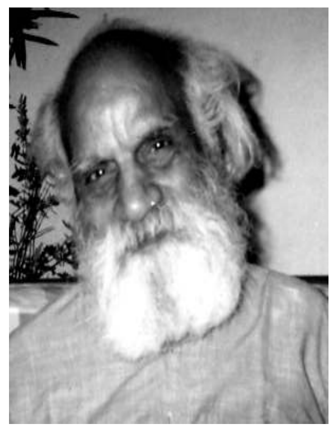

मूल नामः वासुदेव सिंह

जन्मः सन् 1917 चिरानी पट्टी, ज़िला सुल्तानपुर (उ.प्र.)

प्रमुख रचनाएँः धरती, गुलाब और बुलबुल, दिगंत, ताप के ताये हुए दिन, शब्द, उस जनपद का कवि हूँ, अरघान, तुम्हें सौंपता हूँ, चैती, अमोला, मेरा घर, जीने की कला *(काव्य);* देशकाल, रोज़नामचा, काव्य और अर्थबोध, मुक्तिबोध की कविताएँ *(गद्य);* हिंदी के अनेक कोशों के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान

प्रमुख सम्मानः साहित्य अकादमी, शलाका सम्मान, महात्मा गांधी पुरस्कार (उ.प्र.)

हिंदी साहित्य में त्रिलोचन प्रगतिशील काव्य धारा के प्रमुख कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। रागात्मक संयम और लयात्मक अनुशासन के कवि होने के साथ-साथ ये बहुभाषाविज्ञ शास्त्री भी हैं, इसीलिए इनके नाम के साथ शास्त्री भी जुड़ गया है। लेकिन यह शास्त्रीयता उनकी कविता के लिए बोझ नहीं बनती। त्रिलोचन जीवन में निहित मंद लय के कवि हैं। प्रबल आवेग और त्वरा की अपेक्षा इनके यहाँ काफ़ी कुछ स्थिर है।

इनकी भाषा छायावादी रूमानियत से मुक्त है तथा उसका ठाट ठेठ गाँव की ज़मीन से जुड़ा हुआ है। त्रिलोचन हिंदी में सॉनेट (अंग्रेज़ी छंद) को स्थापित करने वाले कवि के रूप में भी जाने जाते हैं।

त्रिलोचन का कवि बोलचाल की भाषा को चुटीला और नाटकीय बनाकर कविताओं को नया आयाम देता है। कविता की प्रस्तुति का अंदाज़ कुछ ऐसा है कि वस्तु और रूप की प्रस्तुति का भेद नहीं रहता। उनका कवि इन दोनों के बीच फाँक की गुंजाइश नहीं छोड़ता।

चंपा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती *नामक कविता* ***धरती*** *संग्रह में संकलित है। यह पलायन के लोक अनुभवों को मार्मिकता से अभिव्यक्त करती है। कविता में 'अक्षरों' के लिए 'काले काले' विशेषण का प्रयोग किया गया है, जो एक ओर शिक्षा-व्यवस्था के अंतर्विरोधों को उजागर करता है तो दूसरी ओर उस दारुण यथार्थ से भी हमारा परिचय कराता है जहाँ आर्थिक मजबूरियों के चलते घर टूटते हैं। काव्य नायिका चंपा अनजाने ही उस शोषक व्यवस्था के प्रतिपक्ष में खड़ी हो जाती है जहाँ भविष्य को लेकर उसके मन में अनजान खतरा है। वह कहती है 'कलकत्ते पर बजर गिरे'। कलकत्ते पर वज्र गिरने की कामना, जीवन के खुरदरे यथार्थ के प्रति चंपा के संघर्ष और जीवट को प्रकट करती है।*

चंपा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती

चंपा काले काले अच्छर नहीं चीन्हती
मैं जब पढ़ने लगता हूँ वह आ जाती है
खड़ी खड़ी चुपचाप सुना करती है
उसे बड़ा अचरज होता है:
इन काले चीन्हों से कैसे ये सब स्वर
निकला करते हैं

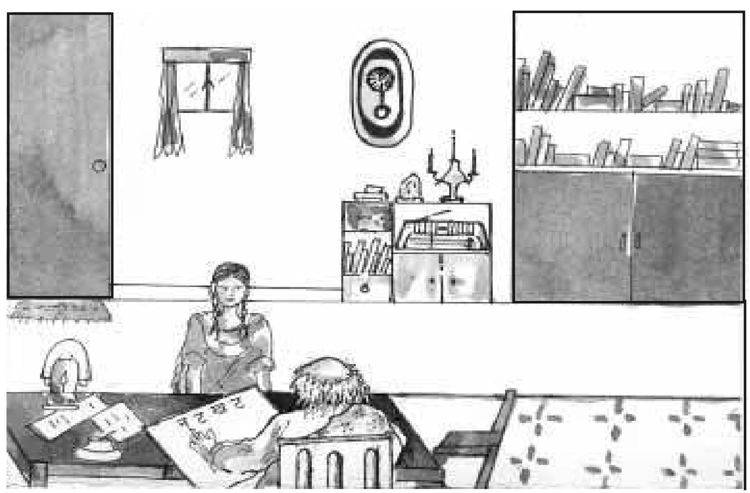

चंपा सुन्दर की लड़की है
सुन्दर ग्वाला है: गायें-भैंसें रखता है
चंपा चौपायों को लेकर
चरवाही करने जाती है

चंपा अच्छी है
चंचल है
न ट ख ट भी है
कभी कभी ऊधम करती है
कभी कभी वह कलम चुरा देती है
जैसे तैसे उसे ढूँढ़ कर जब लाता हूँ
पाता हूँ–अब कागज़ गायब
परेशान फिर हो जाता हूँ

चंपा कहती है:
तुम कागद ही गोदा करते हो दिन भर
क्या यह काम बहुत अच्छा है
यह सुनकर मैं हँस देता हूँ
फिर चंपा चुप हो जाती है

उस दिन चंपा आई, मैंने कहा कि
चंपा, तुम भी पढ़ लो
हारे गाढ़े काम सरेगा
गांधी बाबा की इच्छा है-
सब जन पढ़ना-लिखना सीखें

चंपा ने यह कहा कि
मैं तो नहीं पढ़ूँगी
तुम तो कहते थे गांधी बाबा अच्छे हैं
वे पढ़ने लिखने की कैसे बात कहेंगे
मैं तो नहीं पढ़ूँगी

मैंने कहा कि चंपा, पढ़ लेना अच्छा है
ब्याह तुम्हारा होगा, तुम गौने जाओगी,
कुछ दिन बालम संग साथ रह चला जाएगा जब कलकत्ता
बड़ी दूर है वह कलकत्ता
कैसे उसे सँदेसा दोगी
कैसे उसके पत्र पढ़ोगी
चंपा पढ़ लेना अच्छा है !

चंपा बोली: तुम कितने झूठे हो, देखा,
हाय राम, तुम पढ़-लिख कर इतने झूठे हो
मैं तो ब्याह कभी न करूँगी
और कहीं जो ब्याह हो गया
तो मैं अपने बालम को सँग साथ रखूँगी
कलकत्ता मैं कभी न जाने दूँगी
कलकत्ते पर बजर गिरे।

अभ्यास

कविता के साथ

1. चंपा ने ऐसा क्यों कहा कि कलकत्ता पर बजर गिरे?
2. चंपा को इसपर क्यों विश्वास नहीं होता कि गांधी बाबा ने पढ़ने-लिखने की बात कही होगी?

3. कवि ने चंपा की किन विशेषताओं का उल्लेख किया है?
4. आपके विचार में चंपा ने ऐसा क्यों कहा होगा कि मैं तो नहीं पढ़ूँगी?

कविता के आस-पास

1. यदि चंपा पढ़ी-लिखी होती, तो कवि से कैसे बातें करती?
2. इस कविता में पूर्वी प्रदेशों की स्त्रियों की किस विडंबनात्मक स्थिति का वर्णन हुआ है?
3. संदेश ग्रहण करने और भेजने में असमर्थ होने पर एक अनपढ़ लड़की को किस वेदना और विपत्ति को भोगना पड़ता है, अपनी कल्पना से लिखिए।
4. त्रिलोचन पर एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा बनाई गई फ़िल्म देखिए।

शब्द-छवि

चीन्हती	–	पहचानती
चीन्हों	–	चिह्नों, अक्षरों
चौपायों	–	चार पैरों वाले (जानवरों के लिए) यहाँ गाय-भैसों के लिए प्रयुक्त हुआ है
कागद	–	कागज़
हारे गाढ़े काम सरेगा	–	कठिनाई में काम आएगा
बालम	–	पति
बजर गिरे	–	वज्र गिरे, भारी विपत्ति आए

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।
(साये में धूप)

दुष्यंत कुमार

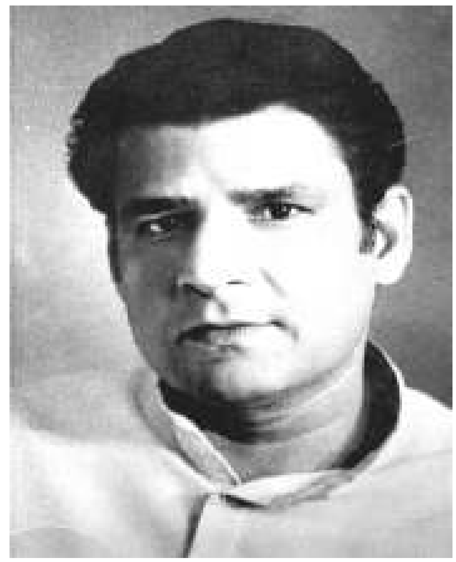

जन्मः सन् 1933, राजपुर नवादा गाँव (उ.प्र)
प्रमुख रचनाएँः सूर्य का स्वागत, आवाज़ों के घेरे, साये में धूप, जलते हुए वन का वसंत *(काव्य)*; एक कंठ विषपायी *(गीति-नाट्य)*; छोटे-छोटे सवाल, आँगन में एक वृक्ष और दोहरी ज़िंदगी *(उपन्यास)*
मृत्युः सन् 1975

दुष्यंत कुमार का साहित्यिक जीवन इलाहाबाद में आरंभ हुआ। वहाँ की साहित्यिक संस्था ***परिमल*** *की गोष्ठियों में वे सक्रिय रूप से भाग लेते रहे और* ***नए पत्ते*** *जैसे महत्वपूर्ण पत्र के साथ भी जुड़े रहे। आजीविका के लिए आकाशवाणी और बाद में मध्यप्रदेश के राजभाषा विभाग में काम किया। अल्पायु में ही उनका देहावसान हो गया, किंतु इस छोटे जीवन की साहित्यिक उपलब्धियाँ कुछ छोटी नहीं हैं। गज़ल की विधा को हिंदी में प्रतिष्ठित करने का श्रेय अकेले दुष्यंत को ही जाता है। उनके कई शेर साहित्यिक एवं राजनीतिक जमावड़ों में लोकोक्तियों की तरह दुहराए जाते हैं। साहित्यिक गुणवत्ता से समझौता न करते हुए भी दुष्यंत ने लोकप्रियता के नए प्रतिमान कायम किए हैं।* ***एक कंठ विषपायी****-शीर्षक गीतिनाट्य हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण एवं बहुप्रशंसित कृति है।*

यहाँ दुष्यंत की जो गज़ल दी गई है, वह उनके गज़ल संग्रह **साये में धूप** *से ली गई है। गज़लों में शीर्षक देने का कोई चलन नहीं है, इसीलिए यहाँ कोई शीर्षक नहीं दिया जा रहा है।*

गज़ल एक ऐसी विधा है, जिसमें सभी शेर अपने-आप में मुकम्मिल और स्वतंत्र होते हैं। उन्हें किसी क्रम-व्यवस्था के तहत पढ़े जाने की दरकार नहीं रहती। इसके बावजूद दो चीज़ें ऐसी हैं, जो इन शेरों को आपस में गूँथकर एक रचना की शक्ल देती हैं–एक, रूप के स्तर पर तुक का निर्वाह और दो, अंतर्वस्तु के स्तर पर मिज़ाज का निर्वाह। जैसा कि आप देखेंगे, यहाँ पहले शेर की दोनों पंक्तियों का तुक मिलता है और उसके बाद सभी शेरों की दूसरी पंक्ति में उस तुक का निर्वाह होता है। आम तौर पर गज़ल के शेरों में केंद्रीय भाव का होना ज़रूरी नहीं है लेकिन यहाँ पूरी गज़ल एक खास मन:स्थिति में लिखी गई जान पड़ती है। राजनीति और समाज में जो कुछ चल रहा है, उसे खारिज करने और विकल्प की तलाश को मान्यता देने का भाव एक तरह से इस गज़ल का केंद्रीय सूत्र बन गया है। इस प्रकार दुष्यंत की यह गज़ल हिंदी गज़ल का सुंदर नमूना प्रस्तुत करती है।

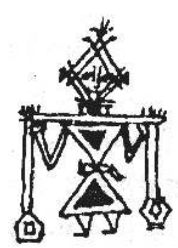

ग़ज़ल

कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।

यहाँ दरख्तों के साये में धूप लगती है,
चलो यहाँ से चलें और उम्र भर के लिए।

न हो कमीज़ तो पाँवों से पेट ढँक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब हैं इस सफ़र के लिए।

खुदा नहीं, न सही, आदमी का ख्वाब सही,
कोई हसीन नज़ारा तो है नज़र के लिए।

वे मुतमइन हैं कि पत्थर पिघल नहीं सकता,
मैं बेकरार हूँ आवाज़ में असर के लिए।

तेरा निज़ाम है सिल दे ज़ुबान शायर की,
ये एहतियात ज़रूरी है इस बहर के लिए।

जिएँ तो अपने बगीचे में गुलमोहर के तले,
मरें तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए।

अभ्यास

गज़ल के साथ

1. आखिरी शेर में ***गुलमोहर*** की चर्चा हुई है। क्या उसका आशय एक खास तरह के फूलदार वृक्ष से है या उसमें कोई सांकेतिक अर्थ निहित है? समझाकर लिखें।
2. पहले शेर में ***चिराग*** शब्द एक बार बहुवचन में आया है और दूसरी बार एकवचन में। अर्थ एवं काव्य-सौंदर्य की दृष्टि से इसका क्या महत्व है?
3. गज़ल के तीसरे शेर को गौर से पढ़ें। यहाँ दुष्यंत का इशारा किस तरह के लोगों की ओर है?
4. आशय स्पष्ट करें:

    तेरा निज़ाम है सिल दे ज़ुबान शायर की,
    ये एहतियात ज़रूरी है इस बहर के लिए।

गज़ल के आस-पास

1. ***दुष्यंत की इस गज़ल का मिज़ाज बदलाव के पक्ष में है।*** इस कथन पर विचार करें।
2. ***हमको मालूम है जन्नत की हकीकत लेकिन***
    दिल के खुश रखने को गालिब ये खयाल अच्छा है
    दुष्यंत की गज़ल का चौथा शेर पढ़ें और बताएँ कि गालिब के उपर्युक्त शेर से वह किस तरह जुड़ता है?
3. ***'यहाँ दरख्तों के साये में धूप लगती है'*** यह वाक्य मुहावरे की तरह अलग-अलग परिस्थितियों में अर्थ दे सकता है मसलन, यह ऐसी अदालतों पर लागू होता है, जहाँ इंसाफ नहीं मिल पाता। कुछ ऐसी परिस्थितियों की कल्पना करते हुए निम्नांकित अधूरे वाक्यों को पूरा करें।

(क) यह ऐसे नाते-रिश्तों पर लागू होता है, ...

(ख) यह ऐसे विद्यालयों पर लागू होता है, ...

(ग) यह ऐसे अस्पतालों पर लागू होता है, ...

(घ) यह ऐसी पुलिस व्यवस्था पर लागू होता है, ...

शब्द-छवि

मयस्सर	–	उपलब्ध
दरख्त	–	पेड़
मुतमइन	–	इतमीनान से, आश्वस्त
बेकरार	–	बेचैन, आतुर
निज़ाम	–	राज, शासन
एहतियात	–	सावधानी
बहर	–	छंद

शिला पर चली शिला हुई चूर, गिरि पर चली तो गिरि में पड़ी दरार

(वचन सौरभ)

अक्कमहादेवी

जन्मः 12वीं सदी, कर्नाटक के उडुतरी गाँव ज़िला–शिवमोगा

प्रमुख रचनाएँः हिंदी में *वचन सौरभ* नाम से अंग्रेज़ी में *स्पीकिंग ऑफ़ शिवा (सं.–ए. के. रामानुजन)*

इतिहास में वीर शैव आंदोलन से जुड़े कवियों, रचनाकारों की एक लंबी सूची है। अक्कमहादेवी इस आंदोलन से जुड़ी एक महत्वपूर्ण कवयित्री थीं। चन्नमल्लिकार्जुन देव (शिव) इनके आराध्य थे। बसवन्ना और अल्लामा प्रभु इनके समकालीन कन्नड़ संत कवि थे। कन्नड़ भाषा में ***अक्क*** *शब्द का अर्थ बहिन होता है।*

अक्कमहादेवी अपूर्व सुंदरी थीं। एक बार वहाँ का स्थानीय राजा इनका अद्भुत–अलौकिक सौंदर्य देखकर मुग्ध हो गया तथा इनसे विवाह हेतु इनके परिवार पर दबाव डाला। अक्कमहादेवी ने विवाह के लिए राजा के सामने तीन शर्तें रखीं। विवाह के बाद राजा ने उन शर्तों का पालन नहीं किया, इसलिए महादेवी ने उसी क्षण राज–परिवार को छोड़ दिया। पर अक्क ने जो इसके आगे किया, वह भारतीय नारी के इतिहास की एक विलक्षण घटना बन गई, जिससे उनके विद्रोही चरित्र का पता चलता है। सबसे चौंकाने और तिलमिला देनेवाला तथ्य यह है कि अक्क ने सिर्फ़ राजमहल नहीं छोड़ा, वहाँ से निकलते समय पुरुष वर्चस्व के विरुद्ध अपने आक्रोश

की अभिव्यक्ति के रूप में अपने वस्त्रों को भी उतार फेंका। वस्त्रों को उतार फेंकना केवल वस्त्रों का त्याग नहीं बल्कि एकांगी मर्यादाओं और केवल स्त्रियों के लिए निर्मित नियमों का तीखा विरोध था। स्त्री केवल शरीर नहीं है इसके गहरे बोध के साथ महावीर आदि महापुरुषों के समक्ष खड़े होने का प्रयास था। इस दृष्टि से देखें तो मीरा की पंक्ति ***तन की आस कबहू नहीं कीनी ज्यों रणमाँही सूरो*** *अक्क पर पूर्णतः चरितार्थ होती है।*

अक्क के कारण शैव आंदोलन से बड़ी संख्या में स्त्रियाँ (जिनमें अधिकांश निचले तबकों से थीं) जुड़ीं और अपने संघर्ष और यातना को कविता के रूप में अभिव्यक्ति दी।

इस प्रकार अक्कमहादेवी की कविता पूरे भारतीय साहित्य में इस क्रांतिकारी चेतना का पहला सर्जनात्मक दस्तावेज़ है और संपूर्ण स्त्रीवादी आंदोलन के लिए एक अजस्र प्रेरणास्रोत भी।

यहाँ इनके दो वचन लिए गए हैं। दोनों वचनों का अंग्रेज़ी से अनुवाद ***केदारनाथ सिंह*** *ने किया है। प्रथम कविता या वचन में इंद्रियों पर नियंत्रण का संदेश दिया गया है। यह उपदेशात्मक न होकर प्रेम-भरा मनुहार है।*

दूसरा वचन एक भक्त का ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण है। चन्नमल्लिकार्जुन की अनन्य भक्त अक्कमहादेवी उनकी अनुकंपा के लिए हर भौतिक वस्तु से अपनी झोली खाली रखना चाहती हैं। वे ऐसी निस्पृह स्थिति की कामना करती हैं जिससे उनका स्व या अहंकार पूरी तरह से नष्ट हो जाए।

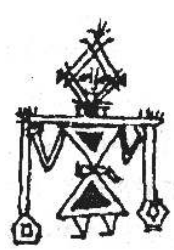

(1)

हे भूख! मत मचल
प्यास, तड़प मत
हे नींद ! मत सता
क्रोध, मचा मत उथल-पुथल
हे मोह ! पाश अपने ढील
लोभ, मत ललचा
हे मद! मत कर मदहोश
ईर्ष्या, जला मत
ओ चराचर! मत चूक अवसर
आई हूँ संदेश लेकर चन्नमल्लिकार्जुन का

(2)

हे मेरे जूही के फूल जैसे ईश्वर
मँगवाओ मुझसे भीख
और कुछ ऐसा करो
कि भूल जाऊँ अपना घर पूरी तरह
झोली फैलाऊँ और न मिले भीख
कोई हाथ बढ़ाए कुछ देने को
तो वह गिर जाए नीचे
और यदि मैं झुकूँ उसे उठाने
तो कोई कुत्ता आ जाए
और उसे झपटकर छीन ले मुझसे।

अभ्यास

कविता के साथ

1. ***लक्ष्य प्राप्ति में इंद्रियाँ बाधक होती हैं***– इसके संदर्भ में अपने तर्क दीजिए।
2. ***ओ चराचर! मत चूक अवसर*** – इस पंक्ति का आशय स्पष्ट कीजिए।
3. ईश्वर के लिए किस दृष्टांत का प्रयोग किया गया है। ईश्वर और उसके साम्य का आधार बताइए।
4. *अपना घर* से क्या तात्पर्य है? इसे भूलने की बात क्यों कही गई है?
5. दूसरे वचन में ईश्वर से क्या कामना की गईं है और क्यों?

कविता के आस-पास

1. क्या अक्क महादेवी को ***कन्नड़ की मीरा*** कहा जा सकता है? चर्चा करें।

शब्द-छवि

पाश	-	जकड़
ढील	-	ढीला करना
मद	-	नशा
चराचर	-	जड़ और चेतन
चन्नमल्लिकार्जुन	-	शिव

भारत/मेरे सम्मान का सबसे महान शब्द/जहाँ कहीं भी
प्रयोग किया जाए/बाकी सभी शब्द अर्थहीन हो जाते हैं।
(बीच का रास्ता नहीं होता)

पाश

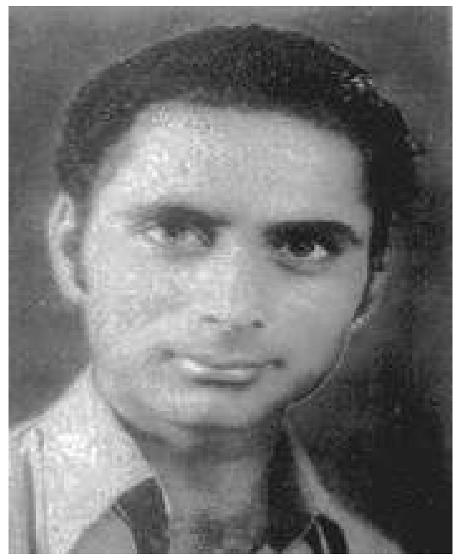

मूल नाम: अवतार सिंह संधू

जन्म: सन् 1950, तलवंडी सलेम गाँव, ज़िला जालंधर (पंजाब)

प्रमुख रचनाएँ: लौह कथा, उड्दें बाजां मगर, साडै समिया बिच, लड़ेंगे साथी *(पंजाबी)*; बीच का रास्ता नहीं होता, लहू है कि तब भी गाता है *(हिंदी अनुवाद)*

मृत्यु: सन् 1988

पाश समकालीन पंजाबी साहित्य के महत्वपूर्ण कवि माने जाते हैं। मध्यवर्गीय किसान परिवार में जन्मे पाश की शिक्षा अनियमित ढंग से स्नातक तक हुई। पाश जन आंदोलनों से जुड़े रहे और विद्रोही कविता का नया सौंदर्य विधान विकसित कर उसे तीखा किंतु सृजनात्मक तेवर दिया। पाश की कविताएँ विचार और भाव के सुंदर संयोजन से बनी गहरी राजनीतिक कविताएँ हैं जिनमें लोक संस्कृति और परंपरा का गहरा बोध मिलता है। पाश जनसामान्य की घटनाओं पर 'आउटसाइडर' की तरह प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करते बल्कि इनकी कविताओं में वह व्यथा, निराशा और गुस्सा नज़र आता है जो गहरी संपृक्तता के बगैर संभव ही नहीं है।

पाश ने जनचेतना फैलाने के लिए अनेक साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया और सिआड़, हेमज्योति, हॉक, एंटी-47 आदि पत्रिकाओं का संपादन किया। कुछ समय तक अमेरिका में रहे।

यह कविता दिनोदिन अधिकाधिक नृशंस और क्रूर होती जा रही दुनिया की विद्रूपताओं के चित्रण के साथ उस खौफ़नाक स्थिति की ओर इशारा करती है, जहाँ प्रतिकूलताओं से जूझने के संकल्प क्षीण पड़ते जा रहे हैं। पथरायी आँखों-सी तटस्थता से कवि की असहमति है। कवि इस प्रतिकूलता की तरफ़ विशेष संकेत करता है जहाँ आत्मा के सवाल बेमानी हो जाते हैं। जड़ स्थितियों को बदलने की प्यास के मर जाने और बेहतर भविष्य के सपनों के गुम हो जाने को कवि सबसे खतरनाक स्थिति मानता है।

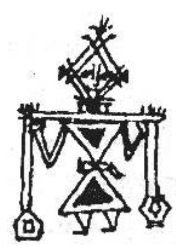

सबसे खतरनाक

मेहनत की लूट सबसे खतरनाक नहीं होती
पुलिस की मार सबसे खतरनाक नहीं होती
गद्दारी–लोभ की मुट्ठी सबसे खतरनाक नहीं होती

बैठे–बिठाए पकड़े जाना–बुरा तो है
सहमी–सी चुप में जकड़े जाना–बुरा तो है
पर सबसे खतरनाक नहीं होता

कपट के शोर में
सही होते हुए भी दब जाना–बुरा तो है
किसी जुगनू की लौ में पढ़ना–बुरा तो है
मुट्ठियाँ भींचकर बस वक्त निकाल लेना–बुरा तो है
सबसे खतरनाक नहीं होता

सबसे खतरनाक होता है
मुर्दा शांति से भर जाना
न होना तड़प का सब सहन कर जाना
घर से निकलना काम पर

और काम से लौटकर घर आना
सबसे खतरनाक होता है
हमारे सपनों का मर जाना

सबसे खतरनाक वह घड़ी होती है
आपकी कलाई पर चलती हुई भी जो
आपकी निगाह में रुकी होती है

सबसे खतरनाक वह आँख होती है
जो सब कुछ देखती हुई भी जमी बर्फ होती है
जिसकी नज़र दुनिया को मुहब्बत से चूमना भूल जाती है
जो चीज़ों से उठती अंधेपन की भाप पर ढुलक जाती है
जो रोज़मर्रा के क्रम को पीती हुई
एक लक्ष्यहीन दुहराव के उलटफेर में खो जाती है

सबसे खतरनाक वह चाँद होता है
जो हर हत्याकांड के बाद
वीरान हुए आँगनों में चढ़ता है
पर आपकी आँखों को मिर्चों की तरह नहीं गड़ता है

सबसे खतरनाक वह गीत होता है
आपके कानों तक पहुँचने के लिए
जो मरसिए पढ़ता है
आतंकित लोगों के दरवाज़ों पर
जो गुंडे की तरह अकड़ता है

सबसे खतरनाक वह रात होती है
जो ज़िंदा रूह के आसमानों पर ढलती है
जिसमें सिर्फ़ उल्लू बोलते और हुआँ हुआँ करते गीदड़
हमेशा के अँधेरे बंद दरवाज़ों-चौगाठों पर चिपक जाते हैं

सबसे खतरनाक वह दिशा होती है
जिसमें आत्मा का सूरज डूब जाए
और उसकी मुर्दा धूप का कोई टुकड़ा
आपके जिस्म के पूरब में चुभ जाए

मेहनत की लूट सबसे खतरनाक नहीं होती
पुलिस की मार सबसे खतरनाक नहीं होती
गद्दारी-लोभ की मुट्ठी सबसे खतरनाक नहीं होती।

अभ्यास

कविता के साथ

1. कवि ने किस आशय से मेहनत की लूट, पुलिस की मार, गद्दारी-लोभ को सबसे खतरनाक नहीं माना।
2. ***सबसे खतरनाक*** शब्द के बार-बार दोहराए जाने से कविता में क्या असर पैदा हुआ?
3. कवि ने कविता में कई बातों को ***बुरा है*** न कहकर ***बुरा तो है*** कहा है। ***तो*** के प्रयोग से कथन की भंगिमा में क्या बदलाव आया है, स्पष्ट कीजिए।
4. ***मुर्दा शांति से भर जाना*** और ***हमारे सपनों का मर जाना***- इनको सबसे खतरनाक माना गया है। आपकी दृष्टि में इन बातों में परस्पर क्या संगति है और ये क्यों सबसे खतरनाक है?
5. ***सबसे खतरनाक वह घड़ी होती है/आपकी कलाई पर चलती हुई भी जो/आपकी निगाह में रुकी होती है।*** इन पंक्तियों में ***घड़ी*** शब्द की व्यंजना से अवगत कराइए।

6. वह चाँद सबसे खतरनाक क्यों होता है, ***जो हर हत्याकांड के बाद/आपकी आँखों को मिर्चों की तरह नहीं गड़ता है?***

कविता के आस-पास

1. कवि ने ***मेहनत की लूट सबसे खतरनाक नहीं होती*** से कविता का आरंभ करके फिर इसी से अंत क्यों किया होगा।
2. कवि द्वारा उल्लिखित बातों के अतिरिक्त समाज में अन्य किन बातों को आप खतरनाक मानते हैं?
3. समाज में मौजूद खतरनाक बातों को समाप्त करने के लिए आपके क्या सुझाव हैं?

शब्द-छवि

गद्दारी	-	व्यक्ति, देश या शासन से द्रोह या धोखा
बैठे-बिठाए	-	अनायास, अकारण
तड़प	-	बेचैनी
वीरान	-	उजड़ा हुआ
मरसिया	-	करुण रस की कविता जो किसी व्यक्ति की मृत्यु पर लिखी जाती है
रूह	-	आत्मा
चौगाठों	-	चौखटों

बटोर पृथ्वी की पूरी ऊर्जा/उठेगा धीरे-धीरे ज़मीन से/ज़मीन पर गिरा आदमी/और अपने लड़खड़ाते कदमों से नापते दूरियाँ /पहुँच जाएगा वहाँ/जहाँ उस जैसे तमाम आदमियों पर बहस/चल रही होगी।

(नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द)

निर्मला पुतुल

जन्मः सन् 1972, दुमका (झारखंड)

प्रमुख रचनाएँ: नगाड़े की तरह बजते शब्द, अपने घर की तलाश में

निर्मला पुतुल का जन्म एक आदिवासी परिवार में हुआ। इनका आरंभिक जीवन बहुत संघर्षमय रहा। घर में शिक्षा का माहौल होने (पिता और चाचा शिक्षक थे) के बावजूद रोटी की समस्या से जूझने के कारण नियमित अध्ययन बाधित होता रहा।

नर्स बनने पर आर्थिक कष्टों से मुक्ति मिल जाएगी यह विचार कर उन्होंने नर्सिंग में डिप्लोमा किया और काफ़ी समय बाद इग्नू से स्नातक की डिग्री प्राप्त की। संथाली समाज और उसके राग-बोध से गहरा जुड़ाव पहले से था, नर्सिंग की शिक्षा के समय बाहर की दुनिया से भी परिचय हुआ। दोनों समाजों की क्रिया-प्रतिक्रिया से वह बोध विकसित हुआ जिससे वह अपने परिवेश की वास्तविक स्थिति को समझने में सफल हो सकीं।

उन्होंने आदिवासी समाज की विसंगतियों को तल्लीनता से उकेरा है—कड़ी मेहनत के बावजूद खराब दशा, कुरीतियों के कारण बिगड़ती पीढ़ी, थोड़े लाभ के

लिए बड़े समझौते, पुरुष वर्चस्व, स्वार्थ के लिए पर्यावरण की हानि, शिक्षित समाज का दिक्कुओं और व्यवसायियों के हाथों की कठपुतली बनना आदि वे स्थितियाँ हैं जो पुतुल की कविताओं के केंद्र में हैं।

वे आदिवासी जीवन के कुछ अनछुए पहलुओं से, कलात्मकता के साथ हमारा परिचय कराती हैं और संथाली समाज के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलुओं को बेबाकी से सामने रखती हैं। संथाली समाज में जहाँ एक ओर सादगी, भोलापन, प्रकृति से जुड़ाव और कठोर परिश्रम करने की क्षमता जैसे सकारात्मक तत्व हैं, वहीं दूसरी ओर उसमें अशिक्षा, कुरीतियाँ और शराब की ओर बढ़ता झुकाव भी है।

***आओ, मिलकर बचाएँ** कविता में दोनों पक्षों का यथार्थ चित्रण हुआ है। बृहत्तर संदर्भ में यह कविता समाज में उन चीज़ों को बचाने की बात करती है जिनका होना स्वस्थ सामाजिक-प्राकृतिक परिवेश के लिए ज़रूरी है। प्रकृति के विनाश और विस्थापन के कारण आज आदिवासी समाज संकट में है, जो कविता का मूल स्वर है। संथाली भाषा से हिंदी रूपांतर **अशोक सिंह** ने किया है।*

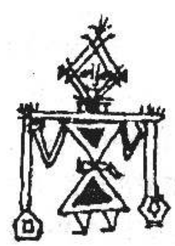

आओ, मिलकर बचाएँ

अपनी बस्तियों को
नंगी होने से
शहर की आबो-हवा से बचाएँ उसे

बचाएँ डूबने से
पूरी की पूरी बस्ती को
हड़िया में

अपने चेहरे पर
सन्थाल परगना की माटी का रंग
भाषा में झारखंडीपन

ठंडी होती दिनचर्या में
जीवन की गर्माहट
मन का हरापन
भोलापन दिल का
अक्खड़पन, जुझारूपन भी

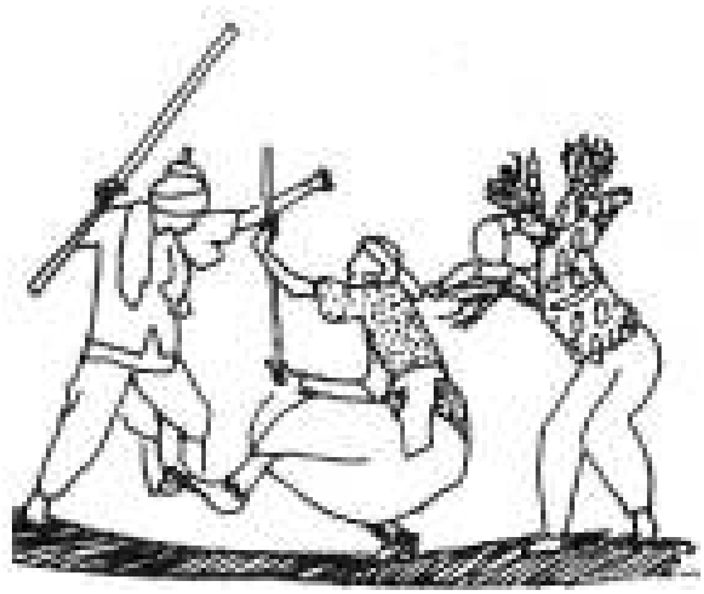

भीतर की आग
धनुष की डोरी
तीर का नुकीलापन
कुल्हाड़ी की धार
जंगल की ताज़ा हवा
नदियों की निर्मलता
पहाड़ों का मौन
गीतों की धुन
मिट्टी का सोंधापन
फसलों की लहलहाहट

नाचने के लिए खुला आँगन
गाने के लिए गीत
हँसने के लिए थोड़ी-सी खिलखिलाहट
रोने के लिए मुट्ठी भर एकान्त

बच्चों के लिए मैदान
पशुओं के लिए हरी-हरी घास
बूढ़ों के लिए पहाड़ों की शान्ति

और इस अविश्वास-भरे दौर में
थोड़ा-सा विश्वास
थोड़ी-सी उम्मीद
थोड़े-से सपने

आओ, मिलकर बचाएँ
कि इस दौर में भी बचाने को
बहुत कुछ बचा है,
अब भी हमारे पास !

अभ्यास

कविता के साथ

1. ***माटी का रंग*** प्रयोग करते हुए किस बात की ओर संकेत किया गया है?
2. भाषा में ***झारखंडीपन*** से क्या अभिप्राय है?
3. दिल के भोलेपन के साथ-साथ अक्खड़पन और जुझारूपन को भी बचाने की आवश्यकता पर क्यों बल दिया गया है?
4. प्रस्तुत कविता आदिवासी समाज की किन बुराइयों की ओर संकेत करती है?
5. ***इस दौर में भी बचाने को बहुत कुछ बचा है–*** से क्या आशय है?
6. निम्नलिखित पंक्तियों के काव्य सौंदर्य को उद्घाटित कीजिए-

   (क) ***ठंडी होती दिनचर्या में***
   जीवन की गर्माहट

   (ख) ***थोड़ा-सा विश्वास***
   थोड़ी-सी उम्मीद
   थोड़े-से सपने
   आओ, मिलकर बचाएँ।
7. बस्तियों को शहर की किस आबो-हवा से बचाने की आवश्यकता है?

कविता के आस-पास

1. आप अपने शहर या बस्ती की किन चीज़ों को बचाना चाहेंगे?
2. आदिवासी समाज की वर्तमान स्थिति पर टिप्पणी करें।

शब्द-छवि

आबो-हवा	-	जलवायु
माटी	-	मिट्टी
सोंधापन	-	सुगंध
उम्मीद	-	आशा
दौर	-	समय
अक्खड़पन	-	किसी बात को लेकर रुखाई से तन जाने का भाव
जुझारूपन	-	जूझने या संघर्ष करने की प्रवृत्ति